कामायनी पाद्यपुष्प

काव्य में पादप पुष्प

लेखक
प्रो० श्री चन्द्र जैन, एम० ए०

सम्पादक:—
रूपनारायण पाण्डेय
भूतपूर्व माधुरी सम्पादक

१९५८

प्रकाशक
मध्य प्रदेशीय प्रकाशन समिति
जुमेराती गेट, भोपाल

चित्रकार
श्री विजय चक्रवर्ती
लखनऊ

कवर पृष्ठ
"आनन्द" दिल्ली

१९५८

मूल्य १०)

मुद्रक—प्रेम प्रिंटिंग प्रेस, गोलागंज, लखनऊ।

काव्य में पादप-पुष्प

आदरणीय श्री कामता प्रसाद जी सागरीय

समर्पण

वन-विज्ञान के लब्ध-प्रतिष्ठ विद्वान्

एवं

हिन्दी-साहित्य के गंभीर विचारक

आदरणीय श्री कामता प्रसाद जी सागरीय

आई० एफ० एस०

मुख्य वन-संरक्षक, वन विभाग

(मध्य प्रदेश)

के

करकमलों

में

सादर समर्पित

—लेखक

त्वदीयं वस्तु गोविन्द, तुभ्यमेव समर्पये

भूमिका

पादप-पुष्प हमारी भारतीय संस्कृति के अभिन्न अंग हैं। उनके माध्यम से ही हम उस महान् स्रष्टा एवं नियामक की विभूतियों की सुषमा का दर्शन करते रहते हैं। तात्त्विक दृष्टि से विचार किया जाय तो पादप-पुष्प निराकार ब्रह्म का ही पार्थिव रूप हैं।

वैदिक वाङ्मय में सर्वत्र पादप-पुष्प की प्रशस्तियाँ गायी गयी हैं। ऋषियों ने रहस्यात्मक चिरंतन सत्ता की स्तुतियों में इनका श्रद्धापूर्वक स्तवन किया है। सूक्तों, ब्राह्मणों, उपनिषदों एवं आरण्यकों में विराट् विभु की निरतिशय सुन्दरता के स्पष्टीकरण में गहरी भावुकता के साथ पादप-पुष्प गरिमा का उल्लेख किया गया है।

विश्व के समग्र काव्य का रस-रूप पादपों की कमनीयता एवं कुसुमों के सौन्दर्य से मुखरित हुआ है। साहित्य की स्पन्दनशीलता तथा संवेदनमयता को इन पादप-पुष्पों ने ही सजीव बनाया है। हमारी धार्मिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय मान्यताओं तथा परम्पराओं की पृष्ट-भूमि में इन मनोरम वृक्षों और पुष्पों का विशिष्ट स्थान है। निश्चय ही इनका अस्तित्व हमारी भौतिक एवं पारमार्थिक साधना को बलवती बनाता है। जीवन में त्याग, परोपकारनिरतता, सुदृढ़ साधना-तत्परता, पावनता, निरीहता आदि सद् गुणों की स्थापना पादप-पुष्पों के साहचर्य से ही हुई है।

वस्तुतः पादप राष्ट्र-वैभव का प्रतीक है और पुष्प देश-सौन्दर्य का सहज रूप है। ईश का ईश्वरत्व वृक्ष में साकार बना है तथा परमेश्वर की मधुरिमा कुसुम में विकसित हुई है। अतः पादप का निरादर परमात्मा का अपमान है और पादप की पूजा भगवान् की अर्चना। पुष्प को तोड़ना मानवीय सहृदयता या भावुकता का विनाश है एवं पुष्प के प्रति स्नेह प्रकट करना परम पावन सौन्दर्य का सम्मान।

पादप-पुष्पों के अभाव में न सृष्टि मनोरम रहेगी, न काव्य की सृष्टि हो

सकेगी, न मानव का अस्तित्व चिरंतन बनेगा और न बसुन्धरा रसवती रह जायगी।

वर्त्तमान समय में राष्ट्रोत्थान के लिए पादप-पूजा परमावश्यक है। भव्य साहित्य की अभिवृद्धि के लिए वृक्ष-स्तवन अनिवार्य है एवं पुरुष-प्रकृति के संबंध को सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम् का रूप देने के हेतु पादप-पुष्प की चिरंतन उपासना आवश्यक है।

मुझे प्रसन्नता है कि श्री श्रीचन्द जैन (हिन्दी-विभाग, ठाकुर रणमत्त सिंह कालेज, रीवा) ने 'काव्य में पादप-पुष्प' नामक अपनी सुन्दर कृति में इन चिर-उपेक्षित प्रशस्त सृष्टि-साधनों की चारु-चर्चा कर साहित्य-संसार के सम्मुख एक पुरातन-अभिनव विचार उपस्थित किया है। सामग्री का चयन लेखक की भावुक अन्तर्दृष्टि का परिचायक है। मुझे विश्वास है कि लेखक का यह ललित एवं स्तुत्य प्रयास लोक-दृष्टि में समादृत होगा। पुस्तक पठनीय एवं संग्रहणीय है।

श्री कामताप्रसाद जी सागरीय को मैं विशेष धन्यवाद देता हूँ जिनकी प्रेरणा तथा प्रोत्साहन से यह सुन्दर रचना निर्मित हुई है।

वनिजो भवन्तु शं नो।

—**ऋग्वेद**

नभो वृक्षेभ्यो

—**यजुर्वेद**

जबलपुर,
३१-१२-१९५७.

कुंजीलाल दुबे
उपकुलपति
जबलपुर विश्व-विद्यालय

काव्य में पादप-पुष्प
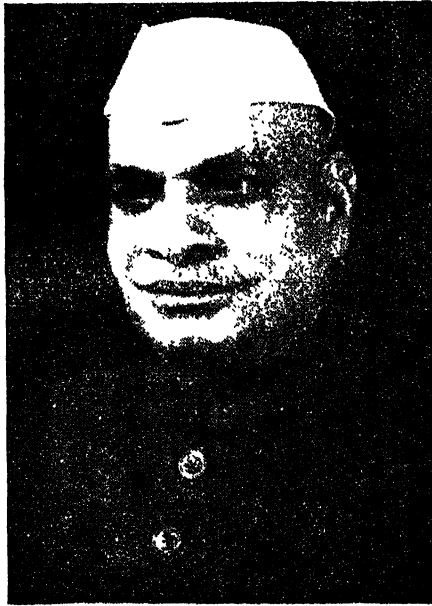
माननीय श्री कुंजीलाल जी दुबे

पूर्व वचन

किसी जन्म के महान् पुण्योदय के फलस्वरूप ही एक दिन आदरणीय श्री कामताप्रसाद जी सागरीय (मुख्य वन-संरक्षक), वन-विभाग, मध्य प्रदेश, के दर्शन हुए। सौभाग्यवश उनके साक्षात्कार से मुझे एक महान् एवं सरस व्यक्तित्व का सान्निध्य प्राप्त हुआ। शनैः शनैः यह संपर्क एक विशेष साहित्यिक चर्चा का साधन बन गया।

पूज्य सागरीय जी उन पुरुषो में से हैं जिन्होंने कभी अपने बड़प्पन एवं महत्ता का अनुभव ही नहीं किया। अपने अवकाश के समय में आप विविध साहित्य का अनुशीलन करते रहते हैं। आपकी कतिपय रचनाएँ आपके बहुज्ञ तथा मौलिक विचारक-रूप को प्रमाणित करने के लिए पर्याप्त हैं। हिन्दी-साहित्य के तो आप विशेष अनुरागी हैं।

समय-समय पर मुझे आपके गंभीर और विद्वता-पूर्ण प्रवचनों को सुनने का अवसर मिला जिनसे मैंने इन पादप-पुष्पों की गरिमा का अनुभव किया और साहित्य के अध्ययन में मुझे एक नवीन दिशा प्राप्त हुई। काव्य में प्रकृति के इन मूल उपादानों का स्थान केवल प्रस्तुत सामग्री के ही रूप में नहीं है अपितु भावोद्‌बोधन के समर्थ प्रेरक तत्त्वों के रूप में भी है। श्री सागरीय जी से उपलब्ध प्रोत्साहन ही इस रचना में साकार हुआ है।

परम आदरणीय पंडित कुंजीलाल जी दुबे, उपकुलपति, जबलपुर विश्व-विद्यालय, तथा अध्यक्ष विधान-सभा मध्यप्रदेश के प्रति मैं सश्रद्धा आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने अपने अतिव्यस्त जीवन में से समय निकाल कर भूमिका लिखने की महती कृपा की है। मैं उन सब विद्वान् कवियों एवं लेखकों का अत्यधिक कृतज्ञ हूँ जिनकी रचनाओं का मैंने इस पुस्तक में यथास्थल उपयोग किया है। रचना की कलेवर-वृद्धि के भय से न मैं पर्याप्त उदाहरण ही दे सका और न "आङ्गल काव्य में पादप-पुष्प" "फारसी-काव्य मे पादप-पुष्प" तथा "अरबी काव्य में पादप-पुष्प" नामक अध्यायों को लिख चुकने पर भी सम्मिलित कर सका।

नमो वृक्षेभ्यो—

हिन्दी-विभाग

ठा० रणमत्त सिंह-कालेज

रींवा (मध्य प्रदेश)

रक्षा बन्धन, सम्वत २०१४ विक्रमी

श्रीचन्द्र जैन

अनमोल - विचार

भगवान् बुद्ध ने कहा—

वनं छिन्दथ मा रुक्खं वनतो जायती भयं ।
छेत्वा वनश्च वनथश्च, निब्बना होथ भिक्खवो ।

—धम्मपद

भिक्षुओं ! वन को काटो, वृक्ष को नहीं; वन से भय उत्पन्न होता है। वन और झाड़ झंखाड़ को काट कर वन रहित होजाओ।

यस्सच्चन्तदुस्सील्यं मालुवा सालमिवोततं ।
करोति सो तथत्तानं, यथा नं इच्छति दिसो ।

—धम्मपद

मालुवा लता से वेष्ठित साखू के पेड़ की भाँति जिसका दुराचार फैला हुआ है, वह अपने को वैसा ही बना लेता है जैसा कि उसके शत्रु चाहते हैं।

—फलवाले या फूलवाले पेड़ काटने वाले व्यक्ति और उसके परिवार के कुशल स्वास्थ्य और समृद्धि के विनाश की आशंका पैदा हो जाती है।

—अग्नि-पुराण

\+ + +

—एक वृक्ष लगाना उत्तम पुत्र पैदा करने के बराबर है।

—मत्स्य-पुराण

× + +

—पेड़ों से मनुष्यों का महान् हित-साधन होता है इस कारण पेड़ लगाना सबसे बड़ा धर्म है।

—महाभारत

—हर आदमी का यह पवित्र कर्त्तव्य है कि वह वनस्पति की वृद्धि के लिए रात-दिन प्रयत्न करे।

—हर्वास

— उगता पेड़ प्रगतिशील राष्ट्र का प्रतीक है।

—श्री जवाहरलाल नेहरू

× × ×

—पेड़ों से वर्षा होती है, वर्षा से अन्न होता है और अन्न ही जीवन है।

—श्री के० एम० मुन्शी

× × ×

—वन-महोत्सव देश की शक्ल बदल सकता है।

— डा० पंजाब राव एस्० देशमुख

—:(०):—

धार्मिक - विचार

वनिजो भवन्तु शं नो

ऋग्वेद ७. ३५. ५.

वृक्ष हमारे लिए शान्तिदायक हों

\+ × +

भगवान् कृष्ण कहते हैं—"ब्रज के पेड़ बड़े-बड़े ऋषि हैं जो वृक्ष बनकर मेरा और श्री बलराम जी का दर्शन करते हैं।"

—श्रीमद्भागवत

"हरा पेड़ काटने वाले और जानवर को मारनेवाले को खुदा माफ़ नहीं कर सकता।"

—कुरान-शरीफ़

—०००—

विषय-सूची

वृक्ष

पहली पंक्ति लिखी विधि ने
जिस दिन कविता की,
उस दिन पहला वृक्ष स्वयं
उत्पन्न हो गया ।
प्रथम काव्य है वृक्ष
विश्व के पहले कवि का ।

* * *

द्रुमों को प्यार करता हूँ,
प्रकृति के पुत्र ये,
भा पर सभी कुछ छोड़ देते हैं,
न अपनी ओर से कुछ भी कभी कहते ।
प्रकृति जिस भाँति रखना चाहती
उस भाँति ये रहते ।

—'दिनकर'

वन-उपवन आदि में वसन्त पुष्पित होने का समय उपस्थित करता है। वह उनके हृदय के स्वाभाविक विकास का महोत्सव होता है। उस समय आत्मदान करने के आनन्द में वृक्ष, लता आदि पागल हो उठते हैं। तब विधि-विधान की ओर उनका ध्यान नहीं रहता। जहाँ दो फल लगने होते हैं वहाँ पच्चीस कलियां निकल आती हैं। तो क्या मनुष्य ही इस प्रवाह को रोक देगा ? मनुष्य अपने को फूलने और फलने न देगा, और आत्मदान करना भी न चाहेगा ?.... वसन्त के गूढ़रस-संचार के द्वारा विकसित तरु, लता, पुष्प, पल्लव आदि से क्या हम लोगों का कोई सम्बन्ध नहीं है ?

----कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर

*Thou, the first word of Creation, O light!
Cast thine auspicious eyes on this new plant.
Leave the message in its inmost heart,
That one day it will fulfil itself in many flowers,
And gathering vitality from thee, let its cool leaves,
Lisp hymns to thee through out a hundred years.

—*Ravindranath* Tagore

—सृष्टि के प्रथम शब्द हे प्रकाश ! इस नवीन पौदे पर अपनी प्रेम-दृष्टि डाल और उसे आशीर्वाद दे कि वह एक दिन विविध-रूपों में पुष्पित होकर मेरे संदेश को विस्तृत करे। -इसके कोमल पत्र तुझसे शक्ति प्राप्त कर शत-शत वर्षों तक तेरा यश गाते रहें।

यः पुमान् रोपयेत् वृक्षान् छायापुष्पफलोपगान्।
सर्वसत्वोपभोगाय, स याति परमां गतिम्।

—वराह पुराण

—जो मनुष्य छाया, पुष्प तथा फल से युक्त वृक्षों को लगाता है वह परोपकारी उत्तम गति पाता है।

—o—

*The March of India, July 1957.

तरुवर फल नहिं खात हैं,
सरवर पियहिं न पान ।
कह 'रहीम' पर-काज हित,
संपति सँचहि सुजान ॥

* * *

छायामन्यस्य कुर्वन्ति तिष्ठन्ति स्वयमातपे ।
फलान्यपि परार्थाय वृक्षाः सत्पुरुषा इव ॥

—ये वृक्ष सज्जन की तरह दूसरों को छाया देते और आप धूप की तपन सहते हैं। इनके फल भी औरों के उपभोग के लिए ही होते हैं।

रीझि खीझि गुरु देत सिख, सखा सुसाहिब साधु ।
तोरि खाय फल होइ भल, तरु काटे अपराधु ॥

* * *

पके, पकाये विटप दल, उत्तम मध्यम नीच ।
फल नर लहैं नरेस त्यौं, करि विचारि मन बीच ॥

* * *

सुतरु सुजन बन ऊख सम,
खन टंकिका रुखान ।
परहित अनहित लागि सब,
साँसति सहत समान ॥
तुलसी भल बरतरु बढ़त,
निज मूलहिं अनुकूल ।
सबहिं भाँति सब कहँ सुखद,
दलनि फलनि बिनु फूल ॥

—तुलसीदास

—०—

हे पादप ! फलों के बोझ से तू झुक जाता है और तेरी डाल टूटने लगती है। पर तू अपना नियम नहीं छोड़ता। क्योंकि बुभुक्षितों को तृप्त करके उनकी आँखें खोलना तेरा प्रण है। बुद्धि की सफलता भी यही है। और, इसे मैं तुझ से सीखता हूँ।

—श्री रायकृष्ण दास

बन्धूकद्युतिबान्धवोऽयमधर: स्निग्धो मधूकच्छवि-
र्गण्डश्चण्डिचकास्ति नीलनलिनश्रीमोचनं लोचनम्।
नासाभ्येति तिलप्रसूनपदवीं कुन्दाभदन्ति प्रिये,
प्रायस्त्वन्मुखसेवया विजयते विश्वं स पुष्पायुधः ॥

—अज्ञात

—हे चण्डि! दुपहरिया के फूल के समान यह तुम्हारा अधर, महुए की प्रभा के समान तुम्हारे चिकने-चिकने गाल, नील-कमलों की कान्ति को चुराने वाले ये तुम्हारे नेत्र तथा तिल के फूल के समान तुम्हारी यह नाक शोभा दे रही है। हे कुन्द की आभा के समान दाँतों वाली! कामदेव तुम्हारे मुख की सेवा से ही संसार को जीतता है।

माधविका परिमल ललिते, वनमालिकयाति सुगंधौ।
मुनिमनसामपि मोहनकारिणि, तरुणा कारण बन्धौ ॥
विहरति हरिरिह सरस वसन्ते,
नृत्यति युवतिजनेन समं सखि विरहिजनस्य दुरन्ते ॥

—गीतगोविन्द काव्यम्

—यह ऋतुराज वसन्त माधवी लता की मुग्ध सुगंध से अति रमणीय, नवीन मालती तथा चमेली के पुष्पों से सुरभित, मुनियों के भी मन को मोहने वाला युवकों का परम मित्र है। ऐसे वसन्त में विरही जनों से दूर श्री कृष्ण गोपियों के साथ बिहार कर रहे हैं।

कहा करौं बैकुंठ लै, कलपवृक्ष की छाँह।
'अहमद' ढाक सराहिए, जो पीतम-गल-बाँह ॥
कब हौं सेवा-कुंज में ह्वैहौं स्याम तमाल।
लतिका कर गहि बिरमिहैं, ललित लड़ैती लाल ॥

धत्ते भरं कुसुम-पत्र-फलावलीनां,
घर्म-व्यथां वहति शीतभवां रुजं च।
यो देहमर्पयति चान्य सुखस्य हेतोस्,
तस्मै वदान्य-गुरवे तरवे नमोऽस्तु ॥

—भामिनी-विलास

—फूलों, पत्रों एवं फलों के भार को धारण करने वाले, धूप की व्यथा को सहने वाले, दूसरों को शीतलता प्रदान करने वाले, एवं दूसरे के हितार्थ अपने शरीर को अर्पित करने वाले गुरु-रूप वृक्ष को नमस्कार है।

पत्र-पुष्प-फलच्छाया-मूल-वल्कल-दारुभिः
गंध-निर्यास-भस्मास्थि तोक्मैः कामान्वितन्वते ॥

—पत्र, पुष्प, फल, छाया, जड़, छिलका, काष्ठ, गंध गोंद एवं भस्म से संसार की सेवा करने वाले वृक्ष की जय हो।

तथागत (बुद्ध) ने कहा—

यथापि भमरो पुप्फं बण्ण गंधं अहेठयं।
पलेति रसमादाय एवं गामे मुनीचरे ॥

—धम्मपद

—जैसे भ्रमर पुष्प के वर्ण और गन्ध को बिना हानि पहुँचाये रस लेकर चला जाता है, वैसे ही मुनि ग्राम में भिक्षाटन करे।

वस्सिका विय पुप्फानि मद्दवारि पमुंचति।
एवं रागचं दोसंच विप्प मंचेथ भिक्खवो ॥

—धम्मपद

—जैसे जूही कुम्हलाये फूलों को छोड़ देती है, वैसे ही भिक्षुओं! राग और द्वेष को छोड़ दो।

त्रिपिटिकाचार्य भिक्षु धर्म रक्षित का अनुवाद

आमोदैर्मरुदो मृगः किसलयोल्लासैस्त्वचा तापसाः,
पुष्पैः षट्चरणाः फलैः शकुनयो घर्मार्दिताश्छायया।

स्कन्धैर्गन्ध गजास्त्वयैव विहिताः,
सर्वे कृतार्थास्ततः ।
त्वं विश्वोपकृतिक्षमोऽसि भवता,
भग्नापदोऽन्ये द्रुमाः ।।

—प्रकंपन से हवा को प्रमुदित करने वाले, पत्तों से पशुओं को हर्षित करने वाले, बल्कल से तपस्वियों को आह्लादित करने वाले, पुष्पों से भ्रमरों को उन्मत्त बनाने वाले, फलों से पक्षियों को आनन्दित करने वाले, शीतल छाया से धूप-पीड़ितों को विश्राम देने वाले एवं तनों तथा गंध से हाथियों को उल्लसित करने वाले हे वृक्षो ! तुमने समस्त विश्व को कृतार्थ कर दिया है ।

धत्से मूर्धनि दुःसहा दिनमणे
रुद्दाम घर्मच्छटाः ।
छायाभिः पथिकान् निदाघमथितान्,
पुष्णासि पुष्पैः फलैः ।
धैर्यं मुंचसि नैव येन भवता,
शाखा सुविस्तारिताः ।
तेनाशासु वनस्पते तव यशः
स्तोमः समुज्जृंभते ।

—सुभाषित

वृन्दावन में एक पेड़ था उसे काटने की तैयारी हुई । रात में एक मुसलमान दारोगा को स्वप्न हुआ कि देखो मैं काशी में एक विद्वान् ब्राह्मण था, बहुत तपस्या करने पर मुझे व्रज में पेड़ होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है । लोग मुझे काटने की तैयारी कर रहे हैं । तुम बचाओ । वह मुसलमान तो था ही, पर सब पता-ठिकाना, आदमी का नाम तक स्वप्न में बताया गया था । इसलिए उसे जाँचने की इच्छा हुई । जाँचने पर सब बातें ज्यों की त्यों मिलीं । उसे पहले कुछ भी इस विषय में ज्ञात न था ।

सत्संग-सुधा, कल्याण, दिसम्बर १९५७

—सूर्य की असहनीय धूप को सहकर आतप पीड़ित पथिकों को छाया देने वाले, एवं पुष्प-फलों से सबको प्रसन्न करने वाले हे वृक्षो ! तुम्हारा यश अखिल विश्व में फैला हुआ है।

"कर्मण्याश्चैव ये वृक्षा न च्छेतव्या कदाचन ।

- कर्मशील वृक्षों को कभी नहीं काटना चाहिए।

नगरोपवने वृक्षान्प्रमादाद्धि छिनत्ति यः ।
स गच्छेन्नरकं नाम जृंभणं रौद्र दर्शनम् ॥

—नगर के उपवन में खड़े हुए वृक्षों को जो काटता है वह भयानक जृंभण-नरक में जाता है।

तद्रूंश्च छेद येद यस्तु वृक्षान् छाया सुशीतलान्,
असिपत्र वने घोरे पीड्यते यम किंकरैः ।

—वराहपुराण

—शीतल छाया देने वाले वृक्षों को जो काटता है उसे यमराज के दूत असि-पत्र नामक नरक में दण्ड देते हैं।

साधु कहावन कठिन है,
लम्बा पेड़ खजूर ।
चढ़ै तो पावे प्रेम रस,
गिरै तो चकना चूर ।

—कबीर

Love of trees is essential to an understanding of the importance of forests................to national welfare and prosperity.

Civilization have disappeared through a lack of this understanding. Proud and powerful empires have vanished under the stress, not of an invading army, but of the reckless destruction of their trees and the consequent loss of the soil and water which supported human life. The threat of similar disaster exits to-day. It may be seen in the spread of the Rajputana desert

growing into the very heart of India, and in the desert encroachment on to marginal lands south of the Sohara.

Apart from the protection which forest cover gives to a nation's soil, water resources and climate, the tree is a thing of beauty and of use in man's immediate needs.

Trees adorn our homesteads and our cities. They shelter our farms and our wildlife and afford peace and rest from the worries and turmoil of our daily toil when we seek their healing presence in recreational parks and national reserve.

Their abundance or absence may bear a direct relationship to industrial development and expansion, social progress and national strength.

[World Festival of Trees, *Introduction.*]

—वन-महिमा राष्ट्रीय गरिमा एवं समृद्धि को समझने के लिए वृक्ष-प्रेम आवश्यक है। इस वृक्ष-प्रेम के अभाव से ही सभ्यता का विनाश हुआ है। राष्ट्र के विनाश में शक्तिशाली आक्रमण हेतु नहीं हैं, अपितु वृक्षों के नाश ने ही समृद्धि-शाली राष्ट्रों का अन्त किया है। वृक्षों के नाश से वर्षा का अभाव और वर्षा की कमी से मानव-जाति का ह्रास प्रत्यक्ष है। राजपूताने के मरुस्थल एवं अफ्रीका का सहारा विनाश का संकेत करते हुए आगे बढ़ रहे हैं। वृक्ष सौंदर्य के प्रतीक तथा मानव की अनिवार्य आवश्यकताओं के पूरक हैं। राष्ट्र की समृद्धि के प्रमुख साधन नगरों एवं गृहों के शोभावर्धक, शान्तिदायक, तथा सामाजिक, उन्नति के द्योतक ये वृक्ष ही हैं।

जो धरती पर वृक्ष लगाता,
वह सबको छाया देता है।
मनु की संतानों से वह, फिर
मधु आशीष सदा लेता है॥

—वनमाली
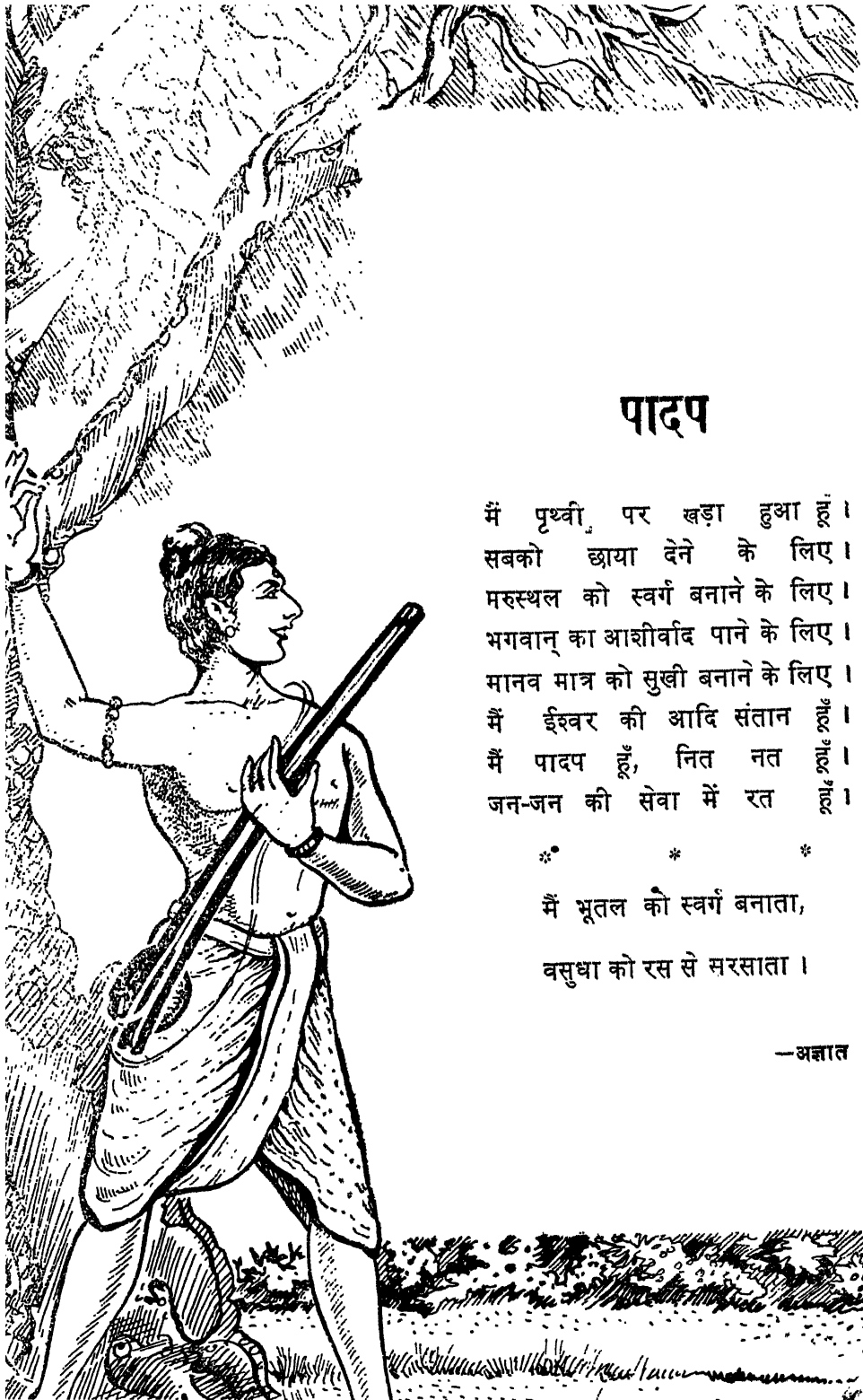
पादप

मैं पृथ्वी पर खड़ा हुआ हूं।
सबको छाया देने के लिए।
मरुस्थल को स्वर्ग बनाने के लिए।
भगवान् का आशीर्वाद पाने के लिए।
मानव मात्र को सुखी बनाने के लिए।
मैं ईश्वर की आदि संतान हूँ।
मैं पादप हूँ, नित नत हूँ।
जन-जन की सेवा में रत हूँ।

* * *

मैं भूतल को स्वर्ग बनाता,
वसुधा को रस से सरसाता।

—अज्ञात

वृक्ष-प्रशस्ति

वृक्ष मानव का चिरंतन साथी है। जन्म से लेकर मृत्यु तक वृक्ष ने मानव का साथ दिया है। यह विशाल सृष्टि पादप पर ही अवलंबित है। प्रकृति की उदारता और सुन्दरता का अध्ययन हम वृक्षों के माध्यम से करते हैं। मानव ने अपने आदि-जीवन काल में वृक्षों की छाया में शरण ली और इन्हीं के फल-फूल खा वह जीवित रह सका। पृथ्वी का पुत्र, यह पादप प्राणिमात्र का सहारा और जीवनदाता है। इसके दृढ़ चरणों ने पृथ्वी की परिक्रमा की और स्वर्ग से पाताल तक की दूरी नापी। विश्व के अनन्त परिवर्तनों को यह चिरकाल से देखता आ रहा है और न मालूम कब तक देखता रहेगा।

वृक्ष का अस्तित्व पवित्र है। इसका जीवन और मरण परोपकार के लिए ही है। इसके उत्पन्न होते ही धरा के प्रांगण में नवोल्लास की आभा फैल जाती है। इसकी वृद्धि के साथ-साथ धरित्री की सुषमा सजीव बनने लगती है। वृक्ष की हरीतिमा प्राणिमात्र की साँसों को हरा-भरा बना देती है। इसके प्रभाहीन होने पर संसृति कुम्हलाने लगती है। तरु का आदर्श है पर-कल्याण, परोपकार। अपने शैशव से इसने जन-जन का हित करना ही सीखा है। यह स्वयं धरती से उत्पन्न हुआ ; धरती पर ही रहा इसने पृथ्वी माता का स्तवन करते हुए अपने अस्तित्व को विश्व के मंगल में लगा दिया। न इसने कभी अपने पुष्पों की सुगंध का उपभोग किया, और न कभी मधुर फलों का आस्वादन। दूसरों को अपनी शीतल छाया में आश्रय दिया और स्वयं को सूर्य की उष्ण किरणों में तपाया। वर्षा की बूँदों से सबको बचाकर इसने तीव्र जल वर्षण के आघात को स्वयं सहा। शीत से स्वयं प्रकंपित हुआ, लेकिन दूसरों को उष्णता प्रदान की। शुभाशुभ की कल्पना को भुलाकर, इस धरती के लाल ने भूतल के प्रत्येक भाग को अपनाया। देवालय के आँगन में रहकर यह भक्ति-भाव से झूमा। श्मशान की कठोर एवं विषादमयी सीमा में खड़े होकर इसने मानव-मात्र को विश्व की क्षणभंगुरता की सीख दी। सरिता के एकांत तट पर स्थिर होकर इसी पादप ने जल की चंचल लहरों के साथ जीवन के मधुर गीत गाये। उन्नत भूधरों के मस्तक पर बैठकर इसने आकाश की विशालता का अनुमान लगाया। सूने कानन को मंगलमय बनाने वाला यह पेड़ अपनी दृढ़ता के लिए प्रसिद्ध है। गुफा के द्वार पर

प्रहरी बनकर इस मौन साधक ने ऋषियों के एकान्त चिन्तन में बड़ा योग दिया। प्रलय की वेला में भगवान् शिशु बनकर इसी वृक्ष के पल्लव पर खेले थे। वनों में रहकर महर्षियों ने इन पादपों के ही सहारे अपनी साधना को जीवित रखा था। देशों से निर्वासित मानव को अपनाने वाले ये वृक्ष कभी नहीं भुलाए जा सकते।

वृक्ष की सृष्टि मानव-सृष्टि से पूर्व हुई थी। अतः पादप का जन्म मनुष्य के अस्तित्व के पहले से ही धरती की गोद में हो चुका था। संसार को वृक्ष के रूप में मानने की कल्पना हमारे प्राचीनतम धार्मिक ग्रन्थों में मिलती है। कहा जाता है, संसार-रूपी वृक्ष के दो फल—पाप और पुण्य हैं। पाश्चात्य धार्मिक सिद्धान्तों के अनुसार भी "मनुष्य के पहले फूल और वृक्ष को ईश्वर ने बनाया था।" जरथुस्त्र के मतानुसार पहले काल-विभागों में आकाश उत्पन्न किया गया, दूसरे में जल, तीसरे में भूमि, चौथे में वृक्ष, पाँचवें में प्राणी और छटे में मनुष्य। मूसा के मतानु-सार पहले दिन स्वर्ग व पृथ्वी उत्पन्न किये गये; दूसरे दिन आकाश व जल; तीसरे दिन भूमि, घास, पक्षी, फल, और वृक्ष; चौथे दिन प्रकाश, सूर्य, चन्द्र, और तारागण; पाँचवें दिन जंगम प्राणी, पंख वाले पक्षी व बड़ी-बड़ी मछलियाँ; छठे दिन जीवधारी, मवेशी, लता, पशु और मनुष्य। (जेनेसिस-१/१/२६) ऋग्वेद के पुरुषसूक्त (१०/९०) में भी लगभग ऐसा ही सृष्टि का वर्णन आता है।+

ऋग्वेद के अनेक मंत्रों में वृक्ष का उल्लेख मिलता है। इसके माध्यम से विभिन्न भावनाओं का भी प्रकटीकरण हुआ है :—

> सीदन्तस्ते वयो यथा गोश्रीते मधौ मदिरे विवक्षणे।
> अभि त्वामिन्द्र नोनुमः। (ऋ० ८/११/५)

—जिस प्रकार पक्षिगण वृक्ष का आश्रय लेकर चह-चहाते हैं, उसी प्रकार गोरस से मिश्रित मधुर आनन्दप्रद विशेष सुख या मुक्ति में ले जाने वाले तेरे स्वरूप में हम विराजमान होकर हे आत्मन् तेरी प्रत्यक्ष रूप से स्तुति करते हैं अर्थात् तेरे आनंद रस में मग्न होकर हम तेरी स्तुति करते हैं।×

+ भारतीय संस्कृति—लेखक प्रो० शिवदत्त ज्ञानी पृ० ३४४

× सामवेद संहिता-भाष्यकार पं० जयदेव जी शर्मा. पृ० १६५

वृक्षादि वनस्पतियों में भी परमात्मा का अस्तित्व है।

तव श्रियो वर्ष्यस्येव विद्युतोऽग्नेश्चिकित्र उषसामिवेतयः
यदोषधीरभिसृष्टो वनानि च परि स्वयं चिनुषे अन्नमास्यनि ॥१॥
वातोपजूत इषितो वशाँ अनु तृषु यदन्ना वेविषद् वितिष्ठसे।
आ ते यतन्ते रथ्योऽयथा पृथक् शर्धांस्यग्ने अजरस्य धक्षतः ॥२॥

—हे परमेश्वर ! ज्ञान प्रकाशक ! तेरी विभूतियाँ मेघ की बिजलियों के समान और प्रभात काल में निकलती हुई किरणों के समान सवत्र जानी जाती हैं। जब कि ओषधियों और वृक्षादि वनस्पतियों में भी व्याप्त होकर मुख में अन्न के समान, समस्त पदार्थों को अपने भीतर ले लेता है।१

ओषधि अन्नादि और वनस्पतियों को जिस प्रकार अग्नि अपने भीतर जलाकर मानो ग्रास कर जाता है उसी प्रकार परमेश्वर सब पदार्थों को अपने भीतर लीन करता है, उसी प्रकार विद्वान भी समस्त ओषधि वृक्षादि को अन्न के समान जानकर उनका खाद्य रूप से विवेक करे।२

—सामवेद संहिता-पृ० ३३५-३३६

कुरान शरीफ़ में भी कई स्थानों पर बाग़ दरख्त फल आदि का उल्लेख मिलता है। यथा—

........"और जो लोग ख़ुदा की ख़ुशी के लिए और अपनी नियत साबित रखकर अपना माल ख़र्च करते हैं, उनकी मिसाल एक बाग़ जैसी है जो ऊँचे पर है, उस पर ज़ोर का मेंह पड़े, तो दूना फल लाये और अगर उस पर ज़ोर का मेंह न पड़ा तो (उसकी) हलकी फुआर भी काफी है।"

—हिन्दी कुरान, पृ० ६२

.... "वही है जिसने आसमान से पानी बरसाया। जिसमें से कुछ तुम्हारे पीने का है और उससे पेड़ परवरिश पाते हैं। जिनमें तुम अपने मवेशियों को चराते हो। उसी पानी से ख़ुदा तुम्हारे लिए खेती और ज़ैतून-खजूर और अंगूर और हर तरह के फल पैदा करता है।"

—हिन्दी कुरान—श्री अहमद बशीर पृ० २७२

बाइबिल में पादप के विषय में अनेक सुन्दर कथन मिलते हैं, जो लोकोक्ति के रूप में प्रसिद्ध हो गये हैं:—

१. In the place where the tree falleth there it shall be. (Old Test. Eccles.)

—जहाँ पेड़ गिरेगा, वहीं रहेगा।

२. The axe is laid unto the root. (New Test. Matthew.

—कुल्हाड़ी पेड़ की जड़ में ही लगती है।

The tree is known by his fruits. (New Test. Matthew.)

—पेड़ फलों से ही पहचाना जाता है।

> ऋतु बसंत जाचक भया, हरषि दिया द्रुम पात।
> तातें नव-पल्लव भया, दिया दूर नहि जात।

—कबीर

संस्कृत साहित्य में वृक्षों के संबंध में अनेक सूक्तियाँ सुगमता से प्राप्त हो सकती हैं—

> अहो एषां वरं जन्म सर्व प्राण्युपजीनवम्।
> धन्या महीरुहायेभ्यो निराशा यान्ति नार्थितः ॥१॥
> छायामन्यस्य कुर्वन्ति तिष्ठन्ति स्वयमातपे।
> फलान्यपि परार्थाय वृक्षाः सत्पुरुषा इव ॥२॥

—संकलित

—इन वृक्षों का जन्म परम पवित्र है। ये सदैव समस्त प्राणियों का उपकार करते रहते हैं। ये पादप धन्य हैं, जिन के समीप से कोई भी याचक असन्तुष्ट या विमुख होकर नहीं जाता।१

—ये वृक्ष सत्पुरुष के समान हैं। स्वयं धूप में रहकर औरों के लिए छाया करते हैं। फलों को स्वयं न खा कर दूसरों को ही देते हैं।२

आदि कवि महर्षि वाल्मीकि ने रामायण के आरण्य कांड में विविध वृक्षों तथा पुष्पों का सरस वर्णन किया है:—

यथोद्दिष्टेन मार्गेण वनं तच्चावलोकयन् ।
नीवारान् पनसांस्तालांस्तिमिशान् वञ्जुलान् धवान् ॥ १ ॥
चिरिबिल्वान् मधूकांश्च बिल्वानपि च तिन्दुकान् ।
प्रप्पितान् पुष्पिताग्राभिर्लताभिरनु वेष्टितान् ॥ २ ॥
ददर्श रामः शतशस्तत्र कान्तारपादपान् ।
हस्ति हस्तैर्विमृदितान् वानरैरुप शोभितान् ॥ ३ ॥

—वन-मार्ग में जाते हुए श्री रामचन्द्र उस वन की शोभा निरखते जाते थे। उन्होंने उस वन में नीवार, कटहल, शाल, वञ्जुल, तिमिश, ढाँक तथा पुराने बेल, महुआ, तेंदुआ आदि वृक्ष जो स्वयं फूले हुए थे तथा जिनमें फूली हुई लताएँ लिपटी थीं, सैकड़ों वृक्ष देखे। उन वृक्षों में से कितने ही हाथियों की सूँड़ों से टूटे हुए थे और कितनों ही पर बंदर बैठे हुए उनकी शोभा बढ़ा रहे थे। १, २, ३ ।+

सालैस्तालैस्तमालैश्च खर्जूरपनसाम्रकैः ।
नीवारै स्तिमिशैश्चैव पुंनागैश्चोप शोभिताः ॥ १ ॥
चूतैरशोकैस्तिलकैश्चम्पकैः केतकैरपि ।
गुल्मगुल्मलतोपेतैस्तैस्तैस्तरुभिरावृताः ॥ २ ॥
चन्दनैः स्यन्दनैर्नीपैः पनसैर्लिकुचैरपि ।
धवाश्वकर्णखदिरैः शमीकिंशुकपाटलैः ॥ ३ ॥

—ये पहाड़ साल, ताल, तमाल, खजूर, कटहर, तिन्नी, नीवार, तिमिश, और नाग वृक्षों से सुशोभित हैं। और आम, अशोक, तिलक, चम्पा, केतकी आदि पुष्प, गुल्म और लता आदि से घिरे हैं।

+ श्रीमद्वाल्मीकि—रामायण (अनु० चतुर्वेदी द्वारका प्रसाद शर्मा) आरण्यकाण्ड, पृ०८७।

ये चन्दन, स्यन्दन, कदंब, बड़हर, लुचकुचा, धव, अश्वकर्ण, खैर, शमी, किंशुक और पाटल वृक्षों से सुशोभित हैं। १, २, ३,+

माना ये खिलते फूल सभी झड़ते हैं।
जाना, ये दाड़िम, आम सभी सड़ते हैं।
पर क्या योंही ये कभी टूट पड़ते हैं?
या कांटे ही चिरकाल हमें गड़ते हैं?
मैं विफल तभी, जब बीज रहित हो जाऊँ।
कह मुक्ति, भला, किस लिए तुझे मैं पाऊँ?

(यशोधरा, श्री गुप्त)

एक कथा में बताया गया है कि भगवान् राम ने उल्लू और गीध के झगड़े में निर्णय देते हुए बताया था कि वृक्षों की सृष्टि मनुष्य से पहले हुई है। कहानी इस प्रकार है:—किसी वन में उल्लू और गीध एक ही घर में रहते थे। एक दिन गीध ने बुरी नियत से घर पर अपना अधिकार करना चाहा और उल्लू से कहा—"हमारा घर खाली कर दो, इस पर तुम्हारा कोई अधिकार नहीं है, नहीं मानते हो, तो चलो भगवान् राम से न्याय करा लें।" अन्त में दोनों श्री राम जी के दरबार में आये। रामचन्द्र जी ने उल्लू से पूछा—"घर किसका है? तू उसमें कब से रहता है?" उल्लू ने उत्तर दिया—"महाराज! जब से वृक्षों की सृष्टि हुई है, तब से मैं उस घर में रहता हूँ।' गीध ने कहा कि जबसे मनुष्य कि सृष्टि हुई, तब से मैं रहता हूँ।' भगवान् ने निर्णय देते हुए कहा—"वृक्षों की सृष्टि मनुष्य से पहले हुई है, इसलिए घर उल्लू का ही है, तुम्हारा नहीं। गीध, तुम मकान खाली कर दो।"*

उर्दू-काव्य तो चमन, (बगीचा) और गुल (फूल) से सदा महकता रहता है। वृक्ष चमन में अपना यौवन देखते हैं और फूलों के द्वारा अपनी जवानी का उभार दिखाते हैं। पादप का उल्लास पुष्पों से ही प्रकट होता है। और पुष्पों की रंगीन अदाएँ वृक्षों की शाखाओं पर अच्छी लगती हैं।

+श्री महाल्मीकि रामायण—आरण्यकाण्ड पृ० ११७, ११८.

*विनय-पत्रिका, टीकाकार श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, पृ० २४४.

फूल वही चमन वही, फ़र्क़ नज़र-नज़र का है।
अहदे[1]-बहार में था क्या दौरे-ख़िज़ां[2] में क्या नहीं?

—जिगर

न शाख़-ए-गुल[3] ही ऊँची है, न दीवार-ए-चमन[4] बुलबुल।
तेरी हिम्मत की कोताही, तेरी क़िस्मत की पस्ती है।

—अमीर

सदमा[5] आजाये हवा से गुल की पत्ती को अगर।
अश्क़[6] बनकर मेरी आँखों से टपक जाये असर[7]।

—अकबाल

न भूलकर भी तमन्ना-ए-रंगो-बू[8] करते।
चमन के फूल अगर तेरी आरजू[9] करते।

—अख़्त० शीरा०

ख़ूब की सैर-ए-[10]चमन, फूल चुने, शाद[11] रहे,
बाग़बाँ[12] जाते हैं हम, गुलशन[13] तेरा आबाद रहे।
वह गुल हूँ ख़िज़ाँ[14] ने जिसे बरबाद किया है।
उलझूं किसी दामन[15]से, मैं वह ख़ार[16] नहीं हूं।

—चकबस्त

प्राकृत और अपभ्रांश-काव्य की भाँति हिन्दी-काव्य में भी वृक्ष एवं पुष्प के संबंध में पर्याप्त लिखा गया है।

---

१ वसन्त काल। २ पतझड़ का समय।
३ फूल की टहनी। ४ बाग की दीवार।
५ रंज, ६ आँसू, ७ प्रभाव।
८ रंग और गंध की अभिलाषा। ९ इच्छा।
१० बाग की सैर। ११ प्रसन्न। १२ माली। १३ बग़ीचा।
१४ पतझड़। १५ आँचल। १६ काँटा।
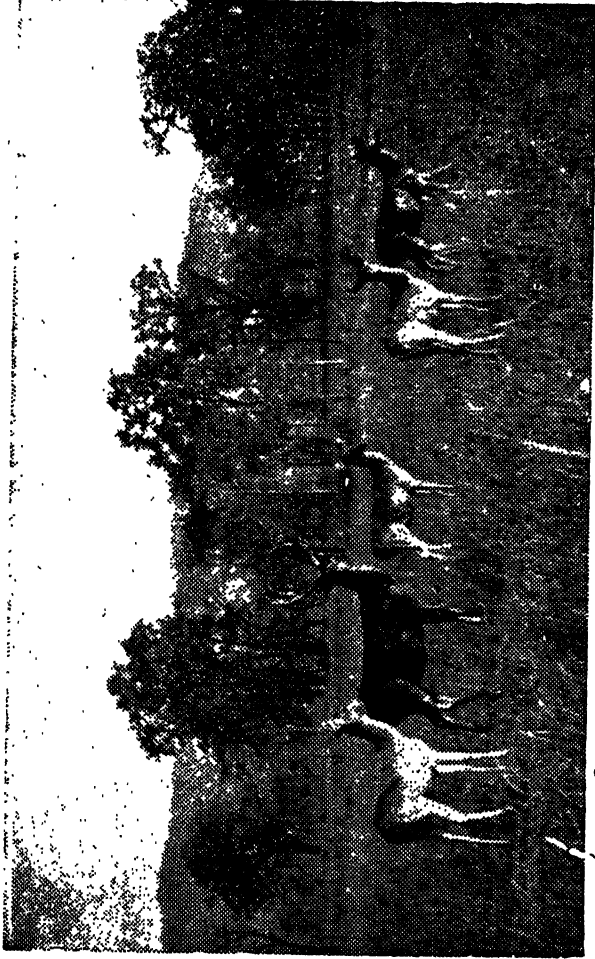
वृक्षों के चिरंतन साथी ये मृग

वृक्ष कबहुं ना फल भखैं, नदी न संचें नीर।
परमारथ के काज ही, साधुन धरा शरीर ।।

* * *

नाहीं भलि गुलाब तू, गुनि मधुकर गुंजार।
यह बहार दिन चार की, बहुरि कटीली डार।
बहुरि कटीली डार, होंहिगी ग्रीषम आये।
लुवैं चलेंगी संग, अंग सब जैहैं ताये।
बरनैं दीनदयाल, फूल जौलौं तो पाहीं।
रहे घेरि चहुँ ओर, फेरि अलि ऐहैं नाहीं।

* * *

मरकत-बरन परन, फल मानिक से,
लसै जटाजूट जनु रूख वेष हरु है।
सुषमा को ढेरु, कैधौं सुकृत सुमरु कैधौं,
संपदा सकल मुद-मंगल को घरु है।
देत अभिमत जो समेत प्रीति सेइये,
प्रतीति मानि 'तुलसी' बिचारि काको थरु है।
सुरसरि निकट सोहावनी अवनि सोहै,
राम - रमनी को वट कलि कामि तरु है।

* * *

सिरस कुसुम मँडरात अलि, न झुकि झपटि लपटात।
दरसत अति सुकुमारता, परसत मन न पत्यात ।।

* * *

बहकि बड़ाई आपनीं, कत राचित मत भल।
बिन मधु मधुकर के हिये, गड़ै न गुड़हर फूल ।।

—बिहारी

बिहँसि कह्यौ रघुनंदन पावन बाग ।
ऐहैं फरि सुमन हित, गुरु अनुराग ।।

—लछिराम

जम्बू, अम्ब, कदम्ब, निम्ब, फलसा, जम्बीर औ आंवला
लीची, दाड़िम, नारिकेल, इमली, औ शिशिपा ईंगुरी ।
नारंगी अमरूद बिल्व, बदरी सागौन शालादि भी ।
श्रेणी बद्ध तमाल ताल कदली, औ शाल्मली थे खड़े ।

—हरिऔध

—०—

वृक्ष एवं पुष्प की उपयोगिता और सुन्दरता सार्वभौमिक है । मानव-हृदय इनकी ओर स्वयं आकर्षित हो जाता है । देश-काल का भेद मानवीय अनुभूतियों में विभिन्नता उत्पन्न नहीं कर सकता । सर्वत्र सौन्दर्य के प्रति आकर्षण देखा जाता है । मनोरमता के लिए किसका हृदय नहीं मचलता ? अंग्रेजी-साहित्य में भी प्रकृति की सरसता का सुन्दर चित्रण हुआ है । आगे दी हुई कविताएँ पादप की उपयोगिता को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं । 'एक सफेद गुलाब' शीर्षक कविता कवि के पुष्पानुराग की परिचायिका है । कवि का जगत् कल्पनामय होने पर भी प्रकृति-प्रेम से पवित्र है । काव्य का उत्कर्ष प्रकृति के प्रांगण में हुआ । प्रख्यात कवियों ने अपने उत्कृष्ट काव्य की सृष्टि हरे वृक्षों की छाया में बैठकर अथवा मनोरम उद्यानों की सुरभित परिधि में रहकर की है । वेद-पुराण, स्मृति आदि धार्मिक साहित्य की सृष्टि इस अनन्त आकाश की नीलिमा के नीचे हुई है, जहाँ पादप और पुष्प सदैव दृष्टि गोचर होते रहे हैं ।

कानन में जितने पादप हैं,
वे सब उपयोगी प्रति पल हैं ।
कुछ हैं शक्ति गठीली जड़ के,
कुछ तूफानों में संबल हैं ।
कुछ अपना अस्तित्व मिटा कर,
पावक को जीवित रखते हैं ।

नोटः—विशेष अध्ययन के लिए 'हिन्दी-कवि और पादप-पुष्प' देखिए ।

कुछ ऐसे हैं जो घर-घर के,
आश्रय बन कर स्थिर रहते हैं।
कुछ नौका की बल्ली बनकर,
सरिता के मद को पी जाते।
ये पादप वन के वैभव हैं,
संसृति के जीवन कहलाते।
दिव्य सृष्टि के जन्म-काल से,
अपने उपहारों को देकर।
मानव को उल्लसित किया है,
इन वृक्षों ने नित नत होकर।
पर इनके प्रिय उपहारों से,
भी सुखकर इनकी सुन्दरता।
देख-देख इनके जीवन को,
प्रभु-वैभव में यह मन रमता।
क्षुद्र बीज का कितना सुंदर
वैभव भूतल पर लहराता।
यह मीनार कभी गुम्मद बन,
मंदिर की शोभा सरसाता।
विजय-स्तूप आनंद भवन में,
कभी वेदिका के अंचल में।
वृक्ष तुम्हारी आभा देखी,
जीवन के उल्लास-अतल में।
सरिताओं के ये पोषक हैं,
धरती की साँसों की काया।
मानव के आवास मनोहर,
त्यों पावन समाधि की छाया।

मैं ठहरा सोनावर वन में,
उस जैतून-वृक्ष के नीचे।
बिता चुका हूँ कुछ क्षण अपने,
शान्त भाव से आँखें मींचे।
मैं न कभी भी भूल सकूँगा,
उस सिन्दूर, ताड़ की छाया।
जिसकी सुखद गोद में सोकर,
शान्ति और सुख सन्तन पाया।
प्रातः रवि की नव किरणों में,
झुकी डालियाँ घरके आगे।
देख भाल मेरा नत होता,
मैं कहता हूँ अब सुख जागे।
फूलो फलो विश्व के साथी,
ईश्वर तुमको सुखी बनावे।
हे तरुवर! हे मित्र पुरातन,
तुम्हें न कोई कभी सतावे।

(एक अंग्रेजी कविता के आधार पर)

A White Rose

The red rose whispers of Passion-
And the white rose breaths of Love,
O, the red rose is a falcon
And the White rose is a dove.
But I send you a cream-white rose bud
With a flush on its petal tips;
For the love that is purest and sweatest
Has a kiss of desire on the lips.

John Boyle Oreilly.

—लाल गुलाब कामुकता का द्योतक है और सफेद गुलाब प्रेम का सूचक है। लाल गुलाब बाज़ है, सफेद गुलाब फ़ाक्ता (पड़कुलिया) है। लेकिन मैं तुम्हारे पास एक श्वेत पुष्प कलिका भेजता हूँ, जिसके होठों पर रक्त वर्ण मुसकान है! क्योंकि पावन प्रेम एक चुम्बन के लिए आतुर रहता है।

प्राचीन काल में, अन्तःपुर में वृक्ष-वाटिकाएँ रहा करती थीं। उद्यान-यात्रा भी पवित्र मानी जाती थी। संस्कृत-साहित्य का अध्ययन करने से ज्ञात होगा कि प्राचीन भारत के नगर बगीचों से महकते रहते थे। उद्यानों की इस मनोहारी शोभा ने पुराणकार के चित्त में भावावेग का कम्पन उत्पन्न किया था और उनके वर्णन में पुराणकार की कवि-प्रतिभा इस प्रकार मुखर हो उठी है—'-फूली हुई लताओं से आच्छादित तरु-समूह प्रियाओं से आलिंगित सुभगजनों की भाँति सोह रहे थे। पवन से आंदोलित मंजरियों से सुशोभित आम और तिलफ के तरु सुजनों की भाँति प्रेमालाप करते से जान पड़ते थे। पुष्पों और फलों के भार से समृद्ध वृक्ष-समूह उन सज्जनों जैसे लग रहे थे जो अपना सर्वस्व दूसरों को देने से प्रसन्न बने रहते हैं। अमृत-वल्लरियों पर बैठे हुए भौंरे हवा की हिलाई लताओं पर इस प्रकार नाच रहे थे, मानो प्रियतमा के साहचर्य से मदमत्त कोई प्रेमी जन हो……।" इस प्रकार पुराणकार की भाषा अवाधगति से वन की शोभा का वर्णन करती हुई नहीं थकती।

(प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद पृ०, ४४)

हमारी भारतीय संस्कृति में उद्यानों का अधिक योग रहा है। अतएव सांस्कृतिक उत्सवों में मनोरमता लाने के लिए पल्लवों से प्रमुख द्वारों एवं मण्डपों को सुशोभित किया जाता था। आज भी मांगलिक कार्यों में आम्र वृक्ष के पत्तों का उपयोग होता है। भीत पर वृक्ष को चित्रित करना शुभ माना जाता है।

प्राचीन काल में हमारे देश की सभ्यता में बागों का महत्त्वपूर्ण स्थान था। बौद्ध धर्म के अनुयायी तो स्वभावतः ही निसर्ग के कोमल और मृदु अंग की ओर आकर्षित हुये। बौद्ध विहारों या चैत्यों में सुरभित लताओं तथा फल-वृक्षों की सुरक्षा या देख-रेख में काफी समय और परिश्रम लगाया जाता था। हिन्दू-नरेशों के उद्यानों में फूलों और वृक्षों का प्रतीकात्मक प्रयोग किया जाने लगा। उदाहरण स्वरूप, हल्के लाल रंग का कमल जागृति का और श्वेत कमल निधन

का प्रतीक माना गया। उद्यान के बीचो-बीच एक ऊँचा स्थान बनाकर वहां से चारों दिशाओं में नहरें निकाली गईं। इस व्यवस्था का संकेत सुमेरु पर्वत और अमृत की नदियों की ओर था। मुगलों ने इनमें से कुछ रूपकों को अपने बाग़ों में सम्मिलित कर लिया। कुछ औरों को उन्होंने फ़ारस से लिया। जिन मुग़ल बाग़ों को आठ हिस्सों में विभाजित किया जा सकता है, उनका हर भाग स्वर्ग के एक भाग का प्रतीक है। कहीं-कहीं बाग़ में सात सीढ़ियां बनाई गई हैं। उनका संकेत नभोमंडल के सात ग्रहों की ओर है। प्रेम गाथाओं से लिये गये प्रतीक तो प्रसिद्ध ही हैं। एक छोटे से टीले पर गुलाब का पेड़ ऊँट पर बैठी हुई लैला का प्रतीक है, कवियों ने आंखों की तुलना नर्गिस से, अधरों की गुलाब से और कपोलों की ट्यूलिप या कालाज़ार से की है। मुग़ल बाग़ों में इन सुन्दर फूलों को ऐसी ही काव्यमय प्रेरणा से लगाया जाता था।

मुग़ल काल में उद्यान-कला की प्रगति का एक मुख्य कारण यह था कि बादशाह स्वयं उससे दिलचस्पी लेता था। बाबर ने अपने 'आत्मचरित्र' में कई जगह बाग़ों की सजावट के विविध प्रश्नों की चर्चा की है। अकबर जीवन भर जटिल राजनीतिक समस्याओं में उलझे रहने पर भी व्यक्तिगत रूप से उद्यानों की रचना का निर्देशन करता रहा।*

पादप को हृदयहीन कहना उचित नहीं है। यह बड़ा भावुक और सरस होता है। कवियों ने इसकी सरसता के विषय में बहुत कुछ लिखा है। वृक्ष की सौन्दर्य-प्रियता काव्य-शास्त्र में विशेष रूप से निर्दिष्ट है। सुन्दरियों के पदाघात से अशोक का फूल उठना—बताना है कि यह कितना भावुक और सहृदय है। सुन्दर कामिनी का संस्पर्श जड़-चेतन को उल्लसित कर देता है। कर्णिकार वृक्ष युवती के नृत्य को देखकर फूल उठता है। नृत्यकला का यह प्रभाव अलौकिक है, विटपी की यह सरागता भी उल्लेखनीय है।

तिलक वृक्ष सुन्दरी के मधुमय अवलोकन से कुसमित हो जाता है। रमणी के मृदुहास से चम्पा पुलकित होकर पुष्पित होती है। सुन्दरी की प्रेम-वाणी से मन्दार का पुष्पित होना प्रसिद्ध है। मौलसिरी का वृक्ष कामिनी की मुख-मदिरा

---

*मुग़लों के बाग़—श्री विश्वनाथ नरवाने (प्रसारिका, जनवरी—मार्च १९५६)

से सिंचन पाकर पुष्पित हो जाता है कहा जाता है कि आम का वृक्ष युवती के मुंह की सुरभित हवा से प्रमत्त होकर फूल उठता है।*

इस प्रकार वृक्ष की रसमयता, कोमलता, आर्द्रता एवं सौन्दर्य-प्रियता कवि-कल्पित होने पर भी उपेक्षणीय नहीं है।

तरु ने अपने तन की तनिक भी चिन्ता न करके अपने को मिटाया और बड़े-बड़े प्रासादों को जीवन दिया। नाव बनकर तीव्रगामी जल-धारा को सुस्थिर किया। वायुयान की आकृति में यही वृक्ष आकाशगामी बना। अनेक यंत्रों का संचालन यही महीरुह (वृक्ष) कर रहा है। विज्ञान की सफलता में इसका योग महान् है। वैज्ञानिकों का मत है कि ये वृक्ष ही वर्षा के साधन हैं। मेघों की श्यामलता पादपों की हरियाली पर आकर्षित होती है। पेड़ों को नष्ट करके आज हम अवर्षण के सन्ताप से पीड़ित हैं। वन, प्रकृति की एक ऐसी देन है, जिन पर प्राणिमात्र का जीवन निर्भर है। प्रत्यक्षरूप में उनसे काष्ठ, ईंधन घास तथा अन्य उपज उपलब्ध होती है।.........अतिरिक्त बनोपज--जैसे इमारती लकड़ी, बांस, लाख, हर्रा आदि बेचकर राष्ट्र-निर्माण के कार्यों के लिए धन-राशि प्राप्त की जा सकती है तथा वन-कार्यों और वन-उद्योगों से जनता को जीविकोपार्जन की सुविधा प्राप्त होती है। परोक्षरूप में वन, जलवायु को समशीतोष्ण बनाये रखने में सहायक होते हैं तथा वन की तल-भूमि वर्षा के पानी को सोखकर धरती में पहुँचाती है, जिससे बाढ़ का प्रकोप या भू-क्षरण नहीं होने पाता और नदी-नाले सतत प्रवाहित बने रहते हैं कृषि-भूमि में अधिक समय तक आर्द्रता रहने के कारण शस्योत्पादन भी अधिक होता है। वन-बिहार स्वास्थ्यकर होता है और वन-श्री की शोभा मनोहारी तथा स्फूर्तिदायिनी।

मनुष्य की सृष्टि गहन वनों में ही हुई थी। असभ्य अवस्था में बस अपना उदर-पोषण वनों में उपलब्ध कन्द-मूल, फल-फूल तथा अन्य प्राणियों के मास पर ही कर लेता था और कन्दराओं में रहा करता था। समय पाकर जब उसकी बुद्धि विकसित हुई तो उसका ध्यान शीत-आतप तथा हिंस्र प्राणियों से अपने बचाव अपनी भूख-प्यास मिटाने के कष्टों को कम करने पर गया। उसने पशु पालना

---

*हिन्दी साहित्य की भूमिका—(कवि--प्रसिद्धियां) लेखक—आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी।

प्रारंभ किया और उनके तथा अपने रहने के लिए वनों से लकड़ी, वक्कल, घास आदि एकत्र कर आश्रम बनाये। इस प्रकार गोत्रों अर्थात गौओं के त्राताओं के रूप में समाज-संगठन प्रारंभ हुआ। कालान्तर में हमारे किसी प्रतिभावान पूर्वज ने चुने हुए घासों का बीज बोकर धान्योत्पादन किया। इस प्रकार कृषि का आविष्कार हुआ।* काष्ठ की उपयोगिता अनेक रूपों में सिद्ध की जा रही है। मानव, अपने जन्म से लेकर मृत्यु तक लकड़ी के उपयोग से दूर नहीं हो सकता. महान औद्योगिक क्रान्ति का मूल-कारण ईंधन है। कुछ विद्वानों का कथन है कि काष्ठ युग इस धरती पर हमेशा रहेगा। शस्त्र और शास्त्र का अस्तित्व काष्ठ पर ही अवलंबित है। कृषि के उत्पादन में काष्ठ चिरकाल से उपयोगी सिद्ध हो रहा है। खेती के प्रमुख साधनों का निर्माण काष्ठ से ही होता है। हमारे गृहों की शोभा-सामग्री काष्ठ से ही निर्मित है। भगवान के मन्दिरों में, ऋषियों के आश्रमों में महापुरुषों की समाधियों में एवं वीर-पुरुषों की अमर गाथाओं के विजय-स्तूपों में काष्ठ अपना महत्त्व दिखाता आ रहा है और भविष्य में भी दिखायेगा।

निम्नस्थ पंक्तियों में काष्ठ की उपयोगिता पर व्यापक दृष्टि से विचार किया गया है। काष्ठ की महत्ता ही वृक्ष की गरिमा है और काष्ठ की प्रशस्ति वास्तव में वृक्ष की महिमा है।

वृक्ष-पूजा का महत्व सर्वत्र माना गया है। भारतीय जनता अनेक व्रतों के सम्पादन में पादप-पूजन को मान्यता देती है। 'वट-सावित्री' व्रत को करनेवाली माताएँ वट वृक्ष की पूजा करती हैं। आँवले के पेड़ की भी पूजा कई अवसरों पर होती है। तुलसी के बिरवा की पवित्रता सर्वमान्य है। वैष्णव स्नान करने के बाद ही तुलसी के पत्रों को तोड़ते हैं। इस कार्य के लिए निम्नस्थ श्लोक का उच्चारण आवश्यक बताया गया है:—

> 'तुलस्यमृतजन्माऽसि सदा त्वं केशवप्रिये।
> केशवार्थे चिनोमि त्वां वरदा भव शोभने।
> त्वदंग संभवैः पत्रैः पूजयामि यथा हरिम्।
> तथा कुरु पवित्राङ्गि कलौ मलविनाशिनि।

आह्निक सूत्रावली—पृष्ठ १२७

*वन और जनहित., ले० श्री कामता प्रसाद सागरीय, मुख्य वनसंरक्षक. मध्य प्रदेश (वन-श्री अगस्त ५७)।

—हे विष्णु भगवान की प्यारी, तुलसी, तेरा जन्म अमृत से है। हे संसार की शोभा! मैं तेरी पत्तियों को विष्णु की पूजा के लिए तोड़ रहा हूँ। मैं तुम्हारी पत्तियों से भगवान् विष्णु की पूजा करता हूँ। हे शुद्ध शरीर वाली एवं कलिकाल में पाप का विनाश करनेवाली तुलसी, तुम मुझे पवित्र करो।

कुछ वृक्ष ऐसे हैं जो स्वयं भगवान् का रूप हैं, और इनकी पूजा ही भगवान् की पूजा मानी जाती है। इस प्रकार के वृक्ष भक्तों को वरदान देते हैं और उनकी मनोकामना भी पूरी करते हैं, धार्मिक साहित्य से प्रकट है कि अनेक पेड़ों में देवी-देवताओं का निवास है। भगवान् कृष्ण ने स्वयं कहा है कि मैं पीपल के पेड़ में निवास करता हूँ। * महालक्ष्मी आँवले के वृक्ष में रहती हैं। नीम का पादप माता दुर्गा के निवास से पवित्र है। पीपल एक महान् पवित्र वृक्ष है। इसके मूल में सृष्टिकर्त्ता भगवान् ब्रह्मा का, तने में पालनकर्त्ता विष्णु का, तथा शाखाओं में संहारकर्त्ता एकादश रुद्रों का निवास बताया जाता है।········शनिदेव की कुदृष्टि को शान्त करने के लिए पीपल की आराधना मान्य है।+

वैरिवल्य ऋषि के मतानुसार अश्वत्थ वृक्ष स्वयं भगवान् विष्णु का एक रूप है। अनेक स्थानों पर आज भी इस वृक्ष का यज्ञोपवीत संस्कार होता है; और तुलसी के पौधे के साथ इसका विवाह-संस्कार-समारोह आयोजित किया जाता है। इसकी सूखी टहनियों से आज भी यज्ञ-हवनाग्नि प्रज्वलित की जाती है।

वनों में निवास करने वाले आदिवासियों की दृष्टि में वृक्षों का अत्यधिक महत्त्व है। ये विवाह-कार्य के पूर्व बाँस का पूजन करते हैं और आम के वृक्ष की आराधना करके अपने पुण्य-कार्य की सफलता मनाते हैं। आदिवासी पीपल के पेड़ को काटना ब्रह्म-हत्या के समान निन्दनीय मानते हैं। अपने घर के लिए जब वे पेड़ अथवा पेड़ की शाखा काटते हैं, तब उसमें निवास करनेवाले देवता से इस प्रकार क्षमा-याचना करके अपने को दोष-मुक्त कर लेते हैं—

*अश्वत्थः सर्व वृक्षाणां देवर्षीणां च नारदः।
गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः।
—श्रीमद्भगवद्गीता, अध्याय १०, श्लोक २६

+वृक्षों में देवत्व की प्रतिष्ठा-ले० पं० रामप्रताप जी शास्त्री—(योजना, फरवरी ५७, पृष्ठ २१)

I wish to cut wood O Spirit ! dwelling in this place, please remove thyself, I shall cut down this tree to make a post for my house. Please do not blame me O spirit !

—हे वृक्ष में निवास करने वाले देवता ! मुझे क्षमा करो। अपने मकान के लिए मैं एक खम्भा बनाना चाहता हूँ, इसलिए पेड़ को काट रहा हूँ। इस पेड़ से हट जाओ। हे देव ! मुझे दोष मत देना।

कुछ प्रदेशों के आदिवासी पुत्र-प्राप्ति के लिए भी वृक्ष-पूजन करते हैं।+

छोटा नागपुर के आदिवासी साल वृक्ष की पूजा आराध्य देव के समान करते हैं। करमा नृत्य करने वाली जातियाँ करमा पेड़ को प्राचीन समय से पूजती आरही हैं।

संसार को वृक्ष रूप में मानते हुए भगवान् कृष्ण ने अर्जुन से कहा था—

ऊर्ध्वमूलमधःशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।
छंदांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्।

—हे अर्जुन ! आदि पुरुष परमेश्वर रूप, मूलवाले और ब्रह्मा रूप मुख्य शाखावाले जिस संसार रूप पीपल के वृक्ष को अविनाशी कहते हैं तथा जिसके वेद पत्ते कहे गये हैं, उस संसार रूप वृक्ष को, जो पुरुष मूल सहित तत्त्व से जानता है, वह वेद के तात्पर्य को जानने वाला है।

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा,
गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः।
अधश्च मूलान्यनु संततानि,
कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके।

—हे अर्जुन ! उस संसार-वृक्ष की तीनों गुण रूप जल के द्वारा बढ़ी हुई एवं विषय भोग रूप कोंपलोंवाली देव, मनुष्य, और तिर्यक आदि योनि रूप शाखाएँ नीचे और ऊपर सर्वत्र फैली हुई हैं तथा मनुष्य योनि में कर्मों के अनुसार

+विशेष अध्ययन के लिए देखिए। Aftermath A Supplement to the Golden Bough, by Sir James George Frazer. p. 126. chapter VI (Worship of trees).

बांधनेवाली अहंता, ममता और वासना रूप जड़ें भी नीचे और ऊपर सभी लोकों में व्याप्त हो रही हैं।*

भगवान् रामचन्द्र जी की दानशीलता की प्रशंसा करते हुए गोस्वामी तुलसीदास ने एक अलौकिक कल्पवृक्ष की कल्पना की थी और उससे भी बढ़कर श्री राम के वरद हस्त को सिद्ध किया था।

कनक-कुधर केदार, बीज सुंदर सुरमुनि वर।
सींचि कामधुक-धेनु, सुधामय पय विसुद्धतर।
तीरथ पति अंकुर-सरूप, जच्छेस रच्छ तेहि।
मरकत-मय साखा-सुपत्र, मंजरि सुलच्छि जेहि।
कैवल्य सकल फल कल्पतरु, सुभ सुभाव सब सुख बरिस।
कह तुलसिदास रघुबंसमनि तौ कि होहि तुव कर सरिस।

—कवितावली, उत्तरकांड

—सुमेरु पर्वतरूपी क्यारी में चिन्तामणि रूपी श्रेष्ठ बीज बोया जाय; फिर उसे कामधेनु के अत्यन्त शुद्ध अमृत मय दूध से सींचे; तीर्थराज प्रयाग उसके अंकुर-स्वरूप उत्पन्न हों; कुबेर उसकी रखवाली करते हों, पन्ना रत्न ही उसकी शाखा और पत्र हों और लक्ष्मी ही उसकी सुन्दर मंजरी हों; ऐसा सुन्दर स्वभाव-वाला, सब सुख को बरसाने वाला, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष आदि सब फलों का देनेवाला जब कोई कल्पवृक्ष हो, तब भी (तुलसीदास कहते हैं कि) हे राम-चन्द्र जी, क्या वह दान देने में आपके हाथ की बराबरी कर सकता है? (अर्थात् नहीं)।

—टीकाकार-श्री लाला भगवानदीन

वृक्ष की महिमा के वर्णन में पुष्पों का प्रमुख स्थान हैं। सौरभ के पुंज ये ललित पुष्प विश्व को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। भगवान् इन्हें प्राप्त कर भक्त की प्रार्थना को स्वीकार करते हैं। विविध रंगों से रंजित ये सुन्दरता के अनुपम प्रतीक पुष्प जहाँ खिलते हैं वहीं मंगल बिखेर देते हैं। इनकी सुरभि बड़ी मन मोहक होती। उद्यान की शोभा पुष्पों से ही है। वृक्ष के जीवन की सार्थकता

---

* श्रीमद्भगवद्गीता—अध्याय १५

में ये ही प्रमाण हैं। पवन पुष्पों से पराग लेकर अपने को भाग्यशाली मानता है। पशु-पक्षी इनकी भीनी-भीनी सुगंध से प्रमुदित हो जाते हैं। वसन्त की मादकता इन पर ही आधारित है। पुष्प न हों तो वसन्त का जन्म न हो। संसार आकर्षण-हीन बनजाय और भगवान् की सृष्टि असुन्दर लगने लगे। मानव अपने उल्लास को प्रकट करने के लिए पुष्पों की वर्षा करता है; अपनी साधना को पूर्ण करने के लिए अपने आराधय के चरणों में पुष्प चढ़ता है। देव गण भगवान् की समृद्धि देखकर आकाश से पुष्प-वर्षा किया करते थे। आज भी हम अपने पूज्य की समाधि पर फूल चढ़ाकर भक्ति-भाव को साकार बनाते हैं। ये ही पुष्प स्वयं को मटाकर मधुर फलों को जन्म देते हैं, जिनको पाकर भगवान् भी प्रसन्न होते हैं। और मानव भी अपने भाग्य को सराहता है। झूमते हुए फूल को देखकर कौन नहीं झूमने लगता है?' इसके सुन्दर रूप पर कौन नहीं विमुग्ध हुआ? प्रेमी अपनी प्रेमिका को पुष्पों के समर्पण से प्रसन्न करता है। फूल की जीवन-गाथा से हमने बहुत कुछ सीखा है और सीखते रहेंगे। गिरते हुए फूल की आहें बताती हैं कि एक दिन सबको गिरकर मिट्टी में मिलना है। खिलने के पूर्व सूख जाने वाले फूल को देखकर भावुक हृदय सदा रोता रहा है। धार्मिक सिद्धान्तों का निरूपण करते समय आचार्यों ने फूलों को अपनाया है।

—o—

नीचें इन शेरों में गुलों के सुन्दर चित्र हैं।

इस गुलशने-हस्ती[1] में, अजब सैर है लेकिन।
जब आँख खुली गुल[2] की तो मौसम है ख़िज़ाँ[3] का।

* * *

फूल वही, चमन वही, फ़र्क़ नज़र-नज़र का है।
अहदे[4] बहार में था क्या, दोरे ख़िज़ाँ में क्या नहीं!

—जिगर

१ अस्तित्वरूपी बग़ीचा, २ फूल, ३ पतझड़
४ वसन्त-काल

फलों की झोलियों में हैं मोती भरे ए।
शबनम[५] लुटा रही है, ख़जाना बहार का।

*　　　*　　　*

नाज़ है गुल को नज़ाक़त[६] पै चमन में ऐ ज़ौक।
उसने देखे ही नहीं नाज़ो-नज़ाक़त[७] वाले।—ज़ौक़

—देखिए उर्दू शायरी

—०—

कविवर सेनापति लाल टेसू के फूलों में अग्नि-ज्वाला की कल्पना कर रहे हैं:—

लाल लाल टेसू फूलि रहे हैं विलास संग,
श्याम रंगमई मानो मसि में मिलाये हैं।
तहाँ मधुकाज आइ बैठे मधुकर पुंज,
मलय पवन उपवन वन धाये हैं।
'सेनापति' माधव महीना में पलास तरु,
देखि-देखि भाव कविता के मन आये हैं।
आधे अन-सुलगि सुलगि रहे आधे मानों,
विरही दहन काम क्वैला परचाये हैं।

\+　　　\+　　　\+

नायिक की ठोढ़ी में गोदने की काली बिन्दी देखकर रसिक विहारी ने गुलाब के फूल पर बैठे हुए भ्रमर का काल्पनिक चित्र खींचा था:—

ललित स्यामलीला ललन, चढ़ी चिबुक छबि दून।
मधु छाक्यो मधुकर पर्यो, मनो गुलाब प्रसून।

५ओस ६कोमलता ७नख़रा

श्री मत्पराशराचार्य ने वृक्षारोपण के महत्त्व को निम्नस्थ श्लोकों में बताया है:—

अश्वत्थमेकं पिचुमन्दमेकं न्यग्रोधमेकं दशचिञ्चिणीभि: ।
षट् चम्पकांस्ताल शतत्रयं च नवाम्र वृक्षैर्नरकं न पश्येत् ।।१।।
यावन्ति खादन्ति फलानि वृक्षात्क्षुद्वह्निदग्धास्तनुभृन्नराद्याः ।
वर्षाणि तावन्ति वसन्ति नाके वृक्षैक वापास्त्वमरौघसेव्याः ।।२।।
यावन्ति पुष्पाणि महीरुहाणां, दिवौकसां मूर्धनि भूतलेवा ।
पतन्ति तावन्ति च वत्सराणां, शतानि नाके रमतेऽग्रवापी ।।३।।
यत्काल पक्वैर्मधुरैरजस्रं शाखाच्युतैः स्वादुफलैः खगौघाः ।
सत्वानि सर्वाण्यपि तर्पयन्ति, तच्छ्राद्धदानं मुनयो वदन्ति ।।४।।

—एक पीपल, एक नीम, एक वट, दश इमली, छह चंपक, तीन सौ ताल वृक्ष, नौ आम वृक्ष लगाने वाला पुरुष नरकगामी नहीं होता ॥ १ ॥ क्षुधारूप अग्नि से दग्ध मनुष्य पक्षी आदि प्राणी वृक्षों से लेकर जितने फल खाते हैं उतने वर्ष वृक्ष लगाने वाला पुरुष देवतागणों से सेव्यमान स्वर्ग में बास करता है ॥ २ ॥

पुण्यात्मा मनुष्य के लगाये हुए बगीचे के जितने फूल देवताओं के मस्तक पर चढ़ाये जाते हैं, या पृथ्वी पर गिरते हैं उतने शत वर्ष तक वह वृक्ष लगाने वाला स्वर्ग में रमण करता है॥ ३ ॥

जिस मनुष्य के बाग के वृक्ष की डालियों से गिरे हुए पक्के और मीठे स्वादिष्ट फलों से पक्षियों के झुण्ड के झुण्ड तथा सब तरह के प्राणी तृप्त होते हैं इसे मुनि लोग श्राद्ध दान के समान कहते हैं ॥ ४ ॥

—बृहत्पाराशरी ३६४

श्री शुक्राचार्य ने राज्य की तुलना वृक्ष के रूप में की है और बताया है कि इसके विविध अंग पादप के मूल, शाखा, पत्ते बीज आदि के तुल्य हैं:—

सद्यः केचिच्चकालेन सेनयाद्याः पतिं विना ।
राज्यवृक्षस्य नृपतिर्मूलं स्कंधाश्च मंत्रिणः । १
शाखाः सेनाधिपाः सेनाः पल्लवाः कुसुमानि च ।
प्रजाः फलानि भू भागा बीजं भूमिः प्रकल्पिता । २

—इसी प्रकार सेनापति आदि संपूर्ण कोई शीघ्र और कोई समय पाकर राजा के बिना सूख जाते हैं। राज्य रूपी वृक्ष का मूल राजा होता है और मंत्री स्कंध (डाल) होते हैं। सेना अधिप शाखा, सेना पत्ते, प्रजा फूल, और पृथ्वी के भाग फल एवं भूमि बीज होती है।+

जैसा कि पूर्व में संकेत किया जा चुका है, उद्यान लगाने की परिपाटी अति प्राचीन है। समाज में पेड़ लगाने की विशेष रुचि थी। द्रुमों की अधिकता से वर्षा पर्याप्त मात्रा में हुआ करती थी और पृथ्वी शस्य-श्यामला हो कर सबको अन्न देती थी। शुक्र-नीति के पाठक यह जानते हैं शुक्राचार्य ने तरु के लगाने, और इसके संरक्षण के संबंध में बहुत कुछ लिखा है। किन विटपियों को ग्राम के भीतर और किन वृक्षों को ग्राम के बाहर लगाया जाय, इस विषय में अपने विचार प्रकट करते हुए आचार्य-प्रवर ने ग्राम-वृक्ष और वन-वृक्ष के अन्तर को भी स्पष्ट किया है। प्राचीन काल के नराधिप वृक्ष-संरक्षण के प्रति विशेष जागरूक थे।

उत्तमान्विंशति करैर्मध्यमांस्तिथिहस्ततः।
सामान्यान्दश हस्तैश्च कनिष्ठान्पंचभिः करैः।

—बहुत बड़े उत्तम-उत्तम वृक्षों को बीस हाथ के, मध्यम वृक्षों को पन्द्रह हाथ के, सामान्य वृक्षों को दस हाथ के, और छोटे-छोटे वृक्षों को पांच हाथ के अन्तर पर लगवाये।

अजाविगोशकृद्भिर्वा जलैर्मांसैश्च पोषयेत्।
उदुंबराश्वत्थवट चिंचाचंदनजंभलाः।

—और उनको बकरी, भेड़, और गौ के गोबर से तथा जल एवं मांस से पुष्ट करावे। गूलर, पीपल-वट-इमली-चंदन-जंभल और—

कदंवाशोक वकुल विल्वाम्रातक पित्थकाः।
राजादनाम्र पुन्नाग तुदकाष्ठाम्र चंपकाः।

—कदंब, अशोक, बकुल, बेल, आम्रातक, कैथा, राजादनाम्र, पुन्नाग, तुद-काष्ठ, आम्र, चम्पा और······

+शुक्रनीति —पृष्ठ २२५

नीप, कोकाम्रसरलदाडिमाक्षोटभिःसटाः।
शिशिया शिशुबदर निंबजंभीरक्षीरिकाः।
खर्जूर देवकर जफल्गु तापिच्छ सिंभलाः।
कुद्दालोल वली धात्री कुमकोमातुलुंगकः।
लकुचो नारि केलश्चरंभान्येसत्फलाद्रुमाः।
सपुष्पाश्चैव ये वृक्षा ग्रामाभ्यर्णे नियोजयेत्।

नीप कोकाम्र, सरल, अनार, अखरोट, भिस्सट, शीशम, शिशु, बेरी, निंब, जंभीरी, क्षीरिक, खजूर, देवफरंज, फल्गु, तापिच्छ, सेंभल, कुद्दाल, लवली, आँवला, कुमक, सिपारी, बहेड़ा, नारियल, एवं केला, और जो अच्छे फलवाले वृक्ष हैं अथवा अच्छे पुष्प वाले पादप हैं—इन सबको ग्राम के समीप लगवावे।

ये च कंटकिनो वृक्षाः खदिराद्यास्तथा परे।
आरण्य कास्ते विज्ञेयास्तेषां तत्र नियोजनम्॥

—जो काँटे वाले और खदिर आदि वृक्ष हैं उनको वन में लगवावे।

—शुक्रनीति पृ० १४२।

वृक्ष राष्ट्र की निधि है। पूर्व काल में इनके विनाशक अथवा अपहर्त्ता को कठोर दण्ड दिया जाता था। फले हुए तरु को काटना शासन की दृष्टि में विशेष अपराध था और नियमानुसार अपराधी न्यायालय द्वारा समुचित रूप से दंडित होता था। *

हमारे ऋषियों ने फलवाले पादपों एवं लताओं को काटने और छेदने से उत्पन्न दोष की शान्ति के लिए गायत्री मंत्र जपने की आज्ञा दी है।

(फलदानां तु वृक्षाणां छेदने जप्यमृक्छतभ्……)

आयुर्वेद ने वृक्षों एवं पुष्पों की उपयोगिता तथा रोग-विनाशक शक्ति के सम्बन्ध में बहुत कुछ विचार किया है। हजारों औषधियों तथा रसों का निर्माण विविध पेड़ों की छाल, पल्लव, फूल, जड़ आदि से ही होता है। आज भी ग्रामों तथा वनों में रहनेवाले निर्धन मानव वृक्षों तथा जड़ी-बूटियों के द्वारा अनेक रोगों का शमन करते रहते हैं।

---

* वनस्पतीनां सर्वेषामुपभोगं यथा यथा।
तथा तथा दमः कार्यो हिंसायामिति धारणा। —मनुस्मृति पृष्ठ ३९६।

मानव-जीवन में पेड़ों और पुष्पों की उपयोगिता निर्विवाद है। +

आज हमें इस राष्ट्रीय वैभव (पेड़) की सजग होकर रक्षा करनी चाहिए।

वृक्षों की सुन्दरता से वन की प्रशंसा करते हुए भगवान् बुद्ध ने अपने शिष्यों से एक बार कहा था:—

वन एक विलक्षण जीव-निकाय है, जिसमें असीम दया और सहिष्णुता भरी हुई है। वह अपने पोषण के लिए किसी से कुछ नहीं माँगता, उसका हृदय इतना विशाल है कि वह अपने निजी जीवन के फल को बड़ी उदारता के साथ सब लोगों को अर्पण करता रहता है। वह सब जीवों की रक्षा करता है—यहाँ तक कि उस लकड़ी काटने वाले को भी अपनी छाया से विश्राम देता है, जो उसे सदा नष्ट करता है।

हमारे पूज्य राष्ट्रपति के शब्दों में एक समय सघन वन हमारे लिए गर्व की वस्तु थे। इन्होंने केवल सत्यान्वेषकों को ही आदर्श आश्रय प्रदान नहीं किया था, अपितु समय पर पर्याप्त वर्षा देकर कृषि-विषयक समृद्धि को भी बढ़ाया था।

+ विशेष अध्ययन के लिए देखिए 'बिरवा की छैयाँ" नामक मेरा निबंध, मोरी धरती मैया, पृष्ठ ५०) तथा अमवा की छैयाँ।

Our thickly wooded forest were at one time a pride and an envy for our land; not only did they provide an ideal sanctuary to seakers after truth, but being instrumental in ensuring ample and timely rain fall, they made a mighty contribution to our agricultural property. (*World festival of trees p. 50*)

सन् १९४७ में पुराने किले में औपचारिक रूप से पेड़ लगाते समय प्रधान मंत्री जवाहर लाल जी ने कहा था—

"मेरी राय में पेड़ काटने के सम्बन्ध में एक ऐसा कानून होना चाहिए कि कोई भी जब किसी पुराने पेड़ को काटे, उसे एक नया पेड़ लगाने पर बाध्य किया जावे। बढ़ता हुआ पेड़ प्रगतिशील राष्ट्र का प्रतीक है।"

—वन श्री-अगस्त १९५७ पृष्ठ १९

भारत के खाद्य, वन एवं कृषि-मंत्री के रूप में श्री कन्हैयालाल मुंशी ने दिल्ली की जनता के सामने भाषण देते हुए बताया था—

"वैज्ञानिक कहेंगे कि मानव पृथ्वी पर कानन की हरी-भरी वैभवशालिता को नष्ट करके जीवित नहीं कर सकता। लेकिन मानव जाति सामूहिक रूप से आत्म हत्या करती आ रही है, क्योंकि यह वृक्षों की भयंकर शत्रु है। लोभ वश इसने निर्भयता से पेड़ों को काटा और जलाया। हमने अपने देश में वनों को रेगिस्तान में परिणत कर दिया है और आज हम इसीलिए अकाल से पीड़ित हैं।

Addressing the citizens of Delhi, Shri Munshi said : "Scientists will tell you that man cannot exist on earth but for the green glory of the forest. But the race of man has been committing collective suicide, for it is the worst enemy of the trees, cutting and burning them greedily and recklessly. In our country, we have turned forests into deserts and we are facing famine today."

(*World festival of trees P. 51*)

नमो वृक्षेभ्यो

वनिजो भवन्तु शं नो

ऋग्वेद ७. ३५. ५

—वृक्ष हमारे लिये शान्ति-कारक हों ।

\+ + +

उच्छ्र्यस्व वनस्पते वर्ष्मन पृथिव्या अधि ।
सुमती मीयमानो वर्चो धा यज्ञवाहसे ।।

—वनस्पति ! तुम पृथ्वी के उत्तम यज्ञ-प्रदेश में उन्नत होओ । तुम सुन्दर परिणाम से युक्त हो । यज्ञ-निर्वाह के लिए अन्न-दान करो ।

—ऋग्वेद संहिता, तृतीय अष्टक पृष्ठ ४ ।

अञ्जन्ति त्वामध्वरे, देवयन्तो वनस्पते मधुना दैव्येन ।
यदूर्ध्वस्तिष्ठा द्रविणेह धत्ताद्यद्वा क्षयो मातुरस्या उपस्थे ।

—वनस्पति देव ! देवों के अभिलाषी अध्वर्यु लोग देव-संबंधी मधु द्वारा तुम्हें सिक्त करते हैं । तुम चाहे उन्नत भाव से रहो अथवा मातृ-भूत पृथ्वी की गोद में शयन करो, हमें धन दो ।

—ऋग्वेद-संहिता, तृतीय अष्टक पृष्ठ ४ ।

उत स्म ते वनस्पते वातो वि वात्यग्रमित् ।
अथो इन्द्राय पातवे सुनु सोममुलू खल ॥

—हे सेवन करने योग्य फल, छाया और उत्तम रस के पालक महावृक्ष तेरे अग्र भाग तक वायु अर्थात् रस प्राप्त कराने वाला बल विविध प्रकारों से प्राप्त होता है । और हे ओखली के समान नाना अन्नों को उत्पन्न करने वाले पुरुष ! तू ऐश्वर्यवान् पुरुष के पान करने के लिए औषधि रस का सार भाग प्राप्त कर ।

—ऋग्वेद संहिता, पृष्ठ १२८ भाषा-भाष्य भाग १ ।

\+ \+ \+

परा ह यत्स्थिरं हथ नरो वर्तयथा गुरु ।
वि याथन वनिनः पृथिव्या व्याशाः पर्वतानाम् ॥

—हे वीर नायक पुरुषों ! जिस कारण वृक्ष के समान स्थिर शत्रु को भी प्रचण्ड वायु के समान आघात करके उखाड़ देते हो और पर्वत के समान भारी पदार्थ को भी पलट देते हो, उथल-पुथल कर देते हो, इस कारण तुम रश्मियों से युक्त प्रचण्ड वायु के समान तीव्र एवं वन के समान घना सेना संघ बनाकर चलने वाले आप सब पृथ्वी, समस्थल और पर्वतों के समान दिशाओं को विविध प्रकारों से पहुँचो और उन पर आक्रमण करो ।

—ऋ. स., भा. भा. प्र. भा. पृष्ठ २०२ ।

\+ \+ \+

मधु मान्नो वनस्पतिर्मधु माँ अस्तु सूर्यः ।
माध्वीर्गावो भवन्तु नः ॥

—वनस्पति हमारे लिए मधुर रस, फल और छाया से युक्त हो और सूर्य और शरीर गत प्राण हमारे लिए मधुर सुखदायी प्रकाश और बल देने वाला हो। हमारे गौ आदि पशु, और सूर्य की किरणें और वेद वाणियाँ और देहगत इन्द्रियाँ हमें क्रम से मधुर दुग्ध, घृत आदि रस, मधुर प्रकार से उत्पन्न होने वाले रोग नाशक प्रभावकारी, ज्ञान और सुख प्रदान करने वाले हों।

—ऋ. स. भा. भा. प्र. भा. पृष्ठ ४४४।

आ नस्तजं रयिं भरांशं न प्रति जानते।
वृक्षं पक्वं फलमङ्कीय, धूनुहीन्द्र सम्पारणं वसु ॥

—जिस प्रकार पिता या राजा व्यवहार जानने वाले बालिग पुत्र को जायदाद का भाग प्रदान करता है, उसी प्रकार हे इन्द्र ! राजन् ! तू हमें और हम में से तेरे कार्य करने की प्रतिज्ञा करने वाले को पालक ऐश्वर्य दान कर। टेढ़ा अंकुशाकार बांस लिये हुए मनुष्य जिस प्रकार वृक्ष को और पके पल को कंपा-कंपा कर झाड़ लेता है, उसी प्रकार हे शत्रुहन्ता ! तू भी ब्रश्चन करने योग्य--काट गिराने योग्य शत्रु को अपने बड़े भारी सैन्य-बल से कँपा डाल और परिपक्व फल, अतिप्रष्ट, परिणाम--धनैश्वर्य ले ले।

—ऋ० सं० भा० भा० तृ० भा० पृ० २२८।

वने न वायोन्यधायि चाकञ्छुचिर्वां, स्तोमो भुरणावजीगः।
यस्येदिन्द्रः पुरुदिनेषु होता नृणां नर्यो नृतभः क्षयावान् ॥

—वन अर्थात् वृक्ष पर जिस प्रकार पक्षियों का दल नाना फल चाहता हुआ अपने धारक पोषक पक्षों को संचालित करता है, उसी प्रकार शुद्ध जल, स्वच्छ आचारवान् धार्मिक वेग से जाने वाले, ज्ञान और रक्षा करने वाले जनों का उत्तम दल ऐश्वर्य की कामना करता हुआ सेवनीय राष्ट्र में स्थापित किया जावे।...... !

—ऋ० भा० भा०भा० षष्ठ खंड पृ० ५६६

प्रावेपा या वृहतो मादयन्ति प्रवातेजा इरिणे वर्वृतानाः।
सोमस्येव मौजवतस्य भक्षो विभी दशे जागृपिर्मस्य मच्छाण्।

—अक्ष कृषि प्रशंसा और अक्ष-कितब निन्दा। सूखे कूप में उत्पन्न होते हुए अथवा धन से रहित निर्धनता की दशा में ले जाने वाले नीचे देश में पैदा

हुए, खूब काँपने और काँपने वाले भयोत्पादक बड़े भारी वृक्ष के फल तुल्य जुए के पाँसे मुझे हर्षित करते हैं। यह बहेड़े के वृक्ष से उत्पन्न यह जुए का गोटा मुञ्ज-वान् पर्वत पर उत्पन्न सोम-औषधि लता के भक्षण योग्य रस के समान आस्वा-दन करने योग्य जीता-जागता मानो मुझे फुसलाता है।

—ऋ० भा० भा० भा० षष्ठ खं० पृ० ५९३

प्र मानुः प्रतरं गुह्यमिच्छन् कुमारो न वीरुधः सर्पदुर्वीः
ससं न पक्वमविदच्छुचन्तं रिरिह्वांसं रिप उपस्थे अंतः ।।

—छोटा बालक जिस प्रकार आंखों से ओझल माता के छिपे रूप को खूब चाहता हुआ अनेक लताओं की ओर जाता है, और माता को ढूंढ़ता है, और ढूंढकर माता की गोद में चढ़कर पके अन्न के समान अति उज्ज्वल दूध को पीता हुआ अपने को पाता है उसी प्रकार जीवात्मा रूप-रस-गंध आदि विषयों में क्रीड़ा-विहार करता हुआ—माता के सर्वोत्कृष्ट गर्भाशय को चाहता हुआ पहले अनेक लताओं को प्राप्त करता है (अर्थात भूमि पर विविध रूप से उगने वाली अनेक स्थावर योनियों को प्राप्त होता है)। —ऋ० भा० सप्तम् खंड पृष्ठ १२१

एते वदन्त्य विदन्नना मधु न्यूङ्खयन्ते अधि पक्व आमिषि।
वृक्षस्य शाखा मकणस्य वप्सतस्ते, सूभर्वा वृषभाः प्रेमराविपुः ।३।।

—वृक्ष के पके फल में जिस प्रकार रस आते हैं, वैसे ही उसकोमुख से बतलाते और उसको पाते हैं, इसी प्रकार ये विद्वान लोग वृक्ष रूप देह के आयुरूप फल का परिपाक होने पर अर्थात् आयु के बढ़ने पर मुख से वेद-ज्ञान का लाभ करते हैं और उसी का उपदेश करते हैं......

—ऋ० सं० सप्तम खंड पृष्ठ २००

यस्मिन् वृक्षे सुपलाशे देवैः संपिवते यमः
अत्रा नो विश्पतिः पिता पुराणं अनुवेनति।

—जिस उत्तम पत्तों से युक्त वृक्ष पर वा यतात्मा साधक सुखप्रद वा यतात्मा साधक, और ज्ञानप्रद इन्द्रियों से पूर्व के किये कर्मफलों का भोग करता है, उसी वृक्ष पर हमारा प्रजापति इन्द्रियादि का अधिष्ठाता, पूर्व भुक्त भोगों को पुनः भी चाहता है। वह वृक्ष यह देह या संसार है।

—ऋ० भा० सप्तम खंड पृ० ३२

(कुछ पूर्व पृष्ठों में उद्धृत मंत्र ऋग्वेद-संहिता—(भाषा-भाष्य, भाष्यकार श्री पंडित जयदेव जी शर्मा) के विविध-खंडों से लिये गए हैं। लेखक भाष्यकार के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता है।)

निम्नस्थ मंत्र ऋग्वेद-संहिता (टीकाकार पं० रामगोबिन्द, त्रिवेदी, वेदान्त-शास्त्री) के तृतीय अष्टक से साभार उदधृत किये गये हैं।

अभिव्ययस्व खदिरस्य सार मोजे धेहि स्पन्दने शिंशपायाम्।
अक्षवीलोवीलिन बीलयस्व मा यामादस्मादप जीहियो नः।

—हे इन्द्र, रथ के खदिर-काष्ठ के सार को दृढ़ करो। रथ के शीशम के काष्ठ को दृढ़ करो। हे हम लोगों के द्वारा दृढ़ीकृत अक्ष, तुम दृढ़ होओ। हमारे गमनशील उस रथ से हमें फेंक नहीं देना।

—(पृ. ८५)

वि यो ररप्श ऋषिभिर्नवेभिर्वृक्षो,
न पक्वः सृण्यो न जेता।
मर्यो न योषामभि मन्य मानोच्छा,
विर्वाक्म पुरुहूतमिन्द्रम्।

—पृष्ठ १६५

—जो पके फलवाले वृक्ष की तरह एवम् आयुध कुशल विजयी व्यक्ति की तरह हैं, जो नूतन ऋषियों द्वारा विविध प्रकार से स्तूयमान होते हैं; उन पुरुहूत इन्द्र के उद्देश्य से हम स्तुति करते हैं—जैसे स्त्री—अभिमानी मनुष्य स्त्री की प्रशंसा करता है।

—पृष्ठ १५९।

परशुं चिद्वितपति शिम्बलं चिद्विवृश्चति।
उखा चिदिन्द्र येषन्ती प्रयस्ता फेनमस्यति॥

—हे इन्द्र, जैसे कुठार को पाकर वृक्ष प्रतप्त होता है, वैसे ही हमारे शत्रु प्रतप्त हों। शाल्मली पुष्प जैसे अनायास ही वृन्त-च्युत हो जाता है, (डंठल से गिर जाता है) वैसे ही हमारे शत्रुओं के अवयव विच्छन्न हों·········।

—पृ० ८६।

आ यं विशन्तीन्दवो वयो न वृक्ष मन्धसः ।
विरप्शिन् वि मृधो जहि रक्षस्विनी ।

—जिस प्रकार नाना प्रकार के पक्षी वृक्ष का आश्रय लेते हैं, उसी प्रकार प्राण, जीवन शक्ति, विभूति, ऐश्वर्य, ज्योति आदि ब्रह्म के आश्रित हैं ।

सामवेद

मांदन्तस्ने वया यथा गोश्रीते
मधौ मदिरे विवक्षते ।
अभि त्वामिन्द्र नोनुमः ।

—जिस प्रकार पक्षी-गण वृक्ष का आश्रय लेकर (प्रमुदित हो) चह-चहाते हैं, उसी प्रकार गोरस से मिश्रित मधुर, आनन्दमय एवं मुक्ति-दायक तेरे स्वरूप के आश्रित होकर हम लोग तेरा स्तवन करते हैं ।

त्वमिमा ओषधीः सोम
विश्वास्त्वमपो अजनयस्त्वगा ।
त्वमाततनोरुर्वा अन्तरिक्षं त्वं
ज्योतिषा वि तमो ववर्थ ।

—हे परमात्मन्! तू समस्त औष-धियों, वनस्पतियों, रसों, गौ आदि पशुओं, भूमियों, को उत्पन्न करता है। तू ही सूर्य के प्रकाश से अन्धकार को मिटाता है ।
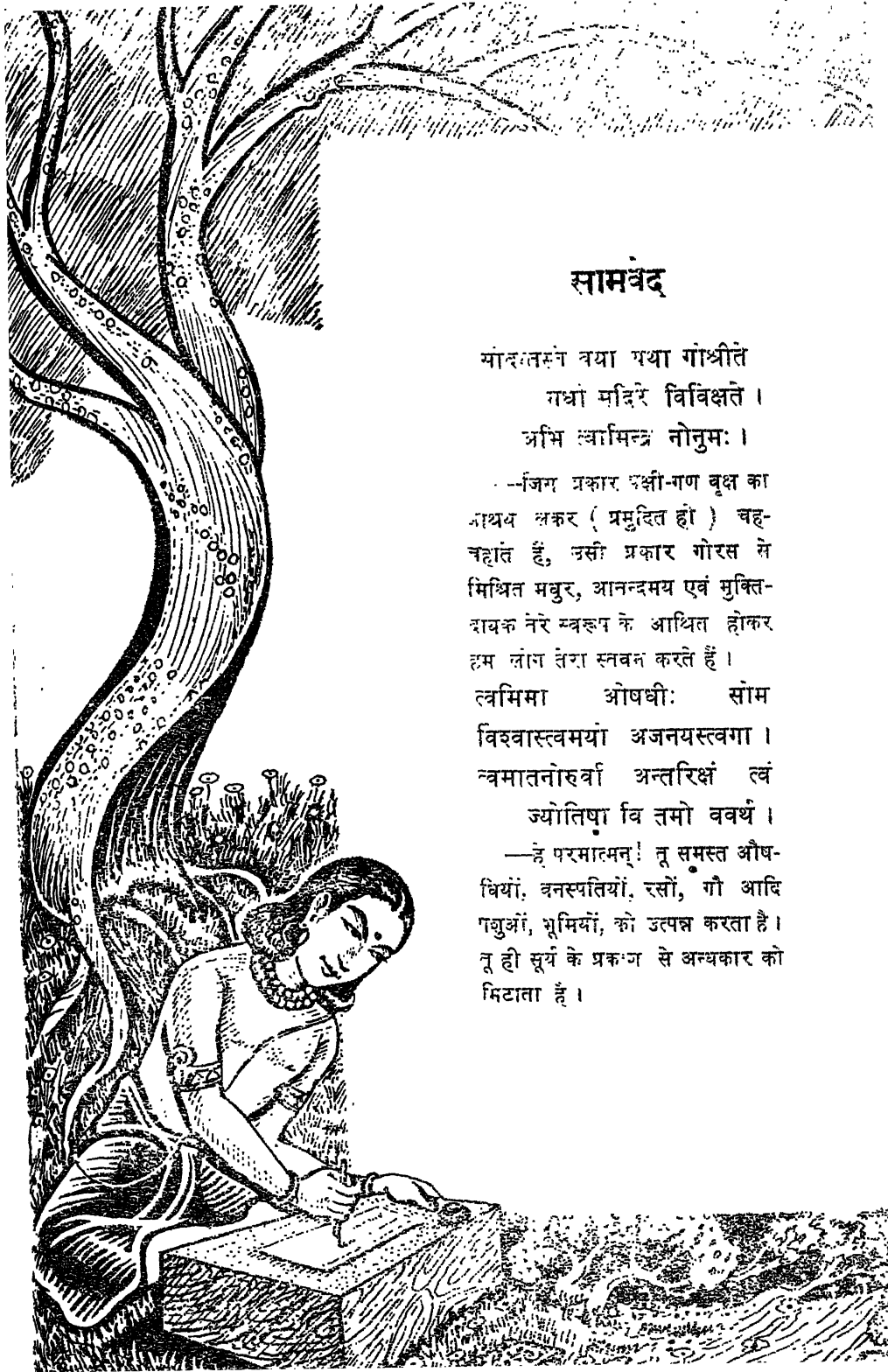
तव श्रियो वर्ष्यस्येव विद्युतोऽग्नेश्चिकित्र, उपसामिवेतयः ।
प्रदोषधीरभिसृष्टो वनानि च परि स्वयं चिनुषे अन्नमासनि ।

—हे परमेश्वर ! ज्ञान प्रकाशक ! तेरी विभूतियां मेघ की विद्युतों के समान या प्रभात काल में निकलती हुई किरणों के समान सर्वत्र जानी जाती हैं । मुख में अन्न के समान, समस्त औषधियों, वृक्षादि वनस्पतियों को तू अपने भीतर ले लेता है ।

उत न एना पवया पवस्वाधि श्रुते श्रवाय्यस्य तीर्थे ।
षष्टिं सहस्रा नैगुतो वसूनि वृक्षं न पक्वं धूनवद् रणाय ।

इस मंत्र में बताया गया है कि जिस प्रकार फल चाहने वाला व्यक्ति पके फलों से लदे वृक्ष को बल से हिलाता है । और सहस्रों फल नीचे आ टपकते हैं, उसी प्रकार अवर्णनीय, एवं अत्यन्त गुह्य ज्ञान ईश्वर से प्राप्त होते हैं आदि ।

एष देवो अमर्त्यः पर्णवीरिव दीयते ।
अभि द्रोणान्यासदम् ।

इस मंत्र में बताया गया है कि जिस प्रकार पत्तों से युक्त वृक्ष पर पक्षी निवास करता है, उसी प्रकार ईश्वर शरीरों में विराजता है ।

स हि पुरू चिदोजसा विरुक्मता दीद्यानो भवति,
द्रुहन्तरः परशुन द्रुहन्तरः ।
वीडु चिद् यस्य समृतौ श्रुवद् वनेव यत् स्थिरम् ।
निस्षष माणो यमते नायते धन्वासहानायते ।

इस मंत्र में बताया गया है कि एक विशेष तेज से युक्त वह अग्नि, वृक्षों को काटने वाली कुल्हाड़ी की तरह देह-बंधन को काट देती है आदि ।

तमोषधीर्दधिरे गर्भमृत्वियं तमापा अग्निं जनयन्त मातरः।
तमित् समानं वनिनश्च वीरुधोऽन्तर्वतीश्च सुवते च विश्वहा।

इस मंत्र में बताया गया है देदीप्यमान अग्नि को ओषधियाँ अपने भीतर रस-रूप से धारण करती हैं और उसी (अग्नि) को बड़े-बड़े वृक्ष, एवं लताएँ धारण करती हुई अपनी-अपनी वंश वृद्धि में प्रदत्त रहती हैं।

यहाँ पर वनस्पति एवं लताओं के दृष्टान्त से आत्मा की उत्पत्ति का वर्णन किया है।

---o---
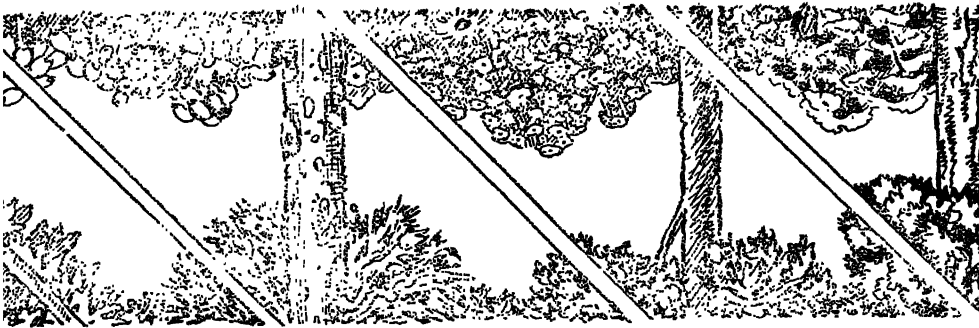
अथर्ववेद

यत्राश्वत्था न्यग्रोधा महावृक्षाः
शिखण्डिनः ।
तत् परे परेताप्सरसः प्रतिबुद्धा
अभूतन ।।४।।

—जहाँ पीपल, वट आदि महा-
वृक्ष और मोर आदि पक्षी या चूड़ा-
मणि या काकमाची के पौधे हैं, वहाँ
से इनके प्रभाव से हे प्रजाओं में फैलने
वाली व्याधियो ! दूर भाग जाओ
क्योंकि तुमको पहिचान लिया गया है ।

यत्र वः प्रेङ्खा हरिता अर्जुना उत
यत्राघाटाः कर्कर्यः संवदन्ति ।
तत् परेताप्सरसः प्रतिबुद्धा
अभूतन ।

—जहाँ तुम्हारे लिए हिलते-डुलते हरे अर्जुन वृक्ष हैं और जहाँ नगाड़े पीटे गये हैं वहाँ से व्याधियो ! भाग जाओ ।

× × ×

वनस्पतिः सह देवैर्न आगन् रक्षः पिशाचाँ अपबाधमानः ।

—महान् वृक्ष के समान सबको अपनी छाया में रखने वाला चक्रवर्ती राजा राक्षसों और पिशाचों को मार कर दूर भागता हुआ हमें प्राप्त हो।

त्वं वृषाक्षं मघवन्नम्रं नर्यो करो रजिम।
त्वं रौहिणं व्यास्यो वि वृत्रस्याभिनच्छिरः॥

—हे राजन्! हे नेताओं में कुशल! तू बलवान इन्द्रियों वाले राजस् भाव में लिप्त प्रबल शत्रु को भी नम्र करता है। और तू वट के समान दृढ़ मूलों पर स्थिर राजा को भी विविध उपायों से उखाड़ डालता है। और मेघ के समान फैलने और राष्ट्र को घेरने और शस्त्रास्त्रों की वर्षा करने वाले शत्रु के सिर को तोड़ डालता है।

दशवृक्ष! मुञ्चेमं रक्षसो ग्राह्या अधि यैनं जग्राह पर्वसु।
अथो एनं वनस्पते! जीवानां लोकमुन्नय॥

—हे दस वृक्ष! राक्षसी जकड़ने वाली गठिया (रोग) की पीड़ा से इसे छुड़ादे, जिस रोग ने इसको जोड़ों में पकड़ रखा है। हे वनस्पति! इसको जीवित लोगों के स्थान में जाने योग्य ऊपर उठा।

पुमान्पुंसः परिजातोऽश्वत्थः खदिरादधि।
स हन्तु शत्रून्मामकान्यानहं द्वेस्मि ये च माम्॥

—खैर के वृक्ष के ऊपर जैसे अश्वत्थ का वृक्ष होता है, वैसे ही वीर पुरुष से वीर पुरुष उत्पन्न होता है। ऐसा वीर हमारे वैरियों का वध करे।

—अथर्व वेद का स्वाध्याय

× ×

यस्ते गंधः, पुस्करयाविवेश,
यं संजभ्रुः सूर्याया विवाहे।
अमर्त्याः पृथिवि गंधमग्रे तेन मा,
सुरभिं कणु मा नो द्विक्षत कश्चन॥

यस्यां वृक्षा वानस्पत्या ध्रुवा तिष्ठन्ति विश्व हा।
पृथिवीं विश्व वायसं धृतामच्छाव दामसि ।।
(पद्म-पुष्प में व्याप्त हुआ, गा जो तेरा शुचि गंध प्रवाह,
धारण किया जिसे अमरों ने, जब सूर्या का हुआ विवाह।
आस्वादन कर चुके पूर्व ही, जिस सुगंध का देव अशेस,
उससे कर सौरभित हमें तू, कोई करे न हमसे द्वेष ।।
अचल खड़े सब ओर जहां पर विविध बनस्पति वृक्ष महान।
हम उस विश्वम्भरा धरा के करते गुण गौरव का गान ।।)

—अथर्व वेद पृथ्वीसूक्त

ते वृक्षाः सह तिष्ठति ।

—वे वृक्षों के समान स्थिर खड़े हैं ।

× × ×

अलाबूनि पृषात कन्याश्वत्थ पलाशम् ।
पिपीलिका वटश्वसो विद्युत्स्वापर्णं शफो गोशफो जरितरो थामोढैप ।।३।।

—जैसे तूम्बा, घृतविन्दु-पीपल का पत्ता, कीड़ी, वट की कौंपल, जल पर तैरते रहते हैं, या विद्युत् मेघ में रहती है, या किरणें आकाश में पग रखती हैं, या गौ का खुर पृथ्वी पर ऊपर ही ऊपर रह जाता है, इसी प्रकार शरीर में जीव रहता है। हे वेदोपदेष्टः ! देवाधिदेव ! हम उठते हैं और इस सिद्धान्त की घोषणा करते हैं।

× × ×

"चपल्यिका स्वल्पिका कर्कन्धूकेव पद्यते।"

—छोटी और थोड़ी प्रजा झरबेरी के समान समझी जाती है।

× × ×

अन्यमूपु यम्यन्य उन्वां परिष्वा जातैं लिबुजेव वृक्षम् ।

—जैसे लता वृक्ष से लिपटतीहै वैसे तू अन्य पुरुष का आलिंगन कर।....

"शान्तिरोषधयः शान्तिर्वनस्पतयः ।"

—मेरे लिए औषधियां तथा वनस्पतियां शान्तिदायक हों।

\+ + +

सा चिन्नु वृष्टिर्यूथा स्वा सचाँ इन्द्रः श्मश्रूणि हरिताभि प्रष्णुते।

—जिस प्रकार वृष्टि हरे वृक्षों को सींचती है, उसी प्रकार मूँछ के बालों के समान ज्ञानी पुरुष अपने आश्रितों को स्नेह से परिपुष्ट करता है।

× × ×

"मा त्वा वृक्षः सं वाधिष्ट मा देवी पृथिवी मही।

—वृक्ष तुझे कष्ट न दें। पृथ्वी देवी तुझे पीड़ित न करे।

× × ×

वनानि न प्रजहितान्यद्रिवो दुरोषा सा अमन्महि।

—परित्यक्त अथवा शाखादि से विहीन वृक्षों के समान हम दुःखी न हों। शत्रुओं से सताये न जाकर हम सुख से गृहों में रहें।

× × ×

वच्यस्व रेभ वच्यस्व वृक्षे न पक्के शकुनः।

—जिस प्रकार पके फलवाले वृक्ष पर पक्षी प्रसन्न होकर चह चहाते हैं, उसी प्रकार तू परिपक्व ज्ञान प्राप्त करके ईश्वर की स्तुति कर।

× × ×

यस्ते मदोऽकेशो विकेशो येनाभिहस्यं पुरुषं कृणोषि।
आरात् त्वदन्या वनानि वृक्षि त्वं शमि शतवल्शा विरोह।

इस मंत्र में शमी वृक्ष के समान बढ़ने पर उपदेश दिया गया है।

× × ×

यदि वृक्षादभ्यपप्तत् फलं तद् यद्यन्त रिक्षात् स उवायुरेव
यत्रस्पृक्षत् तन्वा यच्च वासस आपो नुदन्तु निर्ऋतिं पराचैः।

—यदि वृक्ष से फल गिरे और अंतरिक्ष (आकाश) से जल गिरे तो वह भी वायु है।······

भगेन मा शांशपेन साकमिन्द्रेण मेदिना ।
कृणोमि भगिनं माप द्रान्त्वरातयः ॥

इस मंत्र में शांशापा (शीशम) वृक्ष के समान शीघ्र वृद्धशाली होने की भावना निहित है।

\+ + +

यो अन्धो यः पुनः सरो भगो वृक्षेस्वाहितः ।
तेन मा भगिनं कृण्वय द्रान्त्वरातयः ।

इस मंत्र में बताया गया है कि वृक्षों में भी ईश्वरीय शक्ति निहित है, जो उन्हें नित नूतन रखती है।

× × ×

दवी देव्यामधि जाना पृथिव्या मस्योषधे ।
तां त्वा नितत्नि केशेभ्यो दृहणाय खनामसि ।

इस मंत्र में पृथ्वी में उत्पन्न होने वाली केश वर्धिनी वनस्पतियों (औषधियों) का उल्लेख है।

× × ×

या मा लक्ष्मीः प्रतयालू रजुष्टाभि चस्कद वन्दनेव वृक्षम् ।
अन्यत्रास्मत् सवितस्तामितो धा हिरण्यहस्तो वसु नो रराणः ।

इस मंत्र में बताया गया है कि जिस प्रकार वन्दन नामक विष-बेल चिपट कर वृक्ष को नष्ट कर देती है, उसी प्रकार लक्ष्मी है।

अश्वत्थो दर्भो वीरुधां सोमो राजामृतं हविः ।
व्रीहिर्यवश्च भेषजौ दिवस्पुत्रावमर्त्यौ ।

इस मंत्र में पीपल (वृक्ष) दाभ, कुशा, सोमलता आदि की रक्षार्थ प्रार्थना है।

\+ + +

पुष्पवतीः प्रसूमतीः फलिनीरफला उत ।
संमातर इव दुह्रामस्मा अरिष्टतातये ।

—इस मंत्र में पुष्पवती, फलवती, तथा नूतन-पल्लव-प्रयुक्ता ओषधियों की प्राप्ति-कामना का उल्लेख है।

\+ \+ \+

निम्नलिखित दो मंत्रों में संसार की कल्पना वृक्ष रूप में की गयी है। इस विश्व-विटप पर जीव और मन अथवा ईश्वर-जीव रूपी दो पक्षी साथ-साथ निवास करते हैं:—

'द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया, समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्नन्नन्यो अभि चाकशीति।

यस्मिन् वृक्षे मध्वदः सुपर्णा निविशन्ते, सवते चाधि विश्वे।
तस्य यदाहुः पिप्पलं स्याद्वग्रे तन्नोन्न शद्यः पितरं न वेद॥

\+ \+ \+

त्वं वीरुधां श्रेष्ठ तमाभिश्रुतास्योषधे।
इमं मे अद्य पूरुषं क्लीबमोपशिनं कृधि।

—इस मंत्र में ओषधि को सम्पूर्ण लताओं से श्रेष्ठ बताया गया है।

आदिनवं प्रतिदीव्ने घृते नास्माँ अभिक्षर।
वृक्षमिवाशन्या जहि यो अस्मान् प्रतिदीव्यति।

—जिस प्रकार बिजली वृक्ष पर गिरकर उसको नष्ट कर देती है, उसी प्रकार मानव को भी अपने प्रतिद्वन्द्वी का विनाश करना चाहिए।

—०—

य जु र्वे द
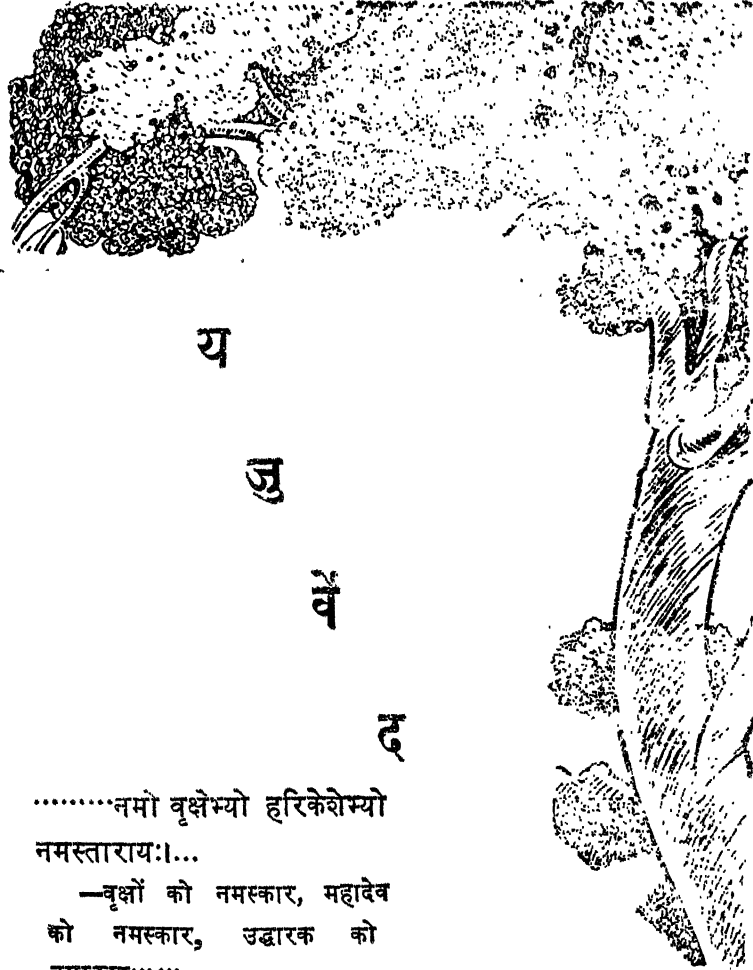
·········नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यो नमस्ताराय:।...

—वृक्षों को नमस्कार, महादेव को नमस्कार, उद्धारक को नमस्कार······

...ओषधयः शान्तिः, वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः

—औषधियाँ शान्त रहें, वृक्ष शान्त हों, विश्वदेव शान्त रहें।

याऽइषवो यातुधानानां ये वा वनस्पतींऽँरनु।
ये वा वटेषु शेरते तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः।

इस मंत्र में वट - वृक्षों को एवं वनस्पतियों में निवास करने वाले सर्पों को नमस्कार किया गया है।

मधुमान्नो वनस्पति र्मधु माँ२ऽ अस्तु सूर्यः।
माध्वीर्गावो भवन्तु नः ।

—हमारे लिये वृक्ष मधुर हों। गायों का दुग्ध भी हमारे लिए मधुर हों।

\+ + +

ये वृक्षेषु शिष्पञ्जरा नीलग्रीवा विलोहिताः।
तेषां सहस्रयोजनेऽव धन्वानि तन्मसि।

\+ + +

अश्मन्नूर्जं पर्वते शिश्रियाणामद्भ्यऽओषधीभ्यो
वनस्पतीभ्योऽअधि सम्भृतं पयः।
तां नऽइषमूर्जं धत्त मरुतः संरराणाऽअश्मस्ते
क्षन्मयि त ऽ ऊर्यं द्विष्मस्तं ते शुगृच्छतु।

\+ + +

किं स्विद्वनं क ऽ उ स वृक्ष आस यतो द्यावा पृथिवी निष्टतक्षुः।
मनीषिणो मनसा पृच्छतेदु तद्यदध्यतिष्ठद्भुवनानि धारयन्।

\+ + +

वनस्पतिरवसृष्टो न पाशैस्त्मन्या समञ्जञ्छमिता न देवः।
इन्द्रस्य हव्यैर्जठरं पृणानः स्वदाति यज्ञं मधुना घृतेन।

\+ + +

ऋतुथेन्द्रो वनस्पतिः शशमानः परिस्रुता।
समधातं सरस्वत्या स्वाहेन्द्र सुतं मधु।

शमिता नो वनस्पतिः सविता प्रसुवन् भगम् ।
ककुप् छन्द ऽ इहेन्द्रियं वशा वेहद्वयो दधुः ।

+ + +

…………स्वाहा वनस्पतिं प्रियं पाथो न भेषज
स्वाहा देवाऽआज्यपा जुषाणो …………

+ + +

होता यक्षद्वनस्पतिमभिहि पिष्टतमया रभिष्ठया रशनयाधित ।

+ + +

देवो देवैर्वनस्पतिर्हिरण्य पर्णोऽअश्विभ्यां सरस्वत्या
सुपिप्पलऽइन्द्राय पच्यते मधु ।
ओजो न जूति ऋषभो न भामं वनस्पतिर्नो
दधदिन्द्रियाणि वसुवने वसुधेयस्यव्यंतुयज ।

+ + +

…………स्वाहा मूलेभ्यः स्वाहा शाखाभ्यः स्वाहा वनस्पतिभ्यः
स्वाहा पुस्पेभ्यः स्वाहा फलेभ्यः स्वाहौषधीभ्यः स्वाहा ।

+ + +

वायुष्ट्वा पचतैरवत्वसित ग्रीवश्छागैर्न्यग्रोधश्चमसैः
शाल्मलिर्वृद्धया ।
एष स्यराश्यो वृषा षड्भिश्चतुर्भिरेदगन्ब्रह्मा कृष्णश्च
नोऽवतु नमोऽग्नये ।

+ + +

माता च ते पिता च ते ऽग्रं वृक्षस्य रोहतः ।
प्रतिलामीति ते पिता गभे मुष्टिमतं सयत् ।
माता च ते पिता च तेऽग्र वृक्षस्य क्रीडतः ।
विवक्षतऽइव ते मुखं ब्रह्मन्मा त्वं वदो वहु ।

+ + +

अग्नये कुटरूनालभते वनस्पतिभ्यऽउलूकानग्नीषोमाभ्यां ।
चाषानश्विभ्यां मयूरान्मित्रा बरुणाभ्यां कपोतान् ।

देवो देवैर्वनस्पतिर्हिरण्यपर्णो मधुशाखः सुपिप्पलो देवमिन्द्र मवर्धयत्।
दिव मग्रेणास्पृक्षदान्तरिक्षं पृथिवी मदृंहीद्वसुवने वसुधेयस्य वेतु यज।

\+ + +

देवो वनस्पतिर्देवमिन्द्रं वयोधसं देवो देव मवर्धयत्।
द्विपदा छन्दसेन्द्रियं भगमिन्द्रे वयो दधद्वसुवने वसुधेवस्य वेतु यज।

\+ + +

अश्वो घृतेन त्मन्या समक्तऽउपदेवांऽऋतुशः पाथऽएतु।
वनस्पतिर्देव लोकं प्रजानन्नग्निना हव्या स्वदितानि वक्षत्।

\+ + +

उपावसृजत्मन्या समञ्जन्देवानां पाथऽऋतुथाहवींषि।
वनस्पतिः शमिता दैवोऽअग्निःस्वदन्तु हव्यं मधुता घृतेन।

\+ + +

वनस्पते वीड्वङ्गो हि भूयाऽअस्मत्सखा प्रतरणः सुवीरः
गोभिः सन्नद्धोऽअसि वीडयस्वास्थाता ते जयतु जेत्वानि।

\+ + +

अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता।
गो भाजऽइत्किलासथ यत्सनवथ पूरुषम्।

\+ + +

.... वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वॐ
शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।

\+ + +

गर्भोऽअस्योषधीनां गर्भो वनस्पतीनाम्।
गर्भोविश्वस्य भूतस्याग्ने गर्भोऽअपामसि।

\+ + +

अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता।
गोभाजऽइत्किलासथ यत्सनवथ पूरुषम्।

\+ + +

ॐ पालाशं भवति तेन ब्राह्मणेभिषिंचति।

औदुंबरं भवति तेन क्षत्रोऽभिषिंचति

\+ + +

नैयग्रोधपात्रं भवति

\+ + +

आश्वत्थम्भवति तेन वैश्योऽभिषिंचति ।

संस्कृत-काव्य

में

पादप-पुष्प

•

•

ऊर्ध्वं मूल मधः शाखम्

अश्वत्थं प्राहुख्ययम् ।

छन्दांसि यस्य पर्णानि

यस्तंवेद सवेदवित् ।

(गीता)

संस्कृत-साहित्य की गरिमा समस्त विद्वानों ने एक स्वर से स्वीकार की है। भारतीय संस्कृत एवं सभ्यता के समुत्थान में संस्कृत-साहित्य ने जो योग दिया है, वह सदैव स्मरणीय रहेगा। वस्तुतः भारतीयता के अनुशीलन में संस्कृत का अध्ययन अनिवार्य है। एक समय था, जब समस्त भारतवर्ष में संस्कृत ही बोल-चाल की भाषा थी और साधारण जनता अपने दैनिक व्यवहार में इसीका उपयोग किया करती थी। हमारा समग्र साहित्य (मौलिक साहित्य) संस्कृत में ही लिखित है। वेद, पुराण, स्मृतियां तथा अन्य धार्मिक ग्रन्थ देव-वाणी-संस्कृत में ही लिखे गये हैं। अतएव भारतीय साहित्य, दर्शन, न्याय आदि के अध्येताओं को इस पवित्र भाषा का परिपूर्ण ज्ञान प्राप्त करना अत्यावश्यक है अन्यथा वे इन विषयों का गंभीर मनन न कर सकेंगे। "संस्कृत का साहित्य बहुत विशाल है। 'विन्टर निज़' ने लिखा है कि लिटरेचर (साहित्य) अपने व्यापक अर्थ में जो कुछ भी सूचित कर सकता है वह संस्कृत में वर्तमान है। धार्मिक और ऐतिहासिक परक (सेक्यूलर) रचनाएँ, महाकाव्य लिरिक (गीत), नाटकीय और नीति संबंधी, कविता वर्णनात्मक, अलंकृत और वैज्ञानिक गद्य सब कुछ इस में भरा पड़ा है।"*

संस्कृत-काव्य की रसमयता, मौलिकता, गंभीरता, विविधता, मर्मस्पर्शिता एवं व्यापकता चिरंतन है। इस दीर्घ - कालीन साहित्य के प्रणेताओं ने जो त्याग और तप किया है वह अपने रूप में महान् तथा आदर्श है। सत्यं, शिवं, सुन्दरं की शाश्वत व्याख्या करके यह काव्य अमर हो गया है। पृथ्वी एवं आकाश का कोई ऐसा विषय नहीं, जिस पर संस्कृत-काव्यकारों ने न लिखा हो।

प्रकृति का समुज्ज्वल रूप इस काव्य के लालित्य का प्रधान अंग है। संस्कृत-कवियों ने प्रकृति के बीच रहकर ही बहुत कुछ लिखा है। इन सरस्वती-पुत्रों के द्वारा वर्णित प्राकृतिक दृष्य इतने मनोरम हैं कि पाठक इन पर मुग्ध हो जाता है। इस संक्षिप्तलेख में मैं केवल उन कतिपय उद्धरणों को प्रस्तुत करूँगा, जिन में प्रकृति-प्रेमी कवि ने वृक्ष, पुष्प, पल्लव, फल आदि का उल्लेख अथवा चित्रण किया है। महर्षि वाल्मीकि, व्यास, अश्वघोष, कालिदास, भारवि, भट्टि, माघ, श्रीहर्ष, भास, भवभूति, अमरुक, जयदेव आदि के ग्रन्थों में महीरुह, कुसुम, किसलय, पल्लव,

---

*संस्कृत-कवि-दर्शन (भूमिका—ले० आचार्य हजारी प्रसाद जी द्विवेदी)

फल आदि का किसी न किसी रूप में चित्रण हुआ ही है। प्रकृति और कविता का पारस्परिक सम्बन्ध है। काव्य ने सदैव प्रकृति से ही सच्ची प्रेरणा प्राप्त की है और प्रकृति काव्य के स्वरों में संचरित होकर विशेष कमनीय हुई है। कवि की अनुभूतियों ने प्राकृतिक सुषमा से अपने लघुत्व को व्यापक बनाया और संयम-निष्ठा को आत्मसात् किया। पादप की परोपकार भावना को कौन भूल सकता है? इसके सुमनों, फलों और पल्लवों पर कौन अपनी ललचाई हुई दृष्टि नहीं डालता? संस्कृत-कविता में हजारों सुमनों तथा फल-वृक्षों का वर्णन मिलता है। महर्षि वाल्मीकि ने रावण के विषय में लिखा है—

सशैलं सागरानूपं वीर्यवानवलोकयन्।
नानापुष्पफलैर्वृक्षैसुकीर्णं सहस्रशः।

—अरण्यकांडे, पञ्चत्रिंशः सर्गः

—उस पराक्रमी रावण ने जाते हुए पहाड़ सहित समुद्रतट पर हजारों फूले फलें वृक्षों को देखा।

महर्षि ने बताया है कि सीता के वियोग से विकल यशस्वी राम ने आम, कदंब, बड़े-बड़े साखू, कटहल, कुरट, अनाय, मौलसिरी, नागकेसर चंपा और केतकी के वृक्षों के पास जाकर सीता के विषय में पूछा था और अपनी विक्षिप्त अवस्था को प्रकट किया था—

अपि कच्चित्वया दृष्टा सा कदम्बप्रिया प्रिया।
कदम्ब यदि जानीषे शंस सीतां शुभाननाम्।१।
स्निग्ध पल्लव सङ्काशा पीत कौशेय वासिनी।
शंसस्व यदि वा दृष्टा बिल्व बिल्वोपमस्तनी।२।
अथवाऽर्जुन शंस त्वं प्रियां तामर्जुन प्रियाम्।
जनकस्य सुताभीरुर्यदि जीवति वा न वा।३।
ककुभः ककुभोरुं तां व्यक्तं जानाति मैथिलीम्।
यथा पल्लवपुष्पाढ्यो भाति ह्येष वनस्पतिः।४।
भ्रमरैरुपगीतश्च यदा द्रुमवरः स्वयम्।
एष व्यक्तं विजानाति तिलकस्तिलक प्रियाम्।५।

अशोक शोकापनुद शोकोपहतचेतसम् ।
त्वन्नामानं कुरु क्षिप्रं प्रिया संदर्शनेन माम् ।६।
यदि ताल त्वया दृष्टा पक्वताल फलस्तनी ।
कथयस्व वरारोहां कारुण्यं यदि ते मयि ।७।
यदि दृष्टा त्वदा सीता, जम्बू, जाम्बनदप्रभा ।
प्रियां यदि विजानीषे निःशङ्कं कथयस्व मे ।८।
अहो त्वं कर्णिकाराद्य सुपुष्पैः शोभसे भृशम् ।
कर्णिकार प्रिया साध्वी शंस दृष्टा प्रिया यदि ।९।
आम्रनीप महासालान् पनसान् कुरवान् धवान् ।
दाडिमान सनान् गत्वा दृष्ट्वा रामो महायशाः ।१०।
मल्लिका माधवीश्चैव चम्पकान् केतकीस्तथा ।
पृच्छन् रामो वने भ्रान्त उन्मत्त इव लक्ष्यते ।११।

—आरण्य कांडे, षष्ठितमः सर्गः

—हे कदम्ब ! यदि तुमने सुमुखी सीता को देखा हो तो बताओ । तुम जानते हो कि वह तुम्हें विशेष प्यार करती थी ।१

हे बेल ! तुम्हारे चिकने पत्तों के समान स्निग्ध तथा पीत वर्ण के कौशेय वस्त्रों को धारण करनेवाली सीता को यदि तुमने देखा हो तो बताओ । तुम जानते हो कि उसके स्तन तुम्हारे फल के ही समान थे ।२

अथवा हे अर्जुन ! तुम बतलाओ कि वह हमारी भीरुस्वभाव वाली प्यारी सीता जीवित है कि नहीं ? तुम जानते ही हो कि वह तुम्हें विशेष प्यार करती थी ।३

हे ककुभ, तुम्हें सीता का पता है, ऐसा मुझे प्रतीत होता है; क्यों कि तुम पल्लवित एवं पुष्पित होकर विहँस रहे हो ।४

भ्रमरों के गुंजार से गुंजायमान हे तिलक ! तुम्हें मेरी प्यारी सीता की जानकारी है ! मेरी जीवन संगिनी सीता तुम्हें सदैव प्यार से देखती थी ।५

हे अशोक ! सीता को दिखाकर तुम मुझ शोक-विह्वल को अपने समान करलो ।६

हे ताड़ ! यदि तुम मुझपर कृपालु हो, तो मेरी सीता का पता बताओ। तुम्हें ज्ञात है कि उसकी जँघाएँ सुन्दर थीं—और उसके स्तन तुम्हारे पके हुए फलों के सदृश थे।७

हे जामुन के वृक्ष। यदि तुमने सुनहली कान्ति वाली सीता को देखा हो, तो संकोच त्याग कर बताओ।८

हे कर्णिकार ! तुम सुरभित पुष्पों से अधिक शोभित हो रहे हो। यदि तुमने मेरी प्यारी सीता को देखा हो तो बताओ। वह तुम्हें विशेष चाहती थी।९

आम, कदम्ब, साल, कटहल, कुरव, धव, अनार, एवं सन वृक्षों के पास रामचन्द्र गये और विक्षिप्त की तरह उन्होंने इनसे अपनी सीता के विषय में पूछा। इसी प्रकार चमेली, माधवी, चम्पा, तथा केतकी लताओं के समीप जाकर राम ने अपने दुःख को प्रकट किया और सीता के संबंधमें पूछा।१०—११।

अध्यात्म रामायण में भी वृक्षों एवं पुष्पों का उल्लेख हुआ है। इस ग्रन्थ में कहा गया है कि श्री रघुनाथ जी चित्रकूट के जिस वन में निवास करते थे, उसमें फलयुक्त आम्र, पनस, कदली, चम्पक, कचनार और नागकेसर के वृक्ष सुशोभित थे—

"सफलैराम्रपनसैः कदलीखण्डसंवृतम्।
चम्पकैः कोविदारैश्च पुन्नागैर्विपुलैस्तथा।

—अयोध्या काण्ड

भवन्ति नम्रास्तरवः फलोद्गमै-
र्नवाम्बुभिर्दूर विलम्बिनो घनाः।
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः
स्वभाव एवैष परोपकारिणाम्।

—कालीदास

—फलों से लदे हुए वृक्ष झुक जाते हैं। जल से भरे हुए बादल पृथ्वी की ओर आते हैं। ठीक है सज्जन समृद्धि पाकर विनम्र होते हैं। परोपकारियों का स्वभाव ही है।

महाकवि कालिदास का प्रकृति-वर्णन विशेष विख्यात है। इसमें अनेक वृक्षों का (प्रसून सहित) नामोल्लेख हुआ है। पुष्पाभूषणों को धारण किये हुए भगवती पार्वती भगवान् शिव के सन्मुख खड़ी थीं—

अशोकनिर्भर्त्सित पद्मरागमाकृष्टहेमद्युतिकर्णिकारम् ।
मुक्ता कलापीकृतसिन्दुवारं वसन्तपुष्पाभरणं वहन्ती ।
आवर्जिता किञ्चिदिवस्तनाभ्यां वासो वसाना तरुणार्करागम् ।
पर्य्याप्त पुष्पस्तवकावनम्रा संचारिणी पल्लविनी लतेव ।

—कुमार संभव ३. ५३-४

—पार्वती जी ने जिन अशोक के पुष्पों को आभूषण के रूप में पहना था वे पद्म-राग मणि की सुन्दरत को लज्जित कर रहे थे। कर्णिकार पुष्प के आभूषण सुवर्ण की कान्ति का अपहरण कर रहे थे। तथा निर्गुण्डी (सिन्दुवार) के पुष्प मोतियों की लड़ी बने दिखाई देते थे। इस तरह वसन्त पुष्पों के आभरण को धारण करती हुई, लाल रग के वस्त्र वाली पार्वती, जो स्तनों के भार से कुछ-कुछ झुकी सी दिखाई देती थीं (शिव के सामने आकर इस तरह खड़ी हो गयीं) जैसे घने फूलों के गुच्छे से झुकी हुई कोमल किसलय वाली चलती फिरती (संचारिणी) लता हो। +

वृक्षों के प्रति भगवान् शंकर एवं माता पार्वती को भी स्नेह था। निम्नस्थ पंक्तियों में बताया गया है कि देवदारु नामक वृक्ष को शंकर पुत्रवत् प्यार करते हैं क्योंकि पार्वती जी ने इसको सींच कर बड़ा किया है—

"अमुं पुरः पश्यसि देवदारुं पुत्री कृत्तोऽसौ वृषभध्वजेन ।
यो हेम कुंभस्तन निःसृतानां स्कन्दस्य मातुः पयसां रसज्ञः ।"

—तुम्हारे सामने जो देवदारु का वृक्ष है, उसे शंकर पुत्र के सामान चाहते हैं क्योंकि पार्वती जी ने इसे अपने सोने के घटरूप स्तनों से सींचा है।

—रघुवंश द्वि० सर्ग०

मूलं योगिभिरुद्धृतं निवसितं वासोर्थिभिर्वल्कलं,
भूषार्थी च जनश्चिनोति कुसुमं भुङ्क्ते क्षुधार्तः फलम् ।

+संस्कृत—कवि—दर्शनि—डा० व्यास, पृष्ठ १०?

छायामातपिनो विशन्ति विचिता निद्रालुभिः पल्लवः।
कल्पाख्यस्य तरोरिवेह भवतः, सर्वाः परार्थाः श्रियः।

—अन्योक्त्यष्टक संग्रह

—हे कल्पवृक्ष ! तुम्हारी जड़ को योगी लोग प्रेम से चाहते हैं, तुम्हारे छिलके को वस्त्रार्थी ग्रहण करते हैं। रसिक लोग पुष्पों को चुनते हैं एवं भूखे मानव तुम्हारे फलों को खाते हैं। घाम से पीड़ित व्यक्ति तुम्हारी छाया में आश्रय लेते हैं। निद्रालु तुम्हारे पत्रों (पत्तों) को बिछाकर उनपर लेटते हैं। इस प्रकार तुम्हारा सब कुछ परोपकार के लिए ही है।

इस महाकवि की 'मेघदूत' एक प्रसिद्ध रचना है। उस में भी कई स्थानों पर वृक्षों का सुन्दर चित्रण हुआ है।

नीपं दृष्ट्वा हरितकपिशं केसरैरर्धरूढै—
राविर्भूतप्रथममुकुलाः कंदलीश्चानुकच्छम्।
जग्ध्वारण्येष्वधिकसुरभिः गंधमाघ्रायचोर्व्याः
सारंगास्ते जललवमुचः सूचयिष्यन्ति मार्गम्।

—अर्द्ध विकसित कदम्ब एवं कंदली कलियों को खाकर प्रमुदित मृग-गण तुम्हारे मार्ग को सूचित करेंगे।

जातो मार्गे सुरभिकुसुमः सत्फलो नम्रशाखः,
स्फीताभोगो वहलविटपः स्वादुतोयोपगूढ़ः।
नैवात्मार्थं वहति महतीं पादपेन्दुः श्रियं ता—
मापन्नार्तिप्रशमनफलाः संपदो ह्युत्तमानाम्।

—वृक्षाष्टकम्

—हे वृक्ष ! तुम मार्ग में उत्पन्न हुए हो, तुम्हारे पुष्प सुरभित हैं, तुम श्रेष्ठ फल वाले हो, तुम्हारी शाखाएं झुकी हुई हैं, तुम्हारा क्षेत्र विस्तृत है, तुम्हारा छत्र विशाल और घना है एवं तुम्हारा रस मधुर है। यह सब समृद्धि तुम अपने लिए नहीं रखते हो। यह तो परहितार्थ है। सच है महापुरुषों की सम्पत्ति परोपकार के लिए होती है।

व्योम्नस्तापिगुच्छच्छावलिभिरिव तमोवल्लरीभिर्व्रियन्ते,
पर्यस्ताः प्रान्तवृत्या पयसि वसुमती नूतने मज्जतीव।
वात्या संवेग विष्वग्विततवलयितस्फीनधूम्या प्रकाशं,
प्रारंभेऽपि त्रियामा तरुणयति निजं नीलिमानं वनेषु।

—आकाश के प्रान्त भाग तमाल-पुष्प के गुच्छों से लदी हुई, अंधकार की लताओं द्वारा आच्छादित हो रहे हैं, चारों ओर तमाल पुष्प के समान हल्के काले रंग का अंधेरा बढ़ता जा रहा है........

—संस्कृत-कवि-चर्चा पृ० ४०७

यहाँ मैं संस्कृत कवियों द्वारा वर्णित कुछ वृक्षों एवं पुष्पों का उल्लेख कर रहा हूं। इन वर्णनों में कवि के भावुकहृदय का पूर्ण परिचय मिलता है—

किं जातोऽसि चतुष्पथे घनतरं छन्नोऽसि किं छायया।
छन्नश्चेत् फलितोऽसि किं फलभरैराढ्योऽसि किं संनतः।
हे सद्वृक्ष! सहस्व सम्प्रति सखे शाखाशिखाकर्षण-
क्षोभामोटनभञ्जनानि जनतः स्वैरेव दुश्चेष्टितैः।

—हे सत् वृक्ष! तुम चौराहे पर क्यों उत्पन्न हुए? तुम घनी छाया से क्यों सम्पन्न हो? तुम फलमय क्यों हुए? तथा फल सम्पन्न होकर तुम क्यों नत हुए? अब यदि मनुष्य तुम्हारी शाखाओं को तोड़ते हैं तो उसके संताप को सहो।
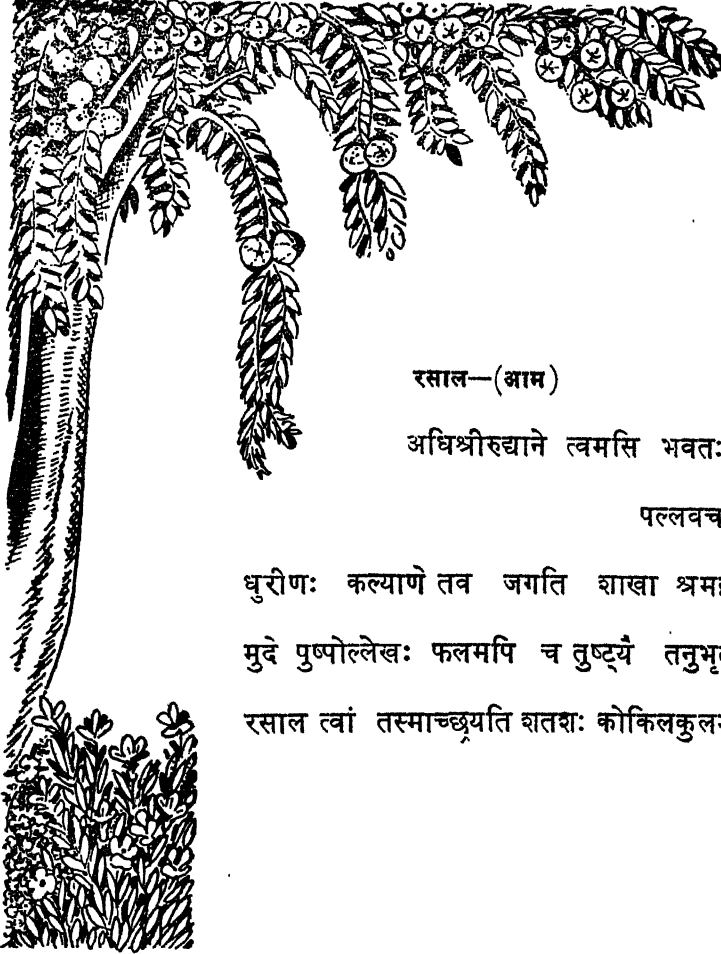
रसाल—(आम)

अधिश्रीरुद्याने त्वमसि भवतः
पल्लवचयो,
धुरीणः कल्याणे तव जगति शाखा श्रमहरा
मुदे पुष्पोल्लेखः फलमपि च तुष्ट्यै तनुभृताम्
रसाल त्वां तस्माच्छ्रयति शतशः कोकिलकुलम् ।

—हे आम के वृक्ष, तुम सुन्दर उद्यान में रहते हो, तुम्हारे पत्रों का समूह भी सुन्दर है । श्रमको दूर करने वाली तुम्हारी शाखाएँ संसार में कल्याण करने वाली हैं । तुम्हारे पुष्प आनन्दित करने वाले तथा फल सन्तोषदायक हैं, इसीलिए सैकड़ों कोकिलों का समूह तुम्हारा आश्रय लेता है ।

तमाल—

पास्यन्ति कस्य कुसुमे मधुपा मधूनि,
स्थास्यन्ति, कस्य शिखरेषु विहंगमाला: ।
विइत्येव शोचति परं परितोसारि
दावाग्निमग्नवपुरेष तरुस्तमाल: ।

—किसके पुष्पों पर भ्रमर मधु-पान करेंगे ? तथा किसके शिखरों पर पक्षी विश्राम करेंगे, इस प्रकार विचार करता हुआ तमाल दावाग्नि में भस्म हो रहा है।

पनस—

गरीय: सौरभ्यं रस परिचये नार्हति सुधा
सिता मृद्वीकाऽपि प्रथिमनि निमग्न: फलभर: ।
परार्थे कोशश्रीरिति पुलकितं कंटकमिषा-
दहो ते चारित्रं पनस मनस: कस्य न मुदे ।

—शार्ङ्गधर

—हे कटहल के वृक्ष ! तुम्हारी सुगंधि श्रेष्ठ है, तुहारे रस की तुलना अमृत भीं नहीं कर सकता, तुम्हारे मधुर फलों के सामने चीनी तथा दाख भी कुछ नहीं हैं । तुम्हारी श्री परोपकार के लिए है; अत: तुम पुलकित हो तुम्हारा स्वभाव किस को आनन्दित नहीं करता ?

चम्पक—

कोपं चम्पक मुंच याचकजनैराराधितस्त्वं सखे,
मा म्लासी: परितो विलोकय तरु: केस्तेऽधिरूढस्तुलाम्
कोपश्चेन्नियतस्तवास्ति हृदये धात्रे तदा कुप्यताम्
येन त्वं हि सुवर्णवर्णकुसुमामोदोऽद्वितीय: कृत: ।

हे चंपक ! तुम क्रोध न करो । अपने चारों ओर देखो । प्रेमी तुम्हारी आराधना कर रहे हैं । यदि तुम्हें क्रोध ही करना है तो उस विधाता पर करो, जिसने तुम्हें सोने के सामान मनोहर रूप दिया है ।

भ्राम्यद्भृङ्ग - भरावनम्र - कुसुमस्तोमोद्भवद्गन्धिषु
च्छायावत्सु तलेषु पान्थ निचया विश्रम्य गेहेष्विव ।

निर्यन्निर्झर वारिवारित तृषस्तृप्यन्ति येषां फलै-
स्ते नन्दन्तु फलन्तु यान्तु च परामभ्युन्नति पादपाः ।

—जिन वृक्षों की सुगन्ध से प्रमत्त होकर भौंरे गुंजार करते हैं, जिन की शीतल छाया में श्रान्त घर का सा विश्राम पाते हैं, तथा जिनके मधुर फलों से तृषा एवं क्षुधा शान्त होती है वे पादप पूर्ण उत्कर्ष को प्राप्त हों।

चन्दन—

ककुभि ककुभि भ्रामं भ्रामं विलोक्य विलोकितम्,
मलयज समो दृष्टोऽस्माभिर्न कोऽपि महीरुहः ।
उपचित रसो दाहच्छदैः शिलातल घर्षणै—
रधिकमधिकं यत्सौरभ्य तनोति मनोहरम् ।

—हमने सभी-दिशाओं में भ्रमण करके देखा है कि चन्दन के समान दाह-नाशक कोई अन्य वृक्ष नहीं है। पत्थर के ऊपर घिसने से अधिकाधिक मनोहर सुंगन्ध देता है।

बकुल—

दधानः प्रेमाणं तरुष समभावेन विपुलं
न मालाकारोऽसावकृत करुणां बाल.बकुले,
अयं तु द्रागुद्यत्कुसुमनिकराणां परिमलै—
र्दिगन्तानातेने मधुप कुल झंकारभरितान् ।

—भामिनी विलास

—माली ने सब वृक्षों पर समान भाव रखा, फिर भी इस वकुल पर उसने विशेष कृपा दिखलायी। जिसके परिणाम स्वरूप वकुल शीघ्र पुष्पि हुआ और पुष्पों के पराग ने समस्त दिशाओं को भ्रमरों की गुंजारों से भर दिया।

कर्णिकार—

वर्ण प्रकर्षे सति कर्णिकारं
दुनोति निर्गंधतया स्म चेतः ।

प्रायेण सामग्रय विधौ गुणानं
परा़ङ् मुखी विश्व सृजः प्रवृत्तिः ।

—कुमार संभव

—कनेर का पुष्प रंग में बहुत ही मन मोहक है किन्तु इसमें सुगंध नहीं है यह दुःख की बात है। साधारण रूप से यह देखा जाता है कि बिधाता सब गुणों को एक स्थान में नहीं रखना चाहता।

अशोक

छायातिसान्द्रशिशिरा नवपल्लवानि
स्निग्धानि मुग्धसुरभिः स्तवकप्रबंधः ।
स्कित्वा फलानि सदृशानि विधेहि मा वा
दृष्टैव ते मुखमशोक वयं विशोकाः ।

—हे अशोक ! सघन छाया नवीन पल्लव तथा सुरभित पुष्पों के गुच्छों को देखकर हम शोक रहित हो गये। अच्छा हो यदि तुम अपने फलों को भी अपने नाम के समान करो।

खदिर

यद्यपि खदिरारण्ये गुप्तो वस्तेहि चम्पको वृक्षः ।
तदपि च परिमल मतुलं दिशि दिशि कथयेत् समीरणस्तस्यः

—शार्ङ्गधर

—खदिर (खैर) के वन में यद्यपि चम्पा का वृक्ष छिया हुआ है, फिर भी पवन उसके पुष्प-पराग को दिशाओं में फैलाकर उसकी प्रशस्ति का परिचय करा ही देता है।

नारिकेल

प्रथम वयसि पीतं तोयमल्पं स्मरन्तः
शिरसि निहित भारा नारिकेला नराणाम् ।
ददति जलमनल्पं स्वादु तज्जीवनान्तम्
न हि कृतमुपकारं साधवो विस्मरन्ति ॥

—शार्ङ्गधर

—हे नारियल! तुमने अपने प्रथम जीवन में दूसरों से कुछ जल प्राप्त किया था, इसका स्मरण करते हुए तुमने अपने सिर पर बड़ा भारी भार रखा और अब तुम मनुष्यों को पर्याप्त जल दे रहे हो। ठीक है, साधु लोग किये हुए उपकार को कभी नहीं भूलते।

केतकी

व्यालाश्रयाऽपि विफलाऽपि सकंटकाऽपि,
वक्राऽपि पंकिल-भवाऽपि दुरासदाऽपि।
गंधेन बंधुरसि केतकि सर्वजन्तोः
एको गुणः खलु निहन्ति समस्त दोषान्

—सभ्य तरंग

—हे केवड़े! तुम सर्पों से वेष्ठित हो, फलहीन, हो, कांटों से परिपूर्ण हो, टेढ़े हो, कीचड़ में उत्पन्न हुए हो, और तुम्हारे समीप पहुँचना भी कठिन है, फिर भी तुम अपनी मधुर गंध से सबको आकर्षित करते हो। ठीक है एक गुण सब दोषों को दूर कर देता है।

बबूल

गात्रं कंटकसंकटं प्रविरल-
च्छाया न चाऽऽयासहृद्
निर्गन्धः कुसुमोत्करस्तव फलं
न क्षुद्विनाशक्षमम्।
बब्बूलद्रुम मूलमेति न जन-
स्तत्तावदास्तामहो,
अन्येषामपि शाखिनां फलवतां
गुप्त्यै वृतिर्जायसे।

—शार्ङ्गधर

—हे बबूल! तुम्हारा शरीर काँटों से भरा हुआ है। तुम्हारी थोड़ी छाया है, जिसमें थके हुए पथिकों को विश्राम भी नहीं मिलता। तुम्हारे फूलों में सुगंध भी नहीं है। तुम्हारे फलों से भूख भी शान्त नहीं होती। इसीलिए कोई भी मनुष्य

तुम्हारे पास नहीं आता। यह ठीक ही है। लेकिन तुम्हारा फलदार वृक्षों की प्राप्ति में बाधक होना अनुचित है।

पीलु

धन्याः सूक्ष्मफला अपि प्रियतमास्ते पीलु वृक्षाः क्षितौ
क्षुत् क्षीणेन जनेन हि प्रतिदिनं येषां फलं भज्यते ।
किं तैस्तत्र महाफलैरपि पुनः कल्पद्रुमाद्यैर्द्रुमै-
र्येषां नाम मनागपि श्रमनुदे छायाऽपि न प्राप्यते ।

— कल्पतरु

—हे पीलु वृक्ष! तेरे फल छोटे होने पर भी स्वादिष्ट होते हैं, जिनको भूखे मनुष्य खाकर शान्ति प्राप्त करते हैं। तेरी तुलना में बड़े फल वाले कल्पवृक्ष भी नगण्य हैं, जिनकी छाया पथिकों के श्रम को दूर करने के लिए भी अप्राप्य है।

निम्ब

फलानां संभारैरधरय तरूनुन्नततया
स्पृशाकाशं सर्वाः स्थगय परिणाहैरपि दिशः ।
तथापि ध्वांक्षेभ्यो न पुनरितरः कोऽपि विहगः
फलार्थी निम्ब त्वां प्रकृतिविरसं धावति मुदा ।

—हे नीम, तुम चाहे अपने फलों के भार से दूसरे वृक्षों को दबाओ ही, तथा अपनी ऊँचाई (गगन को चूमने वाली) से दिशाओं को ढक लो, पर तुम्हारे पास फलों के लिए कौए ही आते हैं, अन्य कोई पक्षी नहीं।

पलाश

त्यज किंशुक पुष्पिताभिमानं निजशिरसि भ्रमरोपसेवनेन ।
विकसन्नव मालतीवियोगात्कुरुते वह्निधिया त्वयि प्रवेशम् ।

—हे पलाश! तुम्हारे ऊपर भौंरे गुंजार करते हैं, फिर भी तुम अपने फूलों का अभिमान भूल जाओ। ये वियोगी भ्रमर चमेली के पुष्पों के अभाव से दुखी होकर सुलगते कोयलों के समानतुम्हारे लाल फूलों की आग में जलने आते हैं।

शमी

शमी शमयते पापम्
शमी शत्रु-विनाशिनी ।
अर्जुनस्य धनुर्धारी,
रामस्य प्रिय वादिनी ।

—महाभारत

—शमी वृक्ष पाप को शान्त करता हैं । एवं शत्रु का नाश करता है । इस पर अर्जुन ने अपने शस्त्र रखे थे । भगवान राम को भी प्रिय है ।

वट

वट मूले स्थितो ब्रह्मा,
वट मध्ये जनार्दनः ।
वटाग्रे शंकरं विद्यात्,
वटस्थाः सर्व देवताः ।

—स्कंद पुराण

—वट-मूल में ब्रह्मा का निवास है, मध्य में विष्णु रहते हैं । एवं अग्र भाग में शंकर बसते हैं । इस प्रकार वट-वृक्ष सम्पूर्ण देवताओं का आश्रय-स्थान हैं ।

\+ \+ \+

वृक्ष की महिमा को समझनेवाला मानव कभी दूसरों के सामने नतमस्तक नहीं होता । वह कहता है कि जब ये उदार पादप फल देकर मेरी भूख शान्त करते हैं और अपना वल्कल प्रदान कर मेरी शीत-बाधा को दूर करते हैं तो धनाभिमानी दुर्जनों का निरादर क्यों सहूँ ।

भुक्तं स्वादु फलं कृतं च शयनं शाखाग्रजैः पल्लवैः
स्वच्छाया परिशीतलं च सलिलं पीतं व्यपेत क्लमैः ।
विश्रान्ताः सुचिरं परा च मनसः प्रीतिः किमत्रोच्यते
त्वं सन्मार्ग तरुर्वयं च पथिका यामः पुनर्शर्नानम् ।

—तुम्हारे मधुर फलों को खाकर हमने कोमल पत्तों पर विश्राम किया, तुम्हारी

शीतल छाया में बैठकर ठण्डा पानी पिया और अपनी थकावट दूर की। हमें जो तुम से सुख मिला है, उसे बचनों द्वारा प्रकट नहीं कर सकते।

हे सन्मार्ग तरु ! हम पथिक हैं, अब जाते हैं फिर कभी तुम्हारे दर्शन करेंगे।

पत्रं नैव यदा करीरविटपे दोषो वसन्तस्य किं
नोलूकोऽप्यवलोकते यदि दिवा सूर्यस्य किं दूषणम्।
धारा नैव पतन्ति चातकमुखे मेघस्य किं दूषणं
यत्पूर्वं विधिना ललाटलिखितं तन्मार्जितुं कः क्षमः।

—नीति शतकम्

—करील वृक्ष में यदि पत्ते नहीं लगते तो इसमें बसन्त का क्या दोष। उल्लू यदि दिन में नहीं देख पाता तो इसमें सूर्य का क्या दोष ! यदि जल की धारा चातक के मुख में नहीं गिरती तो इसमें मेघ का क्या दोष। विधाता ने जो जिसके भाग्य में लिख दिया है, उसे कोई नहीं मिटा सकता।

मालती कुसमस्येव द्वे गतीह मनस्विनः,
मूर्ध्नि वा सर्वलोकस्य शीर्यते वन एव वा।

—नीति शतकम्

—मनस्वी पुरुष की स्थिति मालती पुष्प के समान होता है। या तो वह सब के मस्तक रहता है अथवा वन में ही सूख कर बिखर जाता है।

व्यालं बाल मृणालतन्तुभिरसौ रोद्धुं समुज्जृम्भते।
भेत्तुं वज्रमणिं शिरीष कुसुमप्रान्तेन सन्नह्यति।
माधुर्यं मधुविन्दुना रचयितुं क्षाराम्बुधेरीहते।
मूर्खान्यः प्रतिनेतुमिच्छति बलात्सूक्तैः सुधास्पंदिभिः।

—नीति शतकम्

—सुधा के समान उपदेशों से मूर्खों को सन्तुष्ट करना ऐसा ही है जैसा कि कोमल कमल की डंडी के सूत से हाथी को बांधना, सिरस के फूल से हीरे में छेद करना या शहद के एक बूंद से खारे सागर को मीठा करना।

सहकारे चिरंस्थित्वा, सलीलं बालकोकिल।
तं हित्वाऽद्यान्य वृक्षेषु विचरन्न विलज्जसे।
कल कण्ठ यथा शोभा सहकारे भवद्गिरः।
खदिरे वा पलाशे वा किं तथा स्याद्विचारय।

—भोज प्रबन्ध

—हे कोकिल ! आम के वृक्ष पर बहुत समय तक रहकर अब तुम अन्य वृक्षों पर विहार करते हुए लज्जित नहीं होती ? आम के पेड़ पर रहते हुए तुम्हारी बोली में जो सरसता है वह क्या खैर अथवा पलाश के वृक्ष पर रह सकेगी ?

कर्णेषु योग्यं नवकर्णिकारं चलेषु नीलेष्वलकेष्वशोकम्।
पुष्पं च फुल्लं नवमल्लिकायाः प्रयान्ति कांति प्रमदाजनानाम्।

—ऋतु०-६-६

—कनेर के फूल कानों में, श्यामल चंचल केशों में अशोक एवं चमेली के फूल स्थान पाकर युवतियों की कान्ति को बढ़ाते हैं।

फलमलमशनाय स्वादु पानाय तोयं
क्षितिरपि शयनार्थं वाससे वल्कलंच।
नवधनमधुपान भ्रान्त सर्वेन्द्रियाणा-
मविनय मनुमन्तुं नोत्सहे दुर्जनानाम्।

—वैराग्य शतकम्

—भोजनार्थ बहुत से फल हैं, पिपासा-शान्ति के लिए पर्याप्त जल मिल सकता है। सोने के लिए पृथ्वी प्रर्याप्त है। शरीर ढकने के लिए वृक्ष-वल्कल सुगमता से प्राप्त है। फिर धन-रूपी मदिरा को पीने वाले इन दुष्टों का अविनय (अनादर) हम क्यों सहें।

वृक्षों के प्रति जो आकर्षण है, उसमें विविधता है। कोई उनकी जड़ों पर मुग्ध है तो कोई उनके पल्लवों की कोमलता पर रीझता है। रसिकों का मन तो पादपों के सुमनों में ही सदा रमता है—

केचिन्मूला कुलाशाः कतिचिदपि पुनः स्कन्ध सम्बंधभाज-
श्छायां केचित्प्रपन्नाः प्रपदमपि परे पल्लवानुन्नयंति।

अन्ये पुष्पाणि पाणौ दधति तदपरे गंधमात्रस्य पात्रं
वाग्वल्याः किं तु मूढाः फलमहह न हि द्रष्टुमप्युत्सहंते ।

—भोज प्रबंध

—पादपों की परहित कामना कितनी महती है । ज्यों ही उनमें फल लगते हैं, वे नीचे झुक जाते हैं, जिससे जनता सुगमता से उनको तोड़ सके और अपनी फल-लालसा को शांत कर सके । कहते हैं कि सज्जन पुरुष फले पेड़ की भांति विनम्र रहते हैं :—

भवन्ति नम्रास्तरवः फलोद्गमैः—
नवाम्बुभिर्दूर विलम्बिनो घनाः ।
अनुद्धताः सत्पुरुषाः समृद्धिभिः
स्वभाव एवैष परोपकारिणाम् ।।

—फल आने पर वृक्ष नम्र हो जाते हैं । आकाश में दूर रहने वाले बादल जल से भर जाने पर नीचे झुक आ पाते हैं और जो सज्जन हैं वे समृद्धि पाकर उद्धत नहीं होते, वरन् और विनीत बन जाते हैं । परोपकार करने वालों का यह स्वभाव ही है ।

एकेनापि सुवृक्षेण पुष्पितेन सुगंधिना ।
वासितं तद्वनं सर्वं सुपुत्रेण कुलं यथा ।।

—जिस प्रकार एक वृक्ष अपने प्रिय सुमनों से समस्त कानन को सुगंधित कर देता है । उसी तरह एक सुपुत्र ही अपने कुल को गरिमामय बना देता है—

वृक्ष-प्रेमियों को कुपादप से दूर रहना आवश्यक है । जिस प्रकार कुपुत्र त्याज्य है उसी प्रकार कुवृक्ष भी ।

एकेनापि कुवृक्षेण कोटरस्थेन वह्निना ।
दह्यते तद्वनं सर्वं कुपुत्रेण कुलं यथा ।।

\+ \+ \+

दलित और उत्पीड़ित मानव के जीविकोपार्जन के साधन ये वृक्ष

कुरबक कुचाघात क्रीड़ारसेन वियुज्यसे।
वकुल विटपिन् स्मर्त्तव्यं तेमुखासव सेचनम् ।१।
चरण घटना शून्यो यास्यस्यशोक सशोकता—
मिति निज पुर त्यागे यस्य द्विषां जगदुः स्त्रियः ।२।
मुख मदिरया पादन्यासैर्विलासविलोकितै—
र्वकुल विटपी रक्ताशोकस्तथा तिलक द्रुमः।

—हे कुरबक, अब तुम्हें स्त्रियों के उरोज का स्पर्श प्राप्त न होगा। हे वकुल, अब तुम्हें युवतियों के मुखासव का पान न मिलेगा। हे अशोक, अब तुम्हें कामिनियों के चरणों का आघात प्राप्त न हो सकेगा, क्योंकि विजेता के भय से हम (स्त्री) सब यहाँ से जा रहे हैं।*

वृक्ष लगाने तथा कुआं बनवाने के महत्त्व को बतलाने के लिए निम्न श्लोक पर्याप्त है—

अस्वस्थमेकं पिचमुँदमेकं
निम्बादिमेकं दशचिञ्चणीनाम्।
कपित्थविल्वा अम्लत्रैण पंचाम्र
वापी नरकं न पश्येति ॥

देव-वाणी संस्कृत का प्रशस्त काव्य उन आश्रमों के निकुञ्जों में रचा गया था, जहाँ पादपों ने सुरभित सुमनों की प्रति पल वर्षा की थी। आज भी हम इस काव्य के अध्ययन में प्रकृति के विविधि रूपों का साक्षात्कार करते रहते हैं।

संस्कृत-काव्य में पादप-पुष्पों का उपमान रूप।

उपमेय	उपमान
मुख······	कमल

*युवती की मुख-मदिरा, पदाघात तथा प्रेम-दृष्टि से क्रमशः वकुल, अशोक एवं तिलक वृक्ष पुष्पित होते हैं।

उपमेय	उपमान
नेत्र···	कमल
कर···	कमल
सफेद दाँत···	कुंद कली, दाड़िम
अधर···	पल्लव
लाल अधर···	बिंबफल, बंधूक पुष्प
नख···	कुंदकली
नासिका···	तिल प्रसून, अगस्त पुष्प, पाटलीपुष्प
बाहु···	लता, मृणाल-नाल
युवती-शरीर···	पुष्पित लता
गौर वर्ण···	चम्पा पुष्प, केतकी पुष्प
उरोज——	सुपारी, बिल्व, श्रीफल, नारंगी, जम्बीर, नारिकेल
उरु—	कदली स्तम्भ
चरण···	कमल, पुष्प
लाल तलवा···	बन्धूक पुष्प
कोमल शरीर···	शिरीष पुष्प
वीक्षण···	कमल-पुष्प-वर्षा
मधुर भाषण···	पुष्प-वर्षा
मानव का उन्नत सुगठित शरीर···	तमाल वृक्ष
वियोगिनी का शरीर···	पीत पल्लव
चंचल दृष्टि···	कंपित लता
महादानी···	कल्पवृक्ष
सज्जन···	वृक्ष
सुन्दर, किन्तु गुणहीन मानव···	पलाश-पुष्प
विनीत गुणवान्···	फलित रसाल

उपमेय	उपमान
तपस्वी···	वृक्ष
दुष्टों से अप्रभावित महामानव···	चंदन तरु
नीरस मानव···	निम्ब
मनस्वी पुरुष···	मालती-पुष्प

प्राकृत और अपभ्रंश काव्य में पादप-पुष्प

—(::)—

प्राकृत

जाएज्ज वणुद्देसे कुज्जो वि हु
णीस हो झडि अपत्तो ।
मा माणु सम्मि लोए ताई
रसिओ दरिद्दो अ ।

•

—वन में वृक्ष वन कर पत्रहीन, शाखा-विहीन, एवं टेढ़ा होना अच्छा है, लेकिन संसार में उदार-रसिक का धनहीन होना बुरा है ।

उच्चिणसु पडिअ कुसुमं मा धुण सेहालिअं हलिअसुण्हे।
अह दे विसमविरावो ससुरेण सुओ वल असद्धो।

—गँवार हलवाहिनि, गिरे हुए फूलों को ही चुनो, हरसिंगार की डाल मत झहराओ। झहराने से वह फूल न देगा, उल्टे डाल झहराते समय जो तुम्हारी चूड़ियाँ खनकेंगीं, उसकी भनक तुम्हारे ससुर के कान में पड़ जायेगी।

तइआ कअग्घ महुअर ण रमसि अण्णासु पुप्फजाईसु।
बद्ध फलभार गुरुईं मलाईं एह्लि परिच्चअसि।

—चतुर भ्रमर ! तुम मालती पर ही पहले मुग्ध थे। और अन्य पुष्पों में कभी रमण नहीं करते थे। अब फलभार से झुकी हुई मालती को तुम क्यों छोड़ते हो !

कीर मुहसच्छहेहिं रेहइ वसुहा पलास कुसुमेहिं।
बुद्धस्स चलणवन्दण पडिएहिं व भिक्सुसंधेहिं।

—बुद्ध भगवान् के चरणों में नमस्कार करते हुए भिक्षुकों की भाँति इन तोते की चोंच के समान पलाश-पुष्पों से यह पृथ्वी सुशोभित है।

णक्खक्खुडिअं सहआर मञ्जरिं पामरस्स सीसम्मि।
बन्दिम्मिव हीरन्तीं भमरजुआणा अणुसरन्ति।

—भ्रमर के सदृश ये नवयुवक बलपूर्वक पकड़ी हुई दासी के समान आम के बौर को तोड़ मरोड़ रहे हैं।

मालइ कुसुमाइँ कुलुञ्चिऊण मा जाणिणिधुओ सिसिरो।
काअव्वा अज्जवि णिग्गुणाणं कुन्दाणँ वि समिद्धी।

—शीत काल मालती के पुष्पों को जलाकर ही शान्त नहीं है। यह तो सौरभ हीन कुन्द-पुष्पों की समृद्धि भी करेगा।

ओसरइ धुणइ साहं खोक्खा मुहलो पुणो समुल्लिहइ।
जम्बूफलंण गेह्लइ भमरो त्ति कई पढमडक्को।

—किसी समय भ्रमर से दंशित यह बन्दर जामुन वृक्ष की शाखाओं को हिलाता है, तोड़ता है और मरोड़ता है। लेकिन जामुन के फल को भौंरा समझ कर नहीं छूता।

गन्ध अग्घा अन्तअ पक्क कलम्बाणँ वाहभरि अच्छ ।
आससु पहि अजु आणअ घरिणिमुहं माण पेच्छिहिसि ॥

—आँसुओं से अपनी आँखों को भरने वाले हे पथिक ! अब तुम दुखी क्यों होते हो ? धैर्य रखो । कदम्ब के फल पक चुके हैं (अर्थात् वर्षा समाप्त हो चुकी है) अब तुम अपनी प्रेयसी के मुख को अवश्य देखोगे ।

पच्चग्गप्फुल्लदलुल्ल सन्त मअरन्द पाणलेहलओ ।
त णत्थि कुन्द कलि आइ, जं ण भमरो महइ काउम् ॥

—विकसित कुन्दकली के मधुर सौरभ को प्राप्त करने के लिए लोभी भ्रमर जो न करे सो थोड़ा है ।

कमल मुअन्त महुअर पिक्क कइत्थाणँ गंध लोहेण ।
आलेक्ख लड्डुअं पामरो व्व छिविऊण जाणिहिसि ।

—पके हुए कैथे की गंध पर मुग्ध होकर कमल को छोड़ने वाले भ्रमर, तुम उस मूर्ख के समान हो जो चित्रित लड्डू के लिए लालायित होकर असली लड्डू को छोड़ता है ।

मण्णे आ अण्णन्ता आसण्ण विआह मंगलुग्गाइम् ।
तेहिं जुआणेहिं समं हसन्ति तं वेअसवुडङ्ग ॥

—विवाह के मंगल गीतों को सुनने वाले ये बाँस के पुंज उन युवकों के साथ मेरी हँसी-उड़ा रहे हैं ।

एक्केण वि वडबी अंकुरेण सअल वण राइ मज्झम्मि ।
तह तेण कओ अप्पा जह सेस दुमा तले तस्स ।

—मेरी दशा वैसी ही है जैसे एक वट-बीज के अंकुर से समस्त वृक्ष-समूह दब-जाता है ।

बहु पुप्फ भरोणामिअ भूमीग असाह सुणसु विण्णात्तिम् ।
गोला तड विअड कुडङ्ग महुअ सणिअं गलिज्जासु ।

—गोदावरीतट के निकट निकुञ्ज में स्थित हे विशाल महुए के पेड़ ! मेरी बात सुनो, यद्यपि तुम्हारी शाखाएँ पुष्प भार से झुकी हुई हैं फिर भी एक दिन तुम नष्ट हो जाओगे ।

णिप्पच्छि माइँ असई दुःखा लो आइँ महुअपुप्फाइं ।
चीए बन्धुस्स व अट्ठि आइँ रुअई समुच्चिणइ ।

—जैसे कि कुलटा विशेष सन्ताप के साथ-चिता कीं भस्म से अपने प्रियतम की अस्थियों को चुनती है, वैसे ही यह असती महुए के अन्तिम फूलों को चुन रही है ।

पहि उल्लरण संका उलाहिं असईहिं वहलति मिरस्य ।
आइप्पणेण णिहुअं वडस्स सित्ताइँ पत्ताइं ।

—कुलटाएँ वट-वृक्षों की सघन छाया में आमोद-प्रमोद करती रहती है, उन्हें भय है कि कहीं पथिक उन पल्लवों का विनाश न कर दें, अतः वे इन पर आलेप लगा देती है ।

उप्पाइ अदव्वाणँ वि खलाणँ को भाअस्च खलो च्चे अ ।
पक्काइं वि णिम्बफलाइँ णवरँ काएहिँ खज्जन्ति ।

—दुष्टों के उपार्जित धन का दुष्ट ही उपभोग करते है, जैसे कि पके हुए नीम के फलों को कौए ही खाते हैं ।

वइविवर णिग्ग अदलो एरण्डो साहइव्व तरुणाणम् ।
एत्थ घरे हलि अबहू, एछह मेत्तत्थणी वसइ ।

—वाटिका के छोर पर खड़े हुए एरण्ड के वृक्ष अपने पत्तों से जाते हुए नव युवकों को मानो बता रहे हैं कि वाटिका के मध्य में एक सुन्दरी कामुकी है ।

हसिअं सहत्थतालं सुक्खवडं उवगएहि पहिएहिं ।
पत्त अफलाणँ सरिसे उड्डीणे सूअविन्दम्मि ।

—पत्र-फल-हीन एवं शुष्क वट-वृक्ष पर से उड़े हुए पक्षियों को देखकर पथिकों ने तालियाँ बजाई और इस वृक्ष की हँसी की ।

गन्धेण अप्पणो मालि आणं, णोमालिआ ण फुट्टिहइ ।
अण्णो को वि हआसाइ मंसलो परिमलुग्गारो ।

—अन्य पुष्पों की माला में यदि मालती-पुष्प गूँथ दिया जाय तो भी उसकी सुगंध कम न होगी । मालती का मधुर सौरभ कुछ और ही होता है ।+

+उपर्युक्त सामग्री श्रीमान् पं० अमृतलाल जी धोलकिया से मुझे प्राप्त हुई है, अतः मैं उनका आभारी हूँ ।—लेखक

अपभ्रंश

सुविसालाइं सिसिर साहाल्लइ, अविरल सुरहि पसवसोहालइ।
तरुणिकाय लग्गिय पामरपइ, जहि उववण इव गोउ लणिपरइ।

—शाल वृक्ष एवं उन पर लगे हुए पुष्पों से वह विशेष सुगन्धित हो गयी थी। वृक्षों के संघात से खिले हुए कमलों के पुष्पों से वह उपवन के समान सुशोभित थी।

कुंकम कपूरेण पसाहिय वणराइव तिलयं जण सोहिय।

—कुंकुम और कपूर से प्रसाधित वह नगर मनुष्यों से ऐसा सुशोभित था मानों वनराज का तिलक हो।

पिप्पिल दुविह उंबरा सबउंफिकरा मुहम तस समिहा।
इय पंचवि ण क्खज्जहि णेय दिज्जहि आगमे विसिछा॥

—पीपल, दोनों प्रकार की डंबरा (लकड़ी विशेष) पिपरडी, कटूवरा, इन पाँचो प्रकार के वृक्षों की समिधा न स्वयं काम में ले और न दूसरों को दे। ऐसी आगम (शास्त्र) की आज्ञा है।

सुयंधु मंदोमान• मच्छि मादउ, वसंत रायस्स पुराणु सादउ।
जणंतु• खोहं हिमएव वियंभए, समाणि णीणं अणुमाणु सुंभरा॥
जहिं जहिं मलयाणिलु परिधापइं, तहिं तहिं मयणाणलु उद्दीपइ।
अइ भुत्तउ जहिं वियसइ सुद्धउ छप्पउ किण्ण होइ रस लुद्धइ॥
जो मंदारएण णिछ कुप्पइ, सो किं अप्पउ कुरइ समप्पइ।
सामल कोमल सरस सुणिझल, कपली बहु विकेयइ णिप्फल॥
सेवउ फरसुवि छप्पउ भुल्लउ, जं जस रुचइ तं तसु भल्लउ।
लयाहरे पिंगलु पाणिरंधए, तमंत फुल्लं घुय फुल्ल गंधए॥
सुणेवि पारेवय सद्दु लीलए, स कामिणीए सह कोवि कीलए।
णंदषवणे णरणारिउ भमंति, छलवयणु परोप्पद उल्लवंति॥

कवि भणइं कंति वियसिउ असोड, सा भणइ अवस वियसइ असोउ।
पिय मिठइं एपइं सिरि हलाइं, मिठइं जिहोंति पिय सिरि हलाइ॥
पिए सरसहिं उदु इव महंपंति, कहि पिय पम सरसहिं वयहवंति।

—महाकवि नयनन्दि (सुदंसण चरिउ)

तं मेल्लेप्पिणु गोट्ठु खण्णउ, पुणु वणु पइसरन्ति आरण्णउ।
जं फल-पत्त-रिद्धि संपण्णउ, तरल तमाल तरल संदण्णउ॥
वणं जिणालयं जहा स चन्दणं, जिणिन्द-सासणं जहा स सावयं।
महा रणङ्गणं जहा सवासणं, मइन्द कन्धरं जहा स केसरं॥
णरिन्द मन्दिरं जहा स माउपं, सुसञ्च णच्चियं जहा स तालयं।
जिणेस ण्हाणयं जहा महासरं, कुतावसे तवं जहा मयासपं॥

° ° °

चन्दण चच्चाराइँ सिरि खण्डइँ,
पेक्खइ पुरें णाणाविह भण्डइं।
कुङ्कुम कत्थूरिय कप्पूरइं,
अगरु गंध सिल्हय-सिन्दूरइं।
कत्थइ कल्लूरियहुँ कणिक्कउ,
णं सिज्झन्ति तिपउ पिउ मुक्कउ।
अइ वण्णुज्जलाउ णउ मिठ्ठउ,
णं वर वेसउ वाहिर-मिठ्ठउ।

—महाकवि स्वयम्भु (पउम चरिउ)

मालइ कुसमु भमरु जिह वज्जइ,
घरे घरे गहे रुतु रुतहिं बज्जइ।
वियसिय कुसमु जाउ अइमत्तउ।
घुम्मइ कामिणियणु अइ मत्तउ।
दरिसिउ कुसमु णियई वेपल्ले।
पहिए घरु गम्मइं वेहल्ले।

नील पलास रत्तहुय किंसुय ।
भंत चित्तु जणु जाणइ किंसुय ।
देवउ लहि जगु पुञ्ज समारइ ।
वट्टइ मिहु ठाहु हियइ समारइ ।
तुरयहि अल्लहज्जिअन विज्जइ ।
नव वसंतु तरु णिहिं ना चिज्जइ ।

× × ×

ताम तहि कालि उज्जाण कील णमणो ।
चलिउ रायाण मग्गे णायर जणो ।
मंद मंदार मयरंद नंदण वणं ।
कुंद कुरवंद वय कुद चंदण छणं ।
तरान दल ताल चल चवालि कथली सुहं ।
दक्ख पउमक्ख रुछक्ख खोणी कहं
विल्ल वेइल्ल विरिहिल्ल सल्लइ वरं ।
अंब जंबीर जंब कयंक वरं ,
करुण कणवीर करमर करी रायणं ।
नाम नारंग न ग़ोह नीलं वरं ।
कुसुम रय पयर पिंजरिय धरणीपलं
जिक्ख नहु चंबु कणपल्ल खंडिय फलं
भमिय भमरउल संछइय पंकयसरं ।
मत्त कल पंठि कलपद्ध मेल्लिय सरं ।

—महाकवि वीर (जंबु सामिचरिय)

हिन्दी-कवि और पादप-पुष्प

हमारे ग्राम वृक्षों की शीतल छाया
में ही फूलते-फलते हैं।

मरकत-बरन परन, फल मानिक से,
लसै जटाजूट जनु रूख बेष हरु है।
सुषमा को ढेरु, कैधों सुकृत सुमेरु कैधों,
संपदा सकल मुद-मंगल को घरु है।
देत अभिमत जो समेत प्रीति सोइये,
प्रतीत मानि 'तुलसी' विचारि
काको थरु है।
सुरसरि निकट सोहावनी अवनि सोहै,
राम-रमनी को वट कलि कामतरु है।

—कवितावली
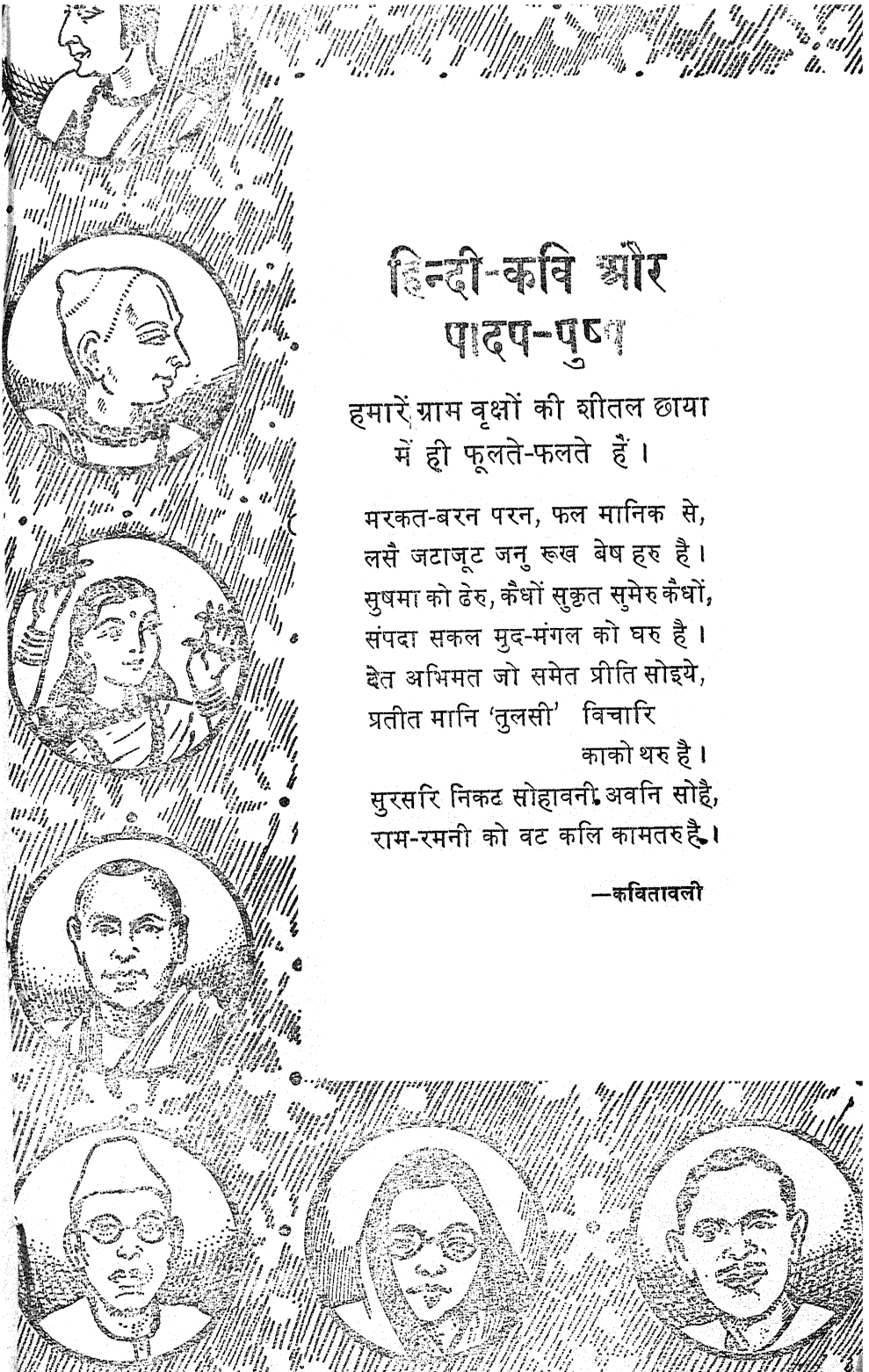
"शाल समुन्नत हरित निरंतन,
शोभित लब्ध पिङ्ग लघु सुमनन ।
पुष्पित सुरभि-भवन संतानक,
काञ्चन-कान्ति, समुज्वल चंपक ।
विकसित विपिन बकुल मधुरासव,
झंकृत अलि-कुल पान महोत्सव ।
फुल्ल पलाश लाल वन-माला,
जग ज्वलंत जनु मनसिज ज्वाला ।
मुकुलित विपिन छाप सहकारा,
सुरभि-प्रभाव भुवन सविकारा ।

—कृष्णायन

हिन्दी के प्राचीन एवं आधुनिक कवियों ने वृक्षों और पुष्पों का वर्णन विविध रूपों में किया है । सब जानते हैं कि कविता ने पादप का शीतल एवं सुखद छाया में ही जन्म पाया है और पुष्प-पराग को पीकर पुष्ट हुई है । सौन्दर्यानुभूति काव्य की सांस है और आनन्दानुभूति उसका चरम लक्ष्य । बाह्यसौन्दर्य के द्वारा आन्तरिक सौन्दर्य जन्म लेता है । ऐसी स्थिति में विटप, किसलय, पल्लव, शाखा, पुष्प, फलादि को देखकर कवि का भावुक हृदय प्रमुदित होता है और उसकी लेखनी मानस की रागात्मक भावना को अविकल करने में तत्पर हो जाती है । वसन्त-ऋतु में नवीन पल्लवों से सुशोभित पेड़-पौधे रसिकों की आंखों को लुभा ही लेते हैं । वायु के मृदु संस्पर्श से ही झुक जाने वाली पतली डाल पर विहंसते हुए पुरुष को देखकर कवि की वाणी वाचाल हो जाती है । सुन्दरता के प्रांगण में क्रीड़ा करती हुई कविता कल्पनाशील बनती है । यहीं काव्य, युग निरपेक्ष होकर भावना प्रधान हो जाता है । काव्य का दूसरा नाम ही तो सौन्दर्य है । मनोरमता की साकारता कुसुम में अभिव्यंजित हुई है । सौन्दर्य जन्य ज्ञान किसलय की कोमलता पर विश्राम करता है । पल्लवों का मर-मर शब्द जब कवि के कानों में ध्वनित होता है तभी तो उसकी मौन साधना काव्य की सृष्टि में लग जाती है । कविवर सेनापति तो माधव मास में पलाश तरु को देखकर कविता-भाव में डूब जाते हैं:—

लाल लाल टेसू फूलि रहे हैं विलास संग,
श्याम रंग भई मानों मसि में मिलाये हैं।
तहाँ मधुकाज आइ बैठे मधुकर पुंज,
मलय पवन उपवन वन धाये हैं।
'सेनापति' माधव महीना में पलास तरु,
देखि-देखि भाव कविता के मन आये हैं।
आधे अन-सुलगि सुलगि रहे आधे मानों,
विरही—दहन काम क्वैला परचाये हैं।

कवियों के निम्नस्थ वसन्त- बर्णन में विविध वृक्षों एवं पुष्पों की मनोहारिणी शोभा देखने को मिलती हैं:—

आएल ऋतुपति राज वसंत।
धाओल अलि कुल माधवि पंथ।
दिनकर किरन भेल पौगंड।
केसर कुसुम धएल हेमदंड।
नृप आसन पीपल पात।
कांचन कुसुम छत्र धरु हाथ।
मौलि रसाल मुकुल भेल ताम।
मुमुखहिं कोकिल पंचम गाय।
सिखिकुल नाचत अलिकुल यत्र।
आन द्विजकुल पटु आसिख यत्र।
चन्द्रातप उड़े कुसुम पराग।
मलय पवन सह भेल अनुराग।
कुन्दवली तरु धएल निसान।
पाटल तूण असोक दलवान।
किंसुक लवंगलता एक संग।
हरि सिसिर रितु आगे देलभंग॥

—**विद्यापति**

कँवल सहाय चलीं फुलवारी।
फर फूलन सब करहिं धमारी॥
आपु आपु महँ करहिं जोहारू।
यह वसंत सबकर तिवहारू॥

× × ×

काहू गही आँब कै डारा।
काहू जाँबु बिरह अति झारा॥
कोइ नारँग कोई झाड़ चिरौंजी।
कोइ कटहर, बड़हर, कोइ न्योजी[1]॥
कोइ दारिउँ कोइ दाख औ खीरी[2]।
कोइ सदाफर, तुरँज जँभीरी॥
कोइ जायफर, लौंग - सुपारी।
कोइ नरियर, कोइ गुवा[3], छोहारी॥
कोइ बिजौंर, करौंदा - जूरी।
कोइ अमिली, कोइ महुअ खजूरी॥
काहू हरफारेबरि कसौंदा।
कोइ अँवरा, कोइ राय करौंदा॥
काहू गही केरा कै घौरी।
काहू हाथ परी निंबकौरी॥

+ + +

पुनि बीनहिं सब फूल सहेली।
खोजहिं आस-पास सब वेलीं॥
कोइ केवड़ा, कोइ चंप नेवारी।
कोइ केतकि मालति फुलवारी॥

---

१ चिलगोजा, २ खिरनी, ३ दक्खिनी सुपारी

कोइ सदवरग, कुंद कोइ करना।
कोइ चमेली, नागकेसर बरना।
कोइ मौलसिरि, पुहुप बकौरी।
कोई रूप मंजरी गौरी[1]।
कोइ सिंगारहार तेहि पाहाँ।
कोइ सेवती कदम के छाहाँ।
कोइ चंदन फूलहि जनु फूली।
कोइ अजान-[2]बीरो तर भूली।

—जायसी

सुन्दर संग ललना विहरी वसन्त सरल ऋतु आयी।
लै लै छरी कुँवर राधिका. कमल नयन पर धायी।
द्वादस बन रतनारे देखियत, चहुँदिसि टेसू फूले।
बौरे अँबुआ औ द्रुम बेली, मधुकर परिमल भूलें।

—सूरदास

सोइ बसंत खेलहिं हंस राज,
जहाँ नभ कौतुक सुर समाज।
अछै बिरिछ तहाँ द्रुम पात,
साखा सघन लपटि जात।
बेलि चमेली विविध फूल,
सोधा अग्र गुलाब मूल।

—संत दरियादास

लगे विटप मनोहर नाना,
बरन बरन वर बेलि बिताना।
नव पल्लव फल सुमन सुहाए,
निज संपति सुररूख लजाए।

१—श्वेत मल्लिका, २ एक बड़ा पेड़, जिसके नीचे जाने से मनुष्य को सुध-बुध भूल जाती है।

विटप बेलि तृन अगनित जाती।
फल प्रसून पल्लव बहु भाँती।
सुंदर सिला सुखद तरु छाहीं,
जाइ बरनि बन छवि केहि पाहीं।

× × ×

विटप वेलि नव किसलय कुसुमित सघन सुजाति।
क़ंद मूल जल थल रुह अगनित अनवल भाँति।
मंजुल मंजु बकुल कुल, सुरतरु तरल तमाल।
कदलि कदम्ब सुचंपक, पाटल पनस रसाल।
सरित सरन सरसीरुह, फूले नाना रंग।
गुंजत मंजु मधुप गन कूजत विविध विहंग।

—**गो० तुलसीदास**

केसरि, किंसुक औ बरना, कचनारनि की रचना उर-सूली।
सेवती 'देव' गुलाब मलैं मिलि, मालती, मल्लि, मलिंदनि हूली।
चंपक, दाड़िम, नूत महाउर पाँडर डार डरावनि फूली।
या मयमंत बसंत मैं चाहन, कंत चल्यो हम ही किधौं भूली।

—**महाकवि देव**

कितहुँ बिलास, प्रवाल - जालन जटिल अंगन भूमि है।
जहँ ललित बागनि, द्रुम-लतनि मिलि रहै झिलमिल भूमि है।
चम्पा चमेली चारु चंदन, चारिहूँ दिसि देखिए,
लवली, लवंग एलानि केरे, लाख हों लगि लेखिए।
लसत विहंगम वहु लवनित, वहुँ भाँति बाग महैं।
कोकिल कीर कपोत, केलि-कल फल करत तहैं।
मंजुल महरि मयूर चटुर चानक चकोरगन।
पियत मधुर मकरंद करत झंकार मृगगन।

भूषन, सुवास फल-फूल-जुत, छहुं रितु वसत वसन्त जहँ।
इमि राजदुग्ग राजत रुचित, सुखदायक सिवराज कहँ।

—शिवराज-भूषण

आब छिरकाय दै गुलाब-कुन्द-केवड़ा कौ,
सेवती समीत बेला मालती पियारी में।
जूही-सोनजूही जाय चंपक कंदब अंब,
चंपा औ चमेली गुल चाँदनी नेवारी में।
'शिवनाथ' बात कों बिलोकिबौ न भावे मोहि,
पीव विन आयौ है बसंत फुलवारी में।
भागि चलु भीतर, अनार-कचनारौं लग,
आग उठी प्यारी गुलेलाला की कियारी में।

—कवि शिवनाथ

छकि रसाल सौरभ सने, मधुर माधुरी गंध।
ठौर-ठौर झौरत झँपत, भौंर-झौंर मधु-अंध।

—बिहारी

चालौ सुनि चन्द्रमुखी चित में सुचैन करि,
तिय बन-बागनि घनेरे अलि घूमि रहे।
कहै 'पदमाकर' मयूर मंजु नाचत है,
चाह सों चकोरनि चकोर चूमि-चूमि रहे।
कदम अनार आम अगर असोक-थोक,
लतनि-समेत लोने-लोने लगि भूमि रहे।
फूलि रहे फलि रहे फैलि रहे फबि रहे,
झपि रहे झूलि रहे झुकि रहे झूमि रहे।

—पद्माकर

पल्लव-पल्लव में नवल रुधिर,
पत्रों में मांसल रंग खिला।

आया नीली-पीली लौ से,
पुष्पों के चित्रित दीप जला।
अधरों की लाली से चुपके,
कोमल गुलाब के गाल लजा,
आया पंखुड़ियों को काले—
पीले धब्बों से सहज सजा।

× × ×

वह विजन चाँदनी की घाटी,
छाई मृदु वनतरु गंध जहाँ।
नीबू-आड़ू के मुकुलों के,
मद से मलयानिल लदा वहाँ।

—कविवर पंत

सुन्दर सर है लहर मनोरथ—
सी उठकर मिट जाती।
तट पर है कदम्ब की विस्तृत,
छाया सुखद सुहाती।
लटक रहे हैं धवल सुगंधित,
कन्दुक से फल फूले।
गूंज रहे हैं अलि पीकर
मकरन्द मोद में भूले।
आस-पास का पथ सुरभित है,
महक रही फुलवारी।
बिछी फूल की सेज,
बाजती बीणा है सुखकारी।

—रामनरेश त्रिपाठी

पौधे आज बने हैं साक़ी, ले ले फूलों का प्याला।
भरी हुई है जिनके अंदर, सौरभ मिश्रित रस हाला।
माँग माँग कर भ्रमरों के दल, रस की मदिरा पीते हैं।
झूम झपक मद झंपित होते, उपवन क्या है मधुशाला।
प्रति रसाल तरु साक़ी सा है, प्रति मंजरिका मधुप्याला।
छलक रही है जिसके बाहर, मादक सौरभ की हाला।
छक जिसको मतवाली कोयल, कूक रही डाली डाली।
हर मधु ऋतु में अमराई में, जग उठती है मधु शाला।
मंद झकोरों के प्याले में, मधु ऋतु सौरभ की हाला।
भर भर कर है अनिल पिलाता, बनकर मधुमत मनवाला।
हरे भरे नव पल्लव तरुगण, नूतन डाले वल्लरियाँ।
छक छक झुक झुक झूम रही है, मधुवन में है मधुशाला।

—बच्चन

मेरा मधुऋतु, मेरा मधुवन।
फल के वृक्ष, वृक्ष की डाली।
ऊषा जिन पर वन वैकाली,
भर भर सुधासलिल की प्याली।
दुर्वल मानव मृग को देती—
दृग का निर्झर मन का सावन।
मेरा मधुऋतु, मेरा मधुवन।

—श्रीमती शान्ति एम० ए०

अहो ! कृतारण्य-पलाशि ! धन्य तू,
निलीन सर्वाङ्ग-परार्थ में सदा।
प्रसून छाया, फल, मूल, दारु से,
सहर्ष सेवा करता मनुष्य की।

प्रसून में चन्दन के मिलिन्द है,
शयान शाखा पर भी विहंग हैं।
रसाल के ऊपर भी प्लवंग है,
लसी प्रशाखा पर वृक्ष-शायिका।

× × ×

नृपाल-आराम प्रफुल्ल-प्राय था।
मिलिन्द-नन्दा नव यूथिकाखिली,
अपार-भृंगोत्सय युक्त मालती,
मिलिन्द-वर्षामय वेशिका वनी।

—अनूप

स्थान विशेष के वर्णन में भी कवियों ने विशेष वृक्ष-पुष्पों का उल्लेख किया है। ब्रज-महिमा में कदंब कभी भी नहीं भुलाया जासकता। महाकवि तुलसीदास ने चित्रकूट-महिमा-गान में अनेक सुन्दर पादपों की स्मृति को सजग बनाया है:—

देखत चित्रकूट-वन मन असि होत हुलास।
सीता-राम-लषन-प्रिय, तापस-वृंद निवास॥
बंजुल, मंजु, बकुल, कुल-सुरतरु ताल तमाल,
कदलि, कंदब सुचंपक, पाटल, पनस, रसाल।

—गीतावली

महर्षि विश्वामित्र का आश्रम सदैव पादपों की पवित्र छाया से शीतल था।

तरु तालीस ताल तमाल हिताल मनोहर।
मंजुल बंजुल लकुच बकुल केर नारियर।
एला ललित लवंग संग पुंगीफल सोहै।
सारी शुक कुल कलित, चित्त कोकिल अलि मोहै।
शुक राजहंस कल हंस कुल, नाचत भक्त मयूर जन।
अति प्रफुल्लित फलित सदा रहै केशवदास विचित्र वन।

—रामचन्द्रिका

'हिमालय' शीर्षक कविता में श्रीधर पाठक ने लिखा है :—

देवदारु की डार कहूँ, लँगूर हिलावत।
कहुँ मर्कट को कटक, वेगसों तरु-तरु धावत।
विकसित नित नव कुसुम, तरुन तरु मुकुलित बौरत।
अलबेले अलिवृन्द, कलिन के ढिग-ढिग झौरत।

पं० रामनरेश जी त्रिपाठी ने 'मिलन' 'पथिक' एवं 'स्वप्न' नामक खण्ड-काव्यों में प्रकृति का मार्मिक चित्रण किया है। दक्षिण भारत के रमणीक स्थानों के चित्र 'पथिक' में तथा कश्मीर की सुषमा के भाव-दृश्य 'स्वप्न' में भावुकता के साथ अंकित हुए हैं, जिनसे पाठक को अनेक पेड़ पौधों तथा पुष्पों का परिचय प्राप्त होता है।

उमड़-घुमड़ कर जब घमंड से उठता है सावन में जलधर।
हम पुष्पति कदंब के नीचे, झूलाकरते हैं प्रति वासर।

—**स्वप्न**

ग्राम-गरिमा-चित्रण में नीम, पीपल, आम आदि वृक्षों की छाँह को प्रधानता दी ही जाती है।

कविवर पंत अपने प्रदेश के ग्राम की शोभा को चित्रित करते हुए लिखते हैं:—

अब रजत स्वर्ण मंजरियों से लद गई आम्र तरु की डालीं।
झररहे ढाँक, पीपल के दल, हो उठी कोकिला मतवाली।
महंके कटहल, मुकुलित जामुन, जंगल में झरबेरी झूली।
फूले आड़ू, नीबू, दाड़िम, आलू, गोभी, बैंगन, मूली।

—**ग्राम-श्री**

मथुरा के कतिपय वन-वृक्षों का उल्लेख श्री द्वारका प्रसाद जी मिश्र ने भी किया है:—

प्रौढ़ शिशिर, नभ घन नीहारा।
भूतल सर्ज, शाल-विस्तारा।

जम्बू तिन्दुक, शाक रसाला।
हरित पत्र शिर छत्र विशाला।
विकसित कुन्द फलिन खिलि फूली।
लहि अलि-अवलि, लवलि झुकि झूली।
कर्मद-सुरभित दिशा-विभागा।
पाण्डु वर्ण वन लोध्र-परागा।

—कृष्णायन,

कृष्णायन में वर्णित द्वारका की वन-श्री विशेष मनमोहिनी है:—

कान्ति हरित मणि मही विहायी।
स्वर्णिम शस्य-विपाक सोहायी।
पर्ण अशोक विलोचन-मोहन।
वन-श्री-चरण-अलक्तक शोभन।
शाल समुन्नत हरित चिरंतन।
शोभित लब्ध पिङ्ग लघु सुमनन।
पुष्पित सुरभि-भवन संतानक।
काञ्चन-कान्ति, समुज्ज्वल चंपक।
विकसित विपिन बकुल मधुरासव।
झंकृत अलि-कुल पान-महोत्सव।
फुल्ल पलाश लाल वन-माला।
जग ज्वलंत जनु मनसिज-ज्वाला।
मुकुलित विपिन छाय सहकारा।
सुरभि-प्रभाव भुवन सविकारा।

दोहा— कुसुमित मधु-निधि, माधवी, कुसुमाकर-शृंगार।
पुलकित लहि अँग-सँग, अनिल-अलि-चुंवन-गुंजार॥
मही सुमन, सरि सर सुमन, शून्यहु सुरभि प्रसार।
वसेउ सुमनशर मिस सुमन, मनहुँ छाय संसार॥

—कृष्णायन

फ़ारस देश के जंगलों की शोभा बढ़ाने वाले चिनार, शाह-बलूत, आजाद, शमशाद, सरो, सरोसरी आदि वृक्ष बड़े ही सुहावने होते हैं। यहाँ की कानन-भूमि में खिलने वाले नरगिस, एवं गुले लाला नामक पुष्पों की रंगीनी और सुन्दरता पर सबका मन मुग्ध होजाता है—

करते हैं विहार पर्वत पर,
शाह्-वलूत और आज़ाद।
सुन्दरता के पुतले बनकर,
शोभा सरसाते 'शमशाद।'
लचका देता बड़े लोच से,
सरो सुडोल सुरम्य शरीर।
निर्निमेष नयनों से नरगिस,
लखती रहती यह तस्वीर।

× × ×

कहीं मोरपंखी का पौधा, कहीं लवंगलता है।
खोले केश कहीं पर विरहिन, सम्बुल काम लता है।
मौलसिरी की कहीं कतारें, पारिजात की अवली।
परियों सी उड़ती फिरती है, तितली पुष्पासव पी।
बौराए 'रसाल' रम्भा सँग, नारिकेल में रत हैं।
विविध ताल ऊँचे सुशाल, रोके सिर पर नभछत है।
पत्ते-झालर से अशोक हिल, हिल हैं व्यजन डुलाते।
रंग विरंगे फूल झूल डाली पर मधुप बुलाते।
फूलों ही में डूब रही है कचनारों की काया।
विटप 'सक्टेश्वर' फूलों से लाल लाल हो आया।
'इमलतास' बर बना हुआ है पहिने जोड़ा पीला।
नारंगी है भरी रंग में, यौवन लिये रसीला।
नई अनारी कलियों ने कैसी है आग लगाई।

जो 'पय कहाँ' 'कहाँ पय' की चातक ने टेर उठाई ।
बेले की अलबेली छवि है, गेंदे का रंग चोखा ।
गुलमेंहदी है बड़ी रसीली, है शृंगार अनोखा ।
रजनी गंधा निशि की रानी, जूही है मस्तानी
गुलसब्बो सुगंध मतवाली है केतकी सुहानी ।

—नूरजहाँ

× × ×

विष्णुपदी (गंगा) की स्थान-विशेष के आधार मानकर 'अंगराज' नामक महाकाव्य में जो सुषमा वर्णित है उस में अनेक पादप-पुष्पों का उल्लेख हुआ है—

विष्णुपदी पदवी-सुषमा उसकाल सभीविध थी रसवंती ।
गर्वित थी करके मधु-सृष्टि, वहां प्रमना[1] मधुजा[2] गुणवंती ।
कुंजर-पुंज[3] मधुद्रुम[4] नन्दिन,[5] मन्दट[6] कंदल[7] की अवली थी ।
मुंज महोषधि वंजुल,[8] श्यामलता, सुमना[9] मधुरा लवली थी ।
नंदि[10] प्रमन्द[11] कहीं मुचकुंद कहीं वर कुंद शकुंद[12] कली थी ।
मंजुल भृंग-विहंगम-गायन, गुंजित-झंकृत कुंजगली थी ।
केलिक[13]केलिकदम्ब कलिंगक,[14]लिंगक-छादितसी[15]अवनी थी ।
रंजक गुच्छक रंज करंज निकुंजमयी अतिमंजु बनी थी ।
कोकिल कंजक कीरक, कंजर-क्रीड़ित कूजित तीरवनी थी ।
मंद सुगंधित वायु सनी कमनीय बनी, वह माधवनी थी ।
श्री वर, पुस्कर और सरोज, सरोवर में इस भाँति खड़े थे ।
मानो रविप्रिय नीलम हीरक ही, कमलालय मध्य जड़े थे ।
भाव सभी हृद के दृश्यस्थल के उनके, निस ज्यों उभड़े थे ।
या अभिराम सरोवर की सुषमा पर दर्शक नेत्र गड़े थे ।

—अंगराज

---

१ प्रसन्न, २ पृथ्वी, ३ पीपल, ४ आम, ५ बरगद, ६ देवदास, ७ केला, ८ बेंत, ९ चमेली, १० धव, ११ वृक्षविशेष, १२ कनेर, १३ अशोक, १४ पाकर, १५ कपित्थ
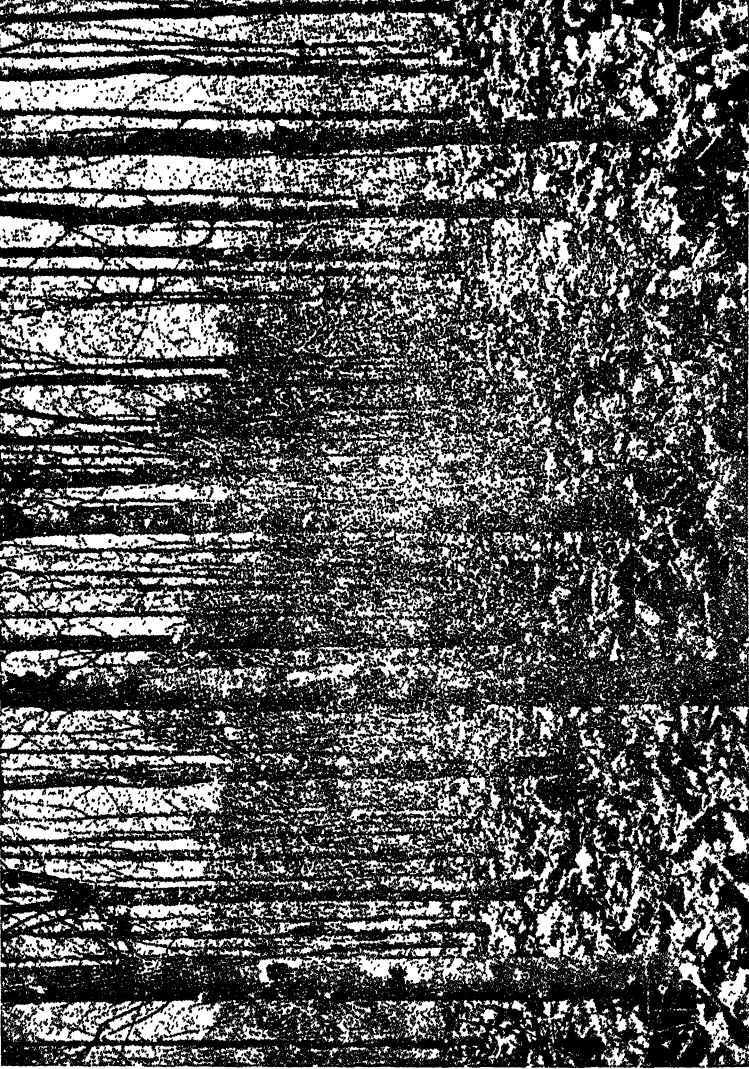
विन्ध्यावटी में सागौन का रोप-वन

हिन्दी-काव्य में पादप-पुष्पों का उपमान रूप

उपमेय	उपमान
मुख	कमल, पुष्प, गुलाब का फूल
नेत्र	कमल, बादाम, गुल्लाल
हाथ	कमल, किसलय
दांत	कुन्दकली, अनार के दाने
अधर	पल्लव
लाल अधर	बिंब फल
नख	कुन्दकली
नासिका (नाक)	तिल प्रसून
कपोल	सेव
शरीर	पुष्पित लता
गौर वर्ण	सोनजुही, चम्पा का फूल, केतकी का फूल
उरोज	अमिया, बेल-फल, श्रीफल, नारंगी, नीबू
भुजा	लता, वृक्ष की शाखा, आम की शाखा
मलिन चोटी—(वेणी)	कीचड़ में सनी हुई कमल-नाल
उरु	कदली
चरण	कमल
लाल तलवा	दुपहरिया का फूल
कोमल शरीर	शिरीष पुष्प
उन्नत सुगठित शरीर (मनुष्य का)	तमाल (वृक्ष)
वियोगिनी का शरीर	पीला पत्ता
चंचल दृष्टि	कंपित बेल,
महादानी	कल्पवृक्ष
धनवान कृपण	खजूर का पेड़
सज्जन	वृक्ष
दुष्ट पुरुष	बबूल का पेड़
तपस्वी	वृक्ष

उपमेय	उपमान
मिष्ट भाषी दुष्ट	बिंब फल
सफेद बाल	फूला हुआ कांस
वियोगिनी का शरीर	मसला हुआ फूल
वियोगिनी की पीठ	केले के पत्ते का पृष्ठ भाग
संयोगिनी का शरीर	केले के पत्ते का सीधा भाग
अयोग्य व्यक्ति	कदली, अरंड
भक्त	सूर्य मुखी (फूल)
मूर्ख	बेत का पेड़
वैभव	फूल
लज्जाशीला नारी	छुई मुई—(एक लता)
वैद्य	नीम का पेड़
परोपकारी	वृक्ष
विरक्त	कमल
परमस्नेही	कमल
घावों से युक्त शरीर	कुसुमित पलाश

प्राकृतिक सुषुमा के प्रमुख आधार ये द्रुम और पुष्प हैं, मानव का इनके प्रति विशेष लगाव है, इसीलिए उसने इनको अपनाया है और उनके उपकार को साभार स्वीकार भी किया है। मानवतावादी कवि के स्वरों ने वृक्ष-पुष्प के विषय में समय-समय पर बहुत कुछ गाया है—

फूट पड़ा लो निर्झर
मरुत-कम्प अर।
झूम-झूम, झुक-झुक कर
भीम नीम तरु निर्भर,
सिहर-सिहर थर-थर-थर,
करता सर-मर चर-मर
नर तर भर-भर
रेशम के-से स्वर भर

घने नीम दल,
झूम-झूम झुक-झुक कर
भीम नीम तरु निर्भर,
सिसर-सिहर थर-थर-थर।
करता सर मर,
चर मर मर।

—कविवर पंत

स्वकीय पंचांग प्रभाव से सदा,
बनस्थली बीच निगोरता बढ़ा।
किसी गुणी वैद्य समान था खड़ा,
स्व-निम्बता गर्वित वृक्ष निम्ब का
असंख्य न्यारे पत्र पुंज से सजा,
प्रभूत पत्रावलि में निमग्न था।
प्रगाढ़ छाया-प्रद औ जटा-प्रसू,
विटानुकारी-वट था विराजता।

—हरिऔध, (प्रियप्रवास)

ऋषियों आचार्यों नीतिकारों उपदेशकों ने इन (वृक्ष-पुष्पादि) के माध्यम से महान् सिद्धान्तों का प्रतिपादन एवं समर्थन किया है। भगवान् राम का भरोसा करनेवाला भक्त पर्वत की चट्टान पर खड़े हुए वृक्ष के समान फलता-फूलता है। इस समीचीन सत्य का निरूपण पादप के दृष्टान्त से इस प्रकार हुआ है—

तुलसी बिरवा बाग में, सींचे से कुम्हलायँ।
राम भरोसे जे रहें, पर्वत पै हरियायँ।

त्याग करने से श्री की वृद्धि ही होती है और वैभव बढ़ता है। कथावाचक कहा करते हैं कि पतझड़ में अपने पत्रों को दान देकर जैसे पेड़ विशेष रूप से पल्लवित और पुष्पित होते हैं, वैसे ही दाता दान देकर अपनी सम्पत्ति को बढ़ाता है।

संत सुन्दरदास द्वारा वर्णित यह अलौकिक वसन्त अध्यात्म प्रेमियों को अधिक प्रिय है—

अंधकार मिट गइले ऊगल भान।
हंस चुगै मुक्ताफल सरवर मान।
सहज फूल फर लागत बारह मास,
भँवर करत गुंजरिनि विविध विलास।
अंब डार पर बैसल कोकिल कीर,
मधुर मधुर धुनि बोलइ सुखकर सीर।
सबके द्रुमन भावत सरस बसंत,
करत सदा कौतूहल कामिनि कंत।

मालिन को देखकर कलियों की पुकार और बढ़ई को देखकर वृक्षों का काँपना वैसा ही है जैसा मत्यु-दर्शन से प्राणी का विकल होना।

मालिन आवत देखिकर, कलियाँ करी पुकार।
फूले फूले चुनि लिये कालि्ह हमारी वार।
वाढ़ी आवत देखि करि, तरवर डोलन लाग।
हम काटै की कुछ नहीं, पंखेरू घर भाग।

—कबीर

नीति-विज्ञान लोक-जीवन में परमावश्यक है। इसका ज्ञान न होने से मानव-जीवन - यात्रा कंटकाकीर्ण हो जाती है ? हमारे नीति विशारदों ने कतिपय नीति विषयक सूक्तियों को वृक्ष का अवलंबन लेकर समझाया है—

नदी तीर को रूखरा, बिनु अंकुश करि नार।
राजा मंत्री तैं रहित, विगरत लगै न वार।
महाराज महावृक्ष की सुखदा सीतल छाय।
सेवत फल लाभै न तौ, छाया तौ रह जाय।
एक मात के सुत भए, एक मते नहिं कोय।
जैसें कांटे बेर के, बांके सीधे होय॥

—बुधजन-सतसई

रहिये लटपट काट दिन, बरु घामे मां सोय।
छांह न वाकी जाइए, जो तरु पतरो होय।
जो तरु पतरो होय, अवसि वह धोखा दै है।
जा दिन बहै बयार, उखरि वह जरतें गिरि है।
कह गिरधर कबिराय, छाँह मोटे की गहिये।
पाता सब झर जाय, तऊ छाया माँ रहिए ॥

—गिरिधर

सिंह गमन सुपुरुष बचन, कदलि फलै इक सार।
तिरिया तेल हमीर हठ, चढ़ै न दूजी बार।
गयो समय फिर नामिलै, कोटिक करौ उपाय।
गिरौ पात फिर ना लगै, विपट भलैं झुकि जाय।

सज्जन दुःख देने वाले को भी सुख देते हैं। महापुरुष परहितार्थ ही जीवित रहा करते हैं। नीति के इस प्रनीत सिद्धान्त को निम्नस्थ छंद में इस प्रकार स्पष्ट किया गया है:—

अंब से कल्पतरु पाथर सों मारियत,
देत हैं सुफल उर औगुन न आने हैं।
उदर धरा को फारि नीर को निकासत हैं,
जग को जियावत हैं ममता न माने हैं।
केतो दुःख सहत कपास निज काम बिन,
ढँकत कहाय लाज राखत जहाने हैं।
कनक पराये काज ताड़न दहन सहै,
ऐसे उपकारी दुखही को सुख माने हैं।

सुमन की विपट के प्रति यह प्रार्थना कितनी विनम्र एवं मार्मिक है। इस अनुनय-विनय में विशुद्ध अंतः करण की पुकार है। सच्चा भक्त इसी प्रकार अपने भगवान् से अभ्यर्थना करता रहता है—

सुनिए विपट वर सुमन तिहारे हम,
राखिहौ जुपास सोभा रावरी बढ़ोवेंगे।

तजिहौ हरखि कै तौ विलगु न मानैं कछू,
जहाँ जहाँ जैहैं तहाँ तेरो जस गावेंगे।
सुरनचढ़ैंगे नर–सिरन चढ़ैंगे वर,
सुकवि अनीस हाट बाट में बिकावेंगे।
देश में रहैंगे परदेस में रहैंगे,
काहू बेस में रहैंगे तऊ रावरे कहावेंगे।

वृक्षों एवं पुष्पों का आलंकारिक प्रयोग बहुत ही सुंदर होता है। इस संबंध में कतिपय उदाहरण यथास्थान दिये गये हैं। अन्योक्ति विषयक कुछ दृष्टान्त यहाँ और दिये जा रहे हैं।

'रहिमन' अब वे बिरछ कहँ, जिनकी छांह गंभीर।
अब तो जहँ तहँ देखियत, सेहुंड कंज करीर।।

—रहीम खानखाना

जिन दिन देखे वे कुसुम, गई सु बीति बहार।
अब अलि रही गुलाब में, अपत कँटीली डार।

इहीं आस अटक्यौ रहतु अलि गुलाब कैं मूल।
ह्वै हैं बहुरि वसंत ऋतु, इन डारिन वे फूल।।

—बिहारी

चंपा तोमैं तीन गुन, रूप, रंग अरु बास।
ओगुन तोमैं एक है, भँवर न आवत पास।

महुआ नित उठि दाख सों, करत मसलहत आय।
हम तुम सूखे एक से, हूजत हैं रस राय।
हूजत हैं रसराय बिगल जिन जिय में आनो।
मधुराई में अधिक नेक नहिं अंतर मानो।
कह गिरधर कविराय, कहत साहिब सो रहुआ।
तुम नीची कुल बेलि, वृच्छ हम ऊँचे महुआ।

रंभा झूमत हौ कहा थोरे ही दिन हेत।
तुम से केते ह्वै गये, अरु ह्वै हैं यहि खेत।
अरु ह्वै हैं यहि खेत, मूल लघु साखा हीने।
ताहू पै गज रहै, दीठि तुम पै नित दीने।
बरनै दीन दयाल, हमैं लखि होत अचंभा।
एक जन्म के लागि, कहा झुकि झूमत रंभा।

नाहीं भूलि गुलाब तू, गुनि मधुकर गुंजार।
यह बहार दिन चार की बहुरि कँटीली डार।
बहुरि कँटीली डार, होंहिगी ग्रीषम आये।
लुवै चलैंगी संग, अंग सब जै हैं ताये।
बरनै दीनदयाल फूल जौलौं तो पाहीं।
रहे घेरि चहुँ फेरि, फेरि अलि ऐहैं नाहीं॥

—दीनदयाल गिरि

जाके एकौ एकहू, जग व्यवसाय न कोय।
सो निदाघ फूलै फलै, आक डहडहो होय।

—बिहारी

नहिं पावस ऋतुराज यह, सुनि तरवर मति भूल।
अपत भए बिनु पाइहैं, क्यों नवदल फल-फूल।

—बिहारी

कवि नंदराम ने अपनी अनुप्रास-प्रियता दिखाते हुए इन पंक्तियों में हरे - भरे ृक्षों को भी चित्रित किया है।

हरी हरी भूमि जहाँ हरी हरी लोनी लता,
हरे हरे पात हरे हरे अनुराग में।
कहै 'नंदराम' हरे हरे यमुना के कल,
हरित दुकल हरे हरे मोती माँग में।

हरे हरे हारन में हरित बहारन में,
हरी हरी डारन में हरे हरे भाग में।
हरे हरे हरि को मिलन जात हरे हरे,
हरी हरी कुंजन में हरे हरे बाग में।

नायिका के तलवे की लालिमा को देखकर कविवर बिहारी को दुपहरिया के लाल-पुष्प का ध्यान हुआ था:—

पग पग नग अगमत परति, चरन अरुन दुति झूलि।
ठौर ठौर लखियत उठे, दुपहरिया के फूलि।

रोमाञ्चित तन की उपमा कदम्ब-पुष्प की माला से देना कितना स्वाभाविक है:—

मैं यह तो ही में लखी, भगति अपूरव बाल।
लहि प्रसादमाला जुझै, तन कदम्ब की माल।

—**बिहारी**

फूल सा मुखड़ा तथा वृक्ष की टहनी सी तन्वही सभी के लिए आकर्षक होती है। नेत्र के श्वेत रंग का उपमान कुन्द पुष्प है। सफेद दान्तों की तुलना कुन्द कलियों से भी की जाती है। पतले एवं लाल अधरों के उपमान प्रवाल, बिंव फल, बंधूक पुष्प, एवं पल्लव माने गये हैं। कठिन उरोज के लिए कवि-सम्मत उपमान पुंगी फल, बेल, जंभीर, बीजपूर आदि हैं। उरु की उपमा हाथी की सूंड़ तथा कदली स्तंभ से दी जाती है।* इस प्रकार पादप, पुष्प, पल्लव एवं फल आदि का साहित्यिक महत्त्व भी कम नहीं है। इस कथन के समर्थन में कतिपय कवियों की रचनाओं की ये पक्तियाँ पर्याप्त हैं।

अधर दसन पर नासिक सोभा। दारिउँ बिंव देखि सुक लोभा।

× × ×

कदिल-गाभ कै जानौ जोरी, औ राती ओहि कँवल-हथोरी॥

× × ×

***हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृ० २६४-२६६**

कोंपर कुटिल केस नग कारे। लहरन्हि भरे भुअंग वैसारे॥

× × ×

अधर सुरंग अभी-रस-भरे, बिंब सुरंग लाजि बन फरे॥

फूल दुपहरी जानौं राता, फूल झरहिं ज्यों ज्यों कह बाता॥

× × ×

फिर जोवन भए नारंग साखा।

सुआ विरह अब जाइ न राखा।

× × ×

तन जस पियर पात भा मोरा।

तेहि पर विरह देइ झक झोरा।

× × ×

तिल के पुहुपु अस नासिक तासू।

औ सुगंध दीन्ही बिधि बासू।

× × ×

ऐसि चमक मुख भीतर होई।

जनु दारिउँ औ साम मकोई।

× × ×

अमृत-कोंप जीभ जनु लाई। पान फूल असि बात सोहाई॥

× × ×

कर-पल्लव जो हथोरिन्ह साथा। वै सब रकत भरे तेहि हाथा॥

× × ×

हिया थार, कुच कनक-कचोरा। जानहुँ दुवौ सिरीफल-जोरा॥

× × ×

कँवल कपोल ओहि अस छाजै। और न काहु दैउ अस साजै॥

पुहुप पंक रस-अमिय सँवारे। सुरँग गेंद नारँग रतनारे॥

—मलिक मुहम्मद जायसी (पद्मावत)

चरन कमल वंदौं हरिराई।

× × ×

जा दिन मन पंछी उड़ि जैहै
ता दिन तेरे तन-तरुवर के सबै पात झरि जैहैं।

× × ×

अति कोमल कर चरन सरोरुह, अधर दसन नासा सोहै री।

× × ×

अधर अरुन अनूप नासा, निरखि जन सुखदाइ।
मनौ सुक फल बिंब कारन, लेन बैठो आइ।

× × ×

जानु जंघ सुघट निकाई, नाहि रंभा तूल।
पीत पट काछनी मानहुँ, जलज-केसरि झूल।

× × ×

भुज अजानु उदार अति, कलप द्रुम सुधा निधान।

× × ×

नंद-नंदन के अंग अंग प्रति उपमा न्याय दई।
कुंतल कुटलि भँवर भरि भाँवरि मालति भुरै लई।
तट बारु उपचार चूर मनो, स्वेद प्रवाह पनारी।
बिगलित कच कुस कास पुलिन मनो पंकज कज्जल सारी।

× × ×

कदली-दल सी मीठि मनोहर सोजनु उलटि गई।

× × ×

—सूर सागर

हेमलता सिय मूरति मृदु मुसकाइ।
हेम हरिन कहँ दीन्हेउ प्रभुहि देखाइ।
सीय बरन सम केतकि, अतिहिय हारि।
कितेसि भँवर कर हरवा हृदय बिदारि।

—गो० तुलसीदास (बरवै-रामायण)

सुन्दरबदन सरोरुह-लोचन, मरकत-कनक बरन मृदुगात।

× + ×

घायल वीर विराजत चहुँ दिसि, हरषित सकल ऋच्छ अरु बनचर
कुसुमित किंसुक तरु-समूह महँ,
तरुन तमाल बिसाल विटप वर।

—गीतावली

तुलसी तेऊ सनेह को सुभाउ मानो,
चलदल को सो पात करै चित चरको

—गीतावली

० ० ०

वरदंत की पंगति कुंदकली, अधराधर पल्लव खोलन की।
चपला चमकै घन बीच जगै, छबि मोतिन माल अमोलन की।

—कवितावली

× × ×

मानी महिप कुमुद सकुचाने।
कपटी भूप उलूक लुकाने।

× × ×

कर सरोज जयमाल सुहाई।
विश्व-विजय सोभा जेहि छाई।

× × ×

पुरइन सघन चारु चौपाई।
जुगुति मंजु मनि सीप सुहाई।
छंद, सोरठा, सुन्दर दोहा।
सोइ बहु रंग कमल कुल सोहा।

× × ×

हे खग मृग हे मधुकर स्रेनी।
तुम देखी सीता मृगनैनी।

खंजन सुक कपोत मृग मीना।
मधुप निकर कोकिला प्रवीना।
कुंद कली दाडिम दामिनी।
कमल सरद ससि अतिभामिनी।
वरुन पास मनोज धनु हंसा।
गज केहरि निज सुनत प्रशंसा।
श्रीफल कनक कदलि हरषाहीं।
नेकु न संक सकुच मन माहीं।

× × ×

फूले कमल सोह सर कैसे।
निर्गुन ब्रह्म सगुन भए जैसे।

—रामचरित मानस

सुन्दर सुवास अरु कोमल अमल अति,
सीताजू को मुख सखि केवल कमल सो।

× × ×

काम ही की दुलही सी काके कुल उलठी सी,
लहलही ललित लता सी अवरोहिए।
सोने की एक लता तुलसी बन क्यों, वरणों सुनि बुद्धि सकै छ्वै,
केशवदास मनोज मनोहर ताहि फले फल श्रीफल सेब्बै।
फूलि सरोज रह्यो तिन ऊपर रूप निरूपत चित्त चलै च्वै।
तापर एक सुवा शुभ तापर खेलत बालक खंजन के द्वै।

× × ×

तक ताहि कर-पल्लव सों छ्वै, फूल मूल जिमि टक्करचो है।

—केशवदास

कर के मीड़े कुसुम लौं, गई बिरह कुम्हिलाय।
सदा समीपिन सखिन हू, नीठि पिछानी जाय

सोरठा— बिरह सुखाई देह, नेह कियो अति डहडहो।
जैसे बरसे मेह, जरै जवासो ज्यों जमैं।
वाही निसितें ना मिटो, मान कलह को मूल।
भले पधारे पाहुने, ह्वै गुड़हर को फूल।

—बिहारी

लै पट पीतम के पहिरै, पहिराइ पिया चुनि चूनरी खासी।
त्यों पदमाकर साँझहितें, सिंगरी निसि केलि-कला परगासी।
फलत फूल गुलाबन के, चटकाहट चौंकि चली चपला सी।
कान्ह के काननि आँगुरी नाइ रही लपटाइ लवंग लतासी।

—पद्माकर

फूल से फैलि परै सब अंग,
दुकूलन मैं दुति दौरि दुरी है।
आंसुन के जल पूर मैं पैरति,
सांसन सों सनि लाज लुरी हैं।

—देव

तुम मुग्धा थीं, अति भाव प्रवण,
उकसे थे अम्बियों से उरोज।
चंचल प्रगल्भ, हँसमुख उदार,
मैं सलज-तुम्हें था रहा खोज।

—पन्त

जो तमाल सा खड़ा हुआ है ले विश्वास अमर जीवन में।
जिसने झुकना कभी न सीखा मूक व्यथा के सूनेपन में।।

—भ्रमर

माधवी सी मुदित, माधव सी सरस।
माधुरी सी मधुर, फिर कैसे विरस।

—शीला

चम्पा के फूलों सी गोरी,
और नमित तरु की डाली सी।

ले गुलाब सा आनन-सुंदर
इठलाती रति मतवाली सी।

—चन्द्र

किसलय सा कोमल तन जिसका,
मन चंचल जिसका चलदल सा।
उस युवती का सुरभित पल-पल,
कैसे सीमित हो अंचल सा।

—अज्ञात

निस्सार संसार को सेमल के फूल के समान बताकर संतों ने जग-जीवों को सचेत किया है—

यहु ऐसा संसार है जैसा सेमल फूल।
दिन दस के व्यौहार कौं, झूठै रंगि न भूल।

—कबीर

संत रैदास ने अपना दैन्य दिखाने के लिए भगवान् को चंदन वृक्ष बताया है और स्वयं को रेंड कहा है—

तुम चंदन हम इंरड बापुरे,
संगि तुमारे बासा।
नीच रूप तें ऊँच भये हैं
गंध सुगंध निवासा।

प्रतीकों के रूपों में भी वृक्ष, प्रष्प, पल्लव, शाखादि का कवियों द्वारा प्रयोग हुआ है। प्रतीकों के प्रति काव्यकारों का मोह पुरातन है। प्राचीन संस्कृत साहित्य—वेद, उपनिषद् और पुराणों में प्रतीकों की योजना प्रचुरता के साथ उपलब्ध होती है। वेदों में उल्लिखित 'ऊँकार' अपर ब्रह्म और परब्रह्म का वाचक एवं अक्षर ब्रह्म का प्रतीक है। उपनिषदों में तो प्रतीक और स्पष्टता के के साथ आये हैं। परब्रह्म परमात्मा का सामीप्य लाभ कौन कर सकता है यह बात रथ और रथी के रूपक द्वारा बतायी गयी है।········उपनिषद् का एक बहुत ही विश्रुत श्लोक है—

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते ।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वन्यश्नन्नन्यो अभिचाकशीति ।+

—कठोपनिषद्

यहाँ वर्णित दो पक्षी क्रमशः जीवात्मा और परमात्मा के प्रतीक हैं। वृक्ष संसार का प्रतीक है। संत काव्य में इस प्रकार के बहुत से प्रतीक सुगमता से प्राप्त हो सकते हैं। निम्नस्थ कबीर की पंक्तियों में अलौकिक वृक्ष और गुणवन्ती बेलि आत्मा के प्रतीक हैं—

आगैं आगैं दौ जलै, पीछै हरियर होइ।
बलिहारी ता विरछ की जड़ काट्यां फल होइ।
जे काटौं तौ डहडही, सीचौं तौ कुमिलाइ।
इस गुणवन्ती बेलिका, कुछ गुण कह्या न जाइ।

पादपों को प्रतीक-रूप में ग्रहण करने की परम्परा नवीन नहीं है। पुष्पित तरु समृद्धिशाली परिवार का प्रतीक माना जाता है और सूखा विटपी दरिद्र वंश का। कलिका को बालिका का प्रतीक और सुरभित पुष्प को सुन्दर युवक का प्रतीक सब मानते हैं।

कबीर ने अपनी उलटवासियों में वृक्ष को शरीर का प्रतीक माना है। मलिक मुहम्मद जायसी का प्रबन्ध काव्य पद्मावत प्रतीकात्मक ही है। प्रो० रस्तोगी ने बिहारी के निम्नस्थ दोहे से गुलाब और कटीली डार को क्रमशः यौवन, (समृद्धि, राग, रंग, रति और गंध) तथा दुर्दिन का प्रतीक माना है।

जिन दिन देखे वे कुसुम, गई सुबीति बहार।
अलि अब रही गुलाब में, अपत कटीली डार।*

आधुनिक छायावादी काव्य में प्रतीकों का बाहुल्य है।

प्रकृति के मानवीकरण के अन्तर्गत, लता, पादप, किसलय, पल्लव शाखा आदि को भी मानवीय अनुभूतिमय चित्रित किया गया है। इस रूप में ये

+हिन्दी काव्य की अन्तश्चेतना—प्रो० रस्तोगी,

*हिन्दी काव्य की अन्तश्चेतना

मानव - चेतना से समन्वित होकर मानव-सदृश व्यवहार करते हुए दिखाई देते हैं।

महाकवि निराला की 'जुही की कली' अमल कोमल तनु तरुणी सी विजन वन वल्लीरी पर सोती हुई दृष्टि गोचर होती है:—

विजन वन वल्लरी पर,
सोती थी सुहाग भरी,
स्नेह स्वप्न मग्न,
अमल कोमल तनु तरुणी,
जुही की कली,
दृग बन्द किये,
शिथिल पत्रांक में।........

कविवर गुप्त की 'यशोधरा' में पेड़ भी भगवान् बुद्ध के त्याग-भाव से प्रभावित होकर पल्लवों का परित्याग करते हैं।

पेड़ों ने पत्ते तक उनका त्याग देखकर त्यागे।
मेरा धुंधलापन कुहरा बन, छाया सबके आगे।

× × ×

'कृष्णायन' में भगवान् कृष्ण के स्वागत में मथुरा के तरु नत मस्तक होकर पुष्प-समर्पण करने लगते हैं:—

भरे विकच अंबुज आमोदा,
बहत अनिल सरि-सिक्त समोदा।
प्रणमत अवनत मस्तक तरु गण,
करत सुमन-फल अर्घ समर्पण।
मंगल-कलश ताल-फल राजत,
मार्ग-विटप प्रतिहार विराजत॥

'बनश्री' का एक वृक्ष समीर-रस पीकर झूलता है और सरिता दर्पण में अपने सुन्दर रूप को देखकर फूला नहीं समाता:—

पी-पीकर समीर-रस तटपर एक वृक्ष है झूल रहा।
रूप देख सरिता-दर्पण में, गर्व सहित है फूल रहा।
पावस में वारिद वाणों को अपने सिर पर लेता है।
सरिता पर फैली डालों से, मोती बरसा देता है।

—ठा० गुरुभक्त सिंह (बनभी)

पल्लव का मधु संगीत भी अपना महत्त्व रखता है। महादेवी जी की दृष्टि में पादप के पत्र सरस गीतों को गा-गाकर विश्व के मानव-मन को उल्लसित किया करते हैं—

सौरभ का फैला केश-जाल करती समीर परियाँ विहार।
गीली केसर मद झूम-झूम, पीते तितली के नव कुमार।
मर्मर का मधु संगीत छेड़, देते हैं हिल पल्लव अजान।

श्री गोपालशरण सिंह ने लतिकाओं को मुस्काते हुए भी देखा है—

फूलों के मिस लतिकाएँ सब,
मंद-मंद मुस्काती हैं।
पल्लवरूपी पाणि हिलाकर,
मन के भाव बताती हैं।

निश्चयेनः वृक्ष एवं पुष्प प्रत्येक साहित्य के सौरभ-चिह्न हैं। प्रकृति-वर्णन इनके ही रूप-रंग से सजीव बनता है। कविजन परम्परा गत पेड़ों के उल्लेख या वर्णन से आगे भी बढ़े हैं। हरिऔध जी ने तो 'प्रिय-प्रवास' (सर्ग ९) में पूर्व वर्णित पेड़ों के नाम गिनाकर (जम्बू, अम्ब, कदम्ब, निम्ब, फालसा, जम्बीर, आँवला, लीची, दाड़िम, नारिकेल, इमली, शिंशिया, इंगुदी, नारंगी, अमरूद, विल्व, वदरी, सागौन, शाल, ताल, कदली, शाल्मी, आदि) उनका यमक प्रधान चमत्कारपूर्ण वर्णन कर दिया है। नवीन कवियों ने यह सूची और बड़ी कर दी है। पंत जी की दृष्टि चीड़, शाल, बाँस, नीम, चिलबिल, सफेदा, (युक्लिप्टिस) नीबू, आड़ू, दाड़िम, कटहल, जामुन, झरबेरी, आंवले और सूखे हुए ठूंठे तरुओं पर भी गयी है। नरेन्द्र को पलाश व अमलतास भाये हैं। 'दिनकर' बाँसों की हरियाली (रेणुका) पर फ़िदा हैं। तो बच्चन गुलमुहर (मिलन यामिनी) पर।

'प्रसाद' को देवदारु प्रिय है। निराला खिरनी के पेड़ (आराधना) पर रीझे हैं और रामनरेश त्रिपाठी चिनार (स्वप्न) तथा खजूर (पथिक) पर। शुक्ल जी महुए को देखकर मस्त हुए हैं। और गुरुभक्त सिंह 'भक्त' जंगल की झाड़ियों व अन्य सामान्य पेड़ पौधों पर (वनश्री व नूरजहाँ)। नेपाली देहरादून के बेरों के लिए रुमाल बिछाते हैं, तो विशद जी रेगिस्तान के टींटण भूडिया नामक झाड़ों पर लट्टू हैं।+

मानव का अनादिकाल से वृक्ष, पुष्प, पल्लव आदि से संबंध चला आरहा है, और इसीलिए वह इनके मोह को नहीं छोड़ सकता। उसके उत्सवों में, धार्मिक समारोहों में एवं सामाजिक मंगल-कार्यों में वृक्ष, पुष्प, पल्लव, फलादि सदैव विद्यमान रहते हैं। कवियों ने अपने इन चिरंतन साथियों के प्रति आभार प्रदर्शित किया है और अपनी उत्कृष्ट रचनाओं में इनको समुचित स्थान भी दिया है।

"हिन्दी के प्रबंध काव्यों में पेड़-पौधों, पशु-पक्षियों और फूलों का एक और परम्परा के अन्तर्गत वर्णन हुआ है। और वह परम्परा है उनके शुभ-अशुभ लक्षणों की। किसी उत्सव का वातावरण दिखाने के लिए अशोक, आम, मौलाश्री, बेल, कदली, चंदन, आदि वृक्षों और कमल, चंपक, शेफाली, मालती, आदि फूलों; गौ, गज, अश्व, मृग आदि पशुओं; हंस, मोर, भारद्वाज, नीलकण्ठ, कोकिल, शुक, भुजंगा, कबूतर, पिड़की आदि पक्षियों की उपस्थिति दिखायी जाती है। किसी दुर्घटना की पूर्व सूचना देने या उसके बाद का वातावरण दिखाने के लिए नीम, बबूल, बेर, इमली आदि अपशकुन-सूचक पेड़ों का नाम लिया जाता है।*

+आधुनिक हिन्दी-कविता में प्रकृति-चित्रण-ले० श्री रामेश्वर लाल खंडवाल, 'तरुण' एम० ए०।

*हिन्दी-कविता में पेड़-पौधे, फूल, पशु-पक्षी, लेखक—श्री शिवदान सिंह चौहान (प्रगतिवाद, पृष्ठ १६०)।

वन-श्री

यहां हरित उत्तुंग शृंग का,
आलिंगन करता पवमान।
जीवन की विधियां सादी हैं,
कण-कण में विकसित छविमान॥ १॥

धरती यहां चीर कर छाती,
देती तरु को जीवन दान।
फूलों, फलों और पत्रों का,
तरु भी कर देता बलिदान॥ २॥

सत्यम् विश्वम् सुन्दरम् का गृह,
वृक्षों का संसार बना।
धरावधू का अल्हड़पन ही,
निर्जन का शृंगार बना॥ ३॥

हृदयहीन जिनको जग कहता,
वे कितने उदार होते।
मौन सहा करते जो प्रतिपल,
उन पर ही प्रहार होते॥ ४॥

पर्वत का उभार वह देखो,
चटकीली, चूनर पहिने।
लता-पत्र औ' पुष्प बने हैं,
वन-देवी के शुचि गहने॥ ५॥

मरण और जीवन के अन्तर,
चलता है संघर्ष यहां।
इस निष्काम-कर्म-वेदी पर,
रुक जाने का नाम कहां ॥ ६ ॥

देवि ! वन-श्री, तव शुचि शोभा,
मंत्र-मुग्ध मुझको करती।
तव आराधन ही में, मेरे,
जीवन की बाती बरती ॥ ७ ॥

—भगवत प्रसाद शर्मा

कानन की श्री के प्रमुख उपकरण ये पादप एवं सुमन जन-संस्कृति के अमर साधक भी हैं।

—०—
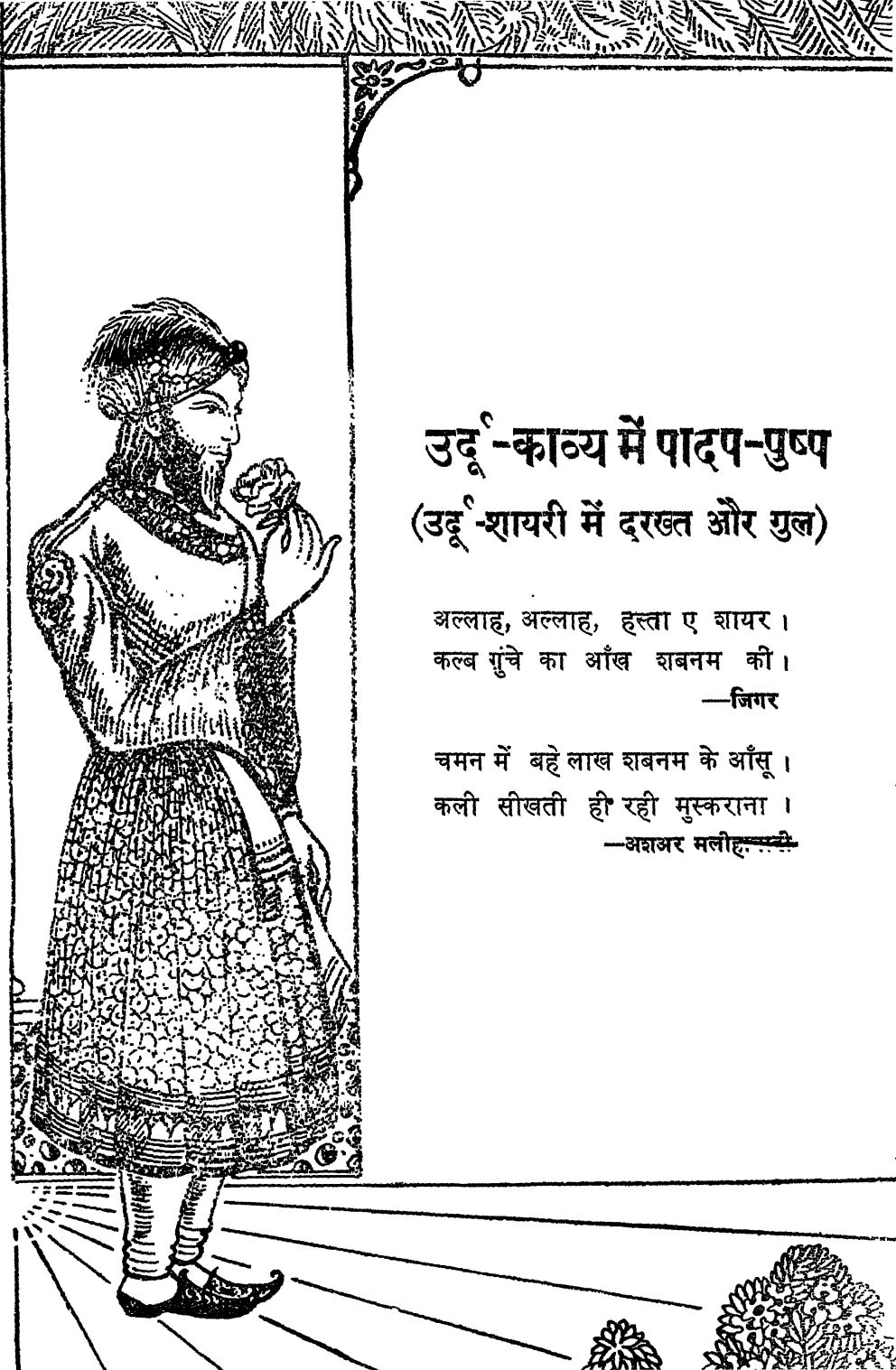
उर्दू-काव्य में पादप-पुष्प

(उर्दू-शायरी में दरख्त और गुल)

अल्लाह, अल्लाह, हस्ता ए शायर।
कल्ब गुंचे का आँख शबनम की।

—जिगर

चमन में बहे लाख शबनम के आँसू।
कली सीखती ही रही मुस्कराना।

—अशअर मलीह

उर्दू-शायरी का माधुर्य विलक्षण है। जीवन की रसमयता को शाब्दिक मधुरिमा से चित्रित करना उर्दू-काव्य की विशेषता है। उर्दू-शायर अपनी शबनमी आँखों से दुनिया की बहार को देखता है और कली के समान अपने दिल से उसे अनुभव करता है। परिमित शब्दावली के माध्यम से बहुत कुछ कह देने की कला का प्रदर्शन इस काव्य में खूब हुआ है। अलौकिक सूझ, गहरी कल्पना, सहज अनुभूति एवं हार्दिक भाव ऐसे नाज़ुक क़लम से लिखे गये हैं कि कवि की कोमलता साकार हो उठी है। हुस्न की नज़ाकत बड़ी कोमल होती है। उसे कल्पना की डोरी से बांधना बहुत कठिन है, फिर भी उर्दू के शायरों ने यह कठिन काम करके दिखाया है।

समय तथा परिस्थितियों का प्रभाव सार्वलौकिक माना गया है। इसलिए काव्य भी काल से प्रभावित होता है। उर्दू शायरी विलासिता में पोषित हुई, अतः उसमें लावण्य है और राग है। लेकिन इस काव्य-सरिता के यह ही दो तट हैं, यह मानना उचित नहीं। जीवन की विविध भावनाओं के साथ संसार की गति-विधि का चित्रण भी बड़ी सुन्दरता के साथ इस शायरी में हुआ है। विरक्ति एवं अध्यात्मवाद के गंभीर चिन्तन के साधन तथा रूप उर्दू-काव्य में पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं। कल्पना के विश्व में विहार करने वाली यह कविता पृथ्वी की आसक्ति से विहीन नहीं है।

"और उर्दू की शायरी तो दुनिया की कविता में अपना लासानी स्थान रखती है। कल्पना की उड़ान, भावों की लताफ़त, हुस्ने-तखय्युल, भाषा की रंगीनी और अदायगी के जमाल-ओ-कमाल में दुनिया की किसी भाषा की कविता उर्दू शायरी का मुकाबला नहीं कर सकती। यह कहना कि उर्दू-शायरी में हुस्नो-इश्क, गुलो-बुलबुल, शमाओ-परवाना सागरो-मीना, काबा-ओ-बुतखाना, शेखो-बरहमन, सहरा-ओ-चमन के सिवा कुछ नहीं है, यह कहने के मानिन्द है कि हिन्दी-कविता में नायक-नायिका के वर्णन-विवरण के अतिरिक्त कुछ नहीं है। अगर उर्दू कविता अश्लील है तो हिन्दी-कविता कम अश्लील नहीं। उर्दू के हर गंदे शेर के जवाब में हिन्दी के दरागंदा पद्य पेश किये जा सकते हैं।"+

"यह उर्दू शायरी भी हिन्दी की रीति-कालीन कविता की तरह श्रृंगार का

+उर्दू शायरी-(ढाई अच्छर, ले० श्री नारायण प्रसाद जैन)

ही दामन थाम कर राज-दरबारों की वासन्ती भाव विलसिता में पलकर जवान हुई। मगर, वह हिन्दी-हिन्दवी के गंगा-जमुनी देशी वेश से रिश्ता तर्क कर अरबी और फ़ारसी के सांचे में ढलकर आयी। कमल की जगह नर्गिस, कोयल की जगह बुलबुल और मलय समीर की जगह बादे-सबा या नसीमे बहार का दौर आया। और आये साक़ी और साग़र, शमा और परवाना जाहिद और रिन्द, सैय्याद और क़फ़स, सनम और वस्ल और जाने कितने ऐसे उपकरण और अलंकार जिन्हें उर्दू-शायरी के मर्म की पहचान के लिए जानते रहना अनिवार्य ठहरा। और किसी ज़माने में वे जैसे भी रहे हों, इधर तो हुस्नो-इश्क और गुलो-बुलबुल की आड़ लेकर प्रेम-विरह या विद्रोह की लहर ही नहीं, आज़ादी का पायम भी आया और राज-नीतिक दाव-पेंच की बंदिश भी। और साक़ी की सुराही की गुलाबी तो अध्यात्म के उफान पर खिची हुई पराभक्ति की बेखुदी तक लाती है अपने दौर में। ईश्वर है सनम, भक्ति का पुट शराब और जहाँ बैठकर यह तन्मयता की दिव्य झांकी नसीब हो वही मयख़ाना। सूफी दर्शन की झलक तो देखते ही बनती है ऐसे छलकते पैमाने की महफ़िल में। और मज़हबी कठमुल्लों-नासिह, शेख और ज़ाहिद की खिल्ली उड़ाये बग़ैर तो उर्दू शायरी अपने रौ में आती ही नहीं।"*

इन पंक्तियों से स्पष्ट हो जाता है कि उर्दू शायरी अपने रूप में प्रशस्त है। अन्य भाषाओं के साहित्य के ही समान उर्दू का साहित्य भी विशाल, परिष्कृत, लोकोपयोगी एवं सर्वांगीण है।

दरख्त एवं गुल का चित्रण उर्दू-काव्य में अनेक रूपों में हुआ है। प्राकृतिक-सुषमा को दिखाने के लिए उर्दू के शायरों ने पेड़ों, पौधो, फूलों एवं फलों को ललचायी आँखों से देखा है और उनका आलंकारिक रूप में सरस वर्णन जी खोल कर किया है—

जमुर्रत[1] के मानिन्द सब्ज़े का रंग।
रविश[2] पर जवाहर लगा जैसे संग।
रविश की सफ़ाई पै बे अख्तियार।
गुले अशरफ़ी ने किया ज़र निसार।

---

*उर्दू शायरी [दो शब्द, ले० (राजा) श्री राधिका रमण प्रसाद सिंह]

१. पन्ना, एक बहुमूल्य मणि २. पंक्ति ३. पुष्प विशेष।

चमन से भरा बाग़ गुल से चमन।
कहीं नर्गिस[1] व गुल कहीं यासमन[2]।
चमेली कहीं और कहीं मोतिया[3]।
कहीं राएबेल और कहीं मोगरा[4]।
खड़े शाख़ शब्बू[5] के हर जा निशां।
मदन बान की और ही आनबान।
कहीं अरग़वां[6] और कहीं लाला ज़ार[7]।
जदी अपने मौसम में सबकी बहार।
कहीं जाफ़री[8] और गेंदा[9] कहीं।
समां शबकोदियों का कहीं।
हरइक गुल सफ़ेदी से महताबवार।
खड़े सरो[10] की तरह चम्पे के झाड़।
कहिए तो कि ख़ुशबोइयों के पहाड़।
कही ज़र्द नसरी[11] कहीं नस्तरंग[12]।
अजब रंग के ज़ाफरानी चमन।
पड़े आबेजू हर तरफ को बहे।
करें कुमरियाँ सरो पै चहचहें।

× × ×

सबा जो गई ढेरियाँ करके फूल।
पड़े हर तरफ़ मौलसरियों के फूल।
वोह केलों की और मौलसरियों की छाँव।
लगी जायँ आँखें लिए जिसका नाँव।

—मसनवी मीर हसन

१, २, ३, ४, फूलों के नाम, ५, वृक्ष विशेष। ६, ७, ८, ९, -फूलों के नाम, १० वृक्ष का नाम ११, १२, पुष्पों के नाम

इस चमन में हैं बेशुमार दरख्त।
पर कहाँ मिस्ले क़द्दयार दरख्त।
मेरे सोज़े दुरूँ से क्या निसबत।
मैं हूँ इंसान और चुनार दरख्त।
हर रविश पर तेरे ही मुजरे को।
खड़े हैं बाँधकर क़तार दरख्त।
आँखे वादाम हैं जनखदाँ* सेव।
क़द्दे जानाँ हैं मेवादार दरख्त।
फ़न्दकें मेवा हाथ हैं शाखें।
गुल है रुख़सार क़द्दयार दरख्त।
आँखें नरगिस हैं रुख़ है गुल क़द सरो+।
ऐसी पायें कहाँ बहार दरख्त।
नहीं गिरते हवा के सदमे से।
तुझपै करते हैं गुल निसार दरख्त।

× × ×

जाए गुलशन को जो तू आशिक तेरा हो जाए गुल।
शाख़े गुल हो जाए पीछे दौड़ने को पाए गुल
दाग़े हसरत दिल में है लख्ते जिगर आँखों में है।
गुलशने हस्ती में ए नासिख़, ये हमने पाए गुल।

(दीवाने नासिख़, हिस्सा अव्वल पृष्ठ ५४)

शाख़ (शाखा) पर लिखी गयी श्री नासिख़ की ये पंक्तियाँ कितनी सरस हैं। शाक़ की नजाकत पर कवियों का मन खूब रीझा है—

है नाज़ुकी से कामते जानाँ समन× की शाख़।
मैं सोज़े इश्क से हूँ, चुनारे कुहन§ की शाख़।

---

* ठोढ़ी, + वृक्ष विशेष, × वृक्ष विशेष, §पुराना।

देखे जो ये चमेली की कलियों की उँगलियाँ।
वां तेरे दस्तोपाको कहे यासमिन* की शाख।
वस्फे सवाहते रुखे जाना अगर लिखूं।
दरकार हो बराए क़लम नसतरन+ की शाख।
माने समर हो रूफ़े वरक़ सिनअतें हैं गुल।
नासिख है किल के फ़िक्र निहाले सुखन की शाख।

(दीवाने नासिख)

महाकवि नज़ीर उर्दू के प्रसिद्ध कवि थे। विद्वान् समालोचक योरोपीय डाक्टर फ़ेलन, जिन्होंने उर्दू भाषा और साहित्य का गहरा अध्ययन किया था, कहते हैं, "नज़ीर ही एक शायर है जो अंग्रेजों की कसौटी पर सच्चा उतरता है। उसकी शायरी ने जन साधारण के दिलों में राह की है, उसकी कविताएँ सड़कों, खेतों, और गलियों में गायी जाती हैं। वह एक आज़ाद आदमी था। वह कुछ चाहता ही न था।"

श्री 'फ़िराक़' के शब्दों में नज़ीर जीवन और प्रकृति के अध्ययन का बादशाह है। मस्लन होली हिन्दुओं का त्योहार है। जब नज़ीर होली को देखता है तो उसके सूक्ष्म से सूक्ष्म अंगो पर निगाह डालता चला जाता है। बरसात का दृश्य देखिए। आसमान पर भूरे बादल, ऊदी बदलियाँ, काली घनघोर घटाएँ, पपीहे का ज़ोर, मोर का शोर, हवा का चलना, पेड़ों का लहलहाना, हरियाली से तमाम जंगल में मख़मली फ़र्श बिछजाना, झीलों, तालाबों, डबरों का लबालब होना सब चीजे ऐसी हैं जिनसे हम प्रभावित होते हैं।+ श्री नज़ीर ने 'बहार' नामक कविता में प्रकृति का मनोरम चित्रण किया है। इसे पढ़कर पाठक पुष्पों के संसार में निमग्न हो जाता है—

शब को चमन में वाह वाह क्या ही बहार थी मची।
फूल खिले थे फूल फूल ग़ुंचे खिले कली कली।

---

* चमेली, + वृक्ष विशेष।

+नज़ीर की बानी, ले० श्री "फिराक़" गोरखपुरी-पृ० ९, १०,

बेला चमेली रायबेल मोतिया जूही सेवती।
बादे सबा भी चलती थी इत्र-ओ-गुलाब में बसी।

× × ×

नरगिस[१]-ओ-नार[२]-ओ-यासिमन[3], सोसन[४], ओ-तरी नस्तरन[५]।
कब्क-ओ-तदरी ख़न्दाज़न, बुलबुल-ओ-कुमरी नाराज़न।

(नज़ीर की बानी पृ० ५५)

कविवर अकबर ने चमन में बहार को आते कई बार देखा और सुरभित वाटिका में बैठकर उन्होंने फूलों को परमात्मा की वन्दना में नत पाया।

बहार आयी खिले गुल ज़ेबे सहनो बोस्ताँ[६] होकर।
अनादिल[७] ने मचाई धूम, सरगरमे फ़ोगाँ[८] होकर।
बिछा फर्शे ज़मुर्रद ऐहतेमामे सब्ज़यें तर में।
चली मस्तानावश बादे सबा[९] अम्बर फिशां होकर।
उरूजे नाशये[१०] नशोवनुमा से डालियाँ झूमीं।
तराने गाये मुर्ग़ा ने चमन ने शादमाँ होकर।
बलायें शाखे गुल की लीं नसीमे सुब्हगाही[११] ने।
कलियां शिगुफ्ता[१२] रूये रंगीने बुताँ होकर।
जवांनाने चमन ने अपना अपना रंग दिखलाया।
किसी ने यासमिन[१३] होकर, किसी ने अरग़वाँ[१४] होकर।
किया फूलों ने शबनम से वज़ू सहने गुलिस्ताँ में।
सदाये नग़मये बुलबुल उठी बाँगें अज़ाँ होकर।
हवाये शौक़ में शाखें झुकीं, खालिक़ के सिज्दे को।
हुई तसवीह में मसरूफ़ हर पत्ती जवाँ होकर।

१—५ पुष्प विशेष, ६ उद्यान, ७ बुलबुल, ८ विकल, ९ वायु, १० नशा, ११ प्रातःकालीन पवन, १२ विकसित, १३, १४, पुष्प विशेष,

ज़बाने बर्गेगुल ने की दुआ रंगीं इबारत में।
ख़ुदा सरसब्ज़ रक्खे इस चमन को मेहरबाँ होकर।
निगाहें कामिलों पर पड़ही जाती हैं ज़माने की।
कहीं छिपता है 'अकबर' फूल पत्तों में नेहाँ होकर।

—अकबर

आशिकों (प्रेमियों) ने अपनी माशूका के ललित अंगों की तुलना करने के लिए कई दरख़्तों और गुलों को उपमान के रूप में अपनाया है। रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों के अन्तर्गत वृक्ष, पुष्प, फलादि का वर्णन उर्दू कवियों ने सुरुचि के साथ किया है।

नीचे लिखे शेरों में दरख़्तों और गुलों का उपयोग आलंकारिक है:—

जिस कफ़ेपा[15] को बर्ग[16] गुल हो ख़ार[17]।
हैफ़[18] है ख़ार से वो होषै फ़िग़ार[19]।
ख़नदके पालगी कहते कि न देखा होगा,
सरो की बीख़[20] पै फूला गुले[21] औरंग अबतक।
मूँये सर पाँव पै ए रश्के सनोवर[22] ये नहीं।
सरो[23] की चोटी से निकला है निहाले[24] काकुल[25]।
तशवीह[26] रगे गुल से, इन्हें दूँ तो है ज़ेबा।
डोरे हैं तेरी आँख़ के, ए सरो[27] चमन सुर्ख़।
देते हैं क़द्दे यार को, क्यों सरो से तशवीह।
ये बेसमर[28] है उसमें है सेवे ज़क़न[29] का फल।
मुश्क़ में ख़ुशबू है पेचोताब मिसले मूँ नहीं।
पेंच हैं संबुल[30] में, मिस्ले मूँ[17] मगर ख़ुशबू नहीं।

१५तलवा, १६ पँखुड़ी, १७ काँटा, १८ दुःख, १९ फटा हुआ, २० बीज, २१ पुष्प विशेष, २२-२३ वृक्ष विशेष, २४ पौधा, २५ लता विशेष, २६ उपमा, २७ वृक्ष-विशेष, २८ फलरहित, २९ ठोढ़ी, ३० लता विशेष, ३१ केश।

है अजब झूमर का आलम, अपने रश्क़े हूर का।
सरो में ख़ूशा[३२] लगा देखा, न था अंगूर का।
नाज़ की उसके लब की क्या कहिये।
पंखड़ी इक गुलाब की सी है।
आजकल है गुले लाला[३३] पे, कुछ इस तरह बहार।
सब्ज़ नेज़ों पे हो जिस तरह फरेरे[३४] ख़ुश रंग।
दाग़ चेचक के नहीं ए, गुले राना[३५] मुँह पर।
गुँचे जुही के हुए हैं, ये शुग़ुफ्ता[३६] मुँह पर।
पील तेरा गुले सोसन[३७] का बड़ा एक अंबार।
गुले महताब[३८] के गुलदस्ता हैं इसके दंदाँ।
गुलें-ख़न्दा[३९] अभी गाफ़िल है शायद।
वही गुलची भी है जो बाग़बाँ है।

ज़ब्रे सिया खाल उसके,
बरगद की जटाएँ बाल उसके।

आँखें रश्केराना और नरगिसी आँखें।
चश्म वद्दूर, वोह हसीं आँखें।
पानी को छू रही हो, झुक झुक के गुल की टहनी।
जैसे हसीन कोई आईना देखता हो।

—इकबाल

हाथ मेरा है हाथ गुलची[४०] का।
रूय जाना है फूल नसरी[४१] का।

---

३२ गुच्छा, ३३ पुष्प विशेष, ३४ झंडा, ३५ पुष्प विशेष, ३६ विकसित, ३७ पुष्प विशेष, ३८ पुष्प विशेष, ३९ झुका हुआ, ४० पुष्प तोड़ने वाला, ४१ पुष्प विशेष।

चाँदनी के फूल बिस्तर पर न ए गुलचीं बिछा।
करवटें लेने से उस गुल का बदन छिल जाएगा।

—आज्ञात

हजारों साल नर्गिस अपनी बेनूरी पै रोती है।
बड़ी मुश्किल से होता है, चमन में दीदावर अपना।

—इक़बाल

शाख़ों से बर्गे गुल नहीं झड़ते हैं बाग़ में।
ज़ेवर उतर रहा है अरूसे बहार[४२] का।

—अमीर मीनाई

पाई है तुमनें चाँदसी सूरत, आसमानी रहे नक़ाब का रंग।
सुबह को आप हैं गुलाब का फूल, दोपहर को हैं आफताब का रंग।

—अकबर

आम के पेड़ के विषय में ये पंक्तियाँ बड़ी सुन्दर हैं। "अंबिया' (अमियाँ तथा पैगम्बर) किसको प्रिय न होगी ?

आम को मौला कहें तो है बजा।
जिसके शाख़ों में हैं लटके सदहा अंबिया।

ग़ालिब साहब ने आम को गेंद और आम के वृक्ष की शाखा को बल्ला ही मान लिया है।

आम का कौन मर्दे[४३]मैदाँ है।
समरो[४४] शाख़ गोयो[४५] चौगाँ[४६] है।

उर्दू शायर सुन्दर आँख की तुलना बादाम से भी करते हैं। लेकिन किसी के दिलवर के सलोने नेत्र बादाम से भी अधिक सुन्दर हैं। बादाम यदि समानता के लिए तैयार होता है तो उसे किसी के दाँतों के नीचे दबना पड़ेगा।

---

४२ बहाररूपी दुलहिन, ४३ समानता करनेवाला, ४४ फल (आम), ४५ गेंद, ४६ बल्ला।

तेरी चश्मों से हम चश्मीं अगर बादाम कुछ करता ।
तो उठकर हम उसे दाँतों में अय दिलवर चबालेते ।

सौन्दर्य का आकर्षण अद्भुत होता है। दरख़्त की आँखें भी ख़ूबसूरती पर फ़िदा हो जाती है। शमशाद (एक प्रकार का दरख़्त) पर सरो का मुग्ध हो जाना दिखाकर शायर ने वृक्ष की सरसता को सिद्ध कर दिया है:—

सरो[४७] आशिक हो होगया, इस ग़ैरते शमशाद[४८] का।
गुल मचाया कुमरियों ने भी, मुबारकबाद का।

एरंड का पेड़ हवा के सामान्य झोंके से ही धराशायी हो जाता है। इस वृक्ष की अस्थिरता सर्व विदित है। इसीलिए शायरों ने नौकरी तथा दुनिया को इस पादप के समान ही क्षणस्थायी बताया है:—

मुख़्तारी पर आप कुछ न कीजिए घमंड।
कहते हो जिसको नौकरी है बीख़े[४९]अरंड।

—अज्ञात

क़याम अरंड की जड़ से भी कम है दुनिया का।
कुछ इस की अस्ल नहीं है, मगर फसाद[५०]की जड़।

जिस प्रकार हिन्दी-कवियों ने वृक्ष, पुष्प, वाटिका आदि को प्रतीक मानकर अत्यधिक विचारों को प्रकट किया है उसी प्रकार उर्दू शायरी में गुलशन-गुल गुलचीं आदि के द्वारा दार्शनिक तथा राष्ट्रीय सिद्धान्तों का विवेचन हुआ है।

"उर्दू-शायर विशेष कर ग़ज़ल-ग़ो-शायर, गुल-ओ-बुलबुल, साक़ी-शराब, हुस्न ओ-इश्क के ज़रिए दार्शनिक, तात्त्विक, आध्यात्मिक, राजनैतिक बातें बड़े मार्के की इस ख़ूबी से कह देते हैं कि दिल में घर कर जाएँ और कानों को पता तक न लगे।" ×

कवि साधारण सी बात को इस रूप में चित्रित करता है कि पाठक तथा श्रोता आश्चर्य-चकित हो जाता है। शब्दों के सामान्य अर्थों को ही प्रधानता

४७, ४८, वृक्ष विशेष, ४९ जड़, ५०, कलह,
× शेरो शायरी, ले० श्री गोयलीय पृष्ठ ७८

देने वाले पाठक काव्य की अन्तरात्मा को समझ नहीं पाते, और इसीलिए अपने संकीर्ण भावों के अनुसार काव्य को दूषित कह उठते हैं। श्री रिज़वी के मतानुसार शायरी वेहिस कूवतों को[1] चौंकाती है। सोये अहसास[2] को जगाती है। मुरदा[3] जज़बात[4] को जिलाती है। दिलों को गरमाती है, हौसलों को बढ़ाती है। मुसीबत में तस्कीन[5] देती है। मुश्किल में इस्तिक़लाल[6] सिखाती है। बिगड़े हुए इख़लाक़[7] को संवारती है और गिरी हुई क़ौमों को उभारती।

—हमारी शायरी पृ० ८०

बुलबुल और गुल पर ही उर्दू शायरी को आधारित मानने वाले बड़ी भारी भूल करते हैं। यह काव्य अपने रूप में महान और विशाल है।

अल्लाह अल्लाह रे ए[8] वुसअत दामाने[9] ग़ज़ल।
बुलबुल ओ गुलही पै मौकूफ़[10] नहीं शाने ग़ज़ल।
ज़ब्त है आईना ए राज़े हक़ीक़त इस में।
यह वो कूज़ा[11] है कि दरिया की है वुसअत इसमें।

—मुंशी जगतमोहन साहब

यहाँ कुछ ऐसे शेर उद्धृत किये जारहे हैं, जिनमें शायरों ने गुलशन गुंचा, गुल, दरख्त, शाख, वर्गोबार (पत्ती) समर (फल) तथा मये-गुलफ़ाम (फूल की शराब) के माध्यम से धार्मिक, आध्यत्मिक, सामाजिक, नैतिक एवं राजनीतिक सिद्धान्तों को निष्पक्ष दृष्टि से समझा और समझाने का प्रयास किया है—

कोई इन फूलों की किस्मत देखना।
जिन्दगी काँटों में पलकर रह गई।

—अर्शी भोपाली

यह ऐश गाह[12] नहीं है याँ रंग और कुछ है।
हर गुल है इस चमन में, साग़र[13] भरा लहू का।

—मीर

---

१ सुप्त शक्तियाँ, २ भावनाएँ, ३ मरे हुए, ४ उद्गार, ५ आश्वासन, ६ धैर्य, ७ चरित्र, ८ विशालता, ९ अंचल, १० आधारित, ११ प्याला, १२ विलास भवन, १३ प्याला।
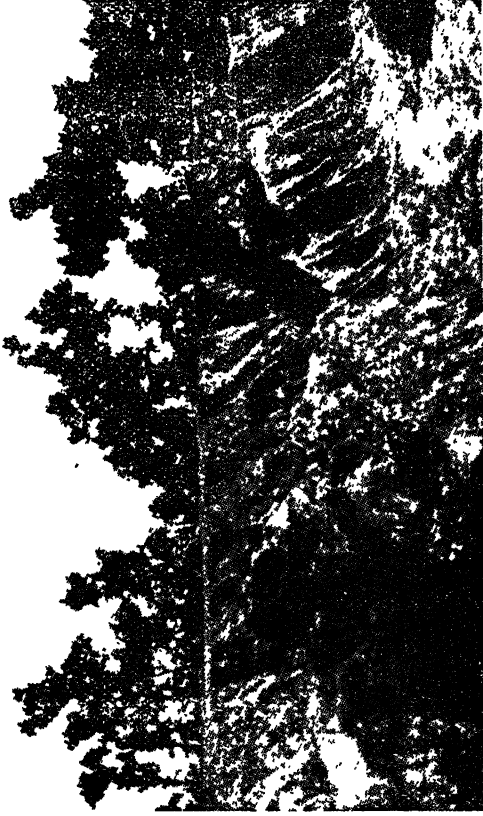
वृक्षों की बाहों में बँधी कल्याणी धरती

होता नहीं है कोई बुरे वक्त का शरीक[१४]।
पत्ते भी भागते हैं ख़िज़ाँ में शजर[१५]से दूर।

बसने दो नशेमन[१६]को अपने, फिर हम भी करेंगे सैरे चमन।
जब तक कि नशेमन उजड़ा है, फूलों का नज़ारा कौन करे।

रफ़ीक़ों[१७]से रक़ीब[१८]अच्छे जो जलकर नाम लेते हैं।
गुलों से ख़ार बेहतर हैं जो दामन थाम लेते हैं।
गुल भला कुछ तो बहारें, ऐ सबा दिखला गये।
हसरत[१९]उन गुंचो पै है, जो बिन खिलें मुर्झा गये।

—जौक़

वह गुल हूँ खिज़ाँ ने जिसे बरबाद किया।
उलझूँ किसी दामन[२०]से, मैं वह ख़ार[२१] नहीं हूँ।

—चकबस्त

लाये गर बादे सबा उस ज़ुल्फ़े मुश्कीं[२२]को शमीम[२३]।
शमा के गुल[२४] से गुले[२५] शब्बो की बू निकला करे।

—जौक़

इस[२६]गुलशने हस्ती में, अजब सैर है लेकिन।
जब आँख खुली गुल[२७] की तो मौसम है ख़िज़ाँ[२८] का।
अपने मज़े की ख़ातिर गुल छोड़ ही दिये जब।
सारे जहाँ के गुलशन मेरे ही बन गये तब।

—स्वामी राम

---

१४ भागी, १५ वृक्ष, १६ घोंसला, १७ साथी, १८ शत्रु, १९ दुःख, २० अंचल, २१ काँटा, २२ सुगंधित, केश, २३ सुगंध, २४ दीपक की लौ, २५ एक फूल का नाम, २६ अस्तित्व रूपी बग़ीचा, २७ फूल, २८ पतझड़।

रहती है कब बहारे-[२९] जवानी, तमाम उम्र।
मानिन्द[३०] बूए-[३१]गुल, इधर आई उधर गई।

--दाग़

ग़म खाने में बोद-ए-[३२]दिले नाकाम बहुत है।
यह रंज कि कम है, मये-गुलफ़ाम[३३] बहुत है।
न गुल इसमें न शाख व बर्गोबार[३४]।
जब खिज़ां[३५]हो तब आये इसकी बहार।

—ग़ालिब

होते पाबन्द[३६]अलाएक[३७]नहीं वा[३८]रस्ते हैं।
निगहते[३९]गुल के निकल जाने के सौ रस्ते हैं।

—ज़ौक़

अबकी इस शान से गुलशन में बहार आई है।
फूल तो फूल हैं, काँटों को भी आराम नहीं।

—अज्ञात

बादे[४०]सरसर ने न छोड़ा, कोई तिनका बाक़ी।
फूल तो फूल हैं काँटे भी गुलिस्ता[४१]में नहीं।
गुलशने[४२]आफ़ाक़ भी गोया है कोई बुत कदा[४३]।
पत्ती-पत्ती मूरतें हैं, डाली डाली-सूरतें।

—नूर

बूए-गुल फूलों में रहती थी,
मगर रह न सकी।

---

२९ जवानी की बहार, ३० तरह, ३१ फूल सुगंध, ३२ सीधा साधा, ३३ फूल की शराब, ३४ पत्ती, ३५ पतझड़, ३६ बँधे हुए, ३७ घेरे, ३८ खुले हुए, ३९ फूल की सुगंध, ४० तेज हवा, ४१ बाग, ४२ विश्व वाटिका, ४३ मंदिर।

मैं तो काँटों में रहा,
और परेशाँ न हुआ।

—सा० ल०

तुझे क्यों फ़िक्र है ऐ गुल, दिले सदचाक[४४]बुलबुल की ।
तू अपने पैरहन[४५]के चाक[४६]तो, पहले रफ़ू करले ।
सनोबर[४७]बाग में आज़ाद भी हैं, पावगिल[४८]भी है ।
इन्हीं पाबन्दियों में हासिल, आज़ादी को तू करले ।

—इक़बाल

न गुल हैं न कलियाँ, न कलियाँ न काँटे ।
तही[४९]दामनी-सी, तही दामिनी सी ।

—सागर निज़ामी

चमन सैयाद ने सींचा, यहाँ तक ख़ूने बुलबुल से ।
कि आख़िर रंग बनकर फूट निकला आरिज़[५०]गुल से ।

—अज्ञात

पत्ते हैं लरज़ा + गुल दम-बख़ुद हैं ।
हम ही न समझे ख़िजाँ के इशारे ।

—श्री चौधरी

जब पड़ा वक्त गुलिस्ताँ में, हमने ख़ून दिया ।
अब बहार आई तो कहते हैं, तेरा काम नहीं ।

—दिल, लखनवी

गुल को पाते हैं ख़ारों से उलझकर ।
बाद तूफाँ के नज़र आता है साहिल × ।

—प्रकाश भाटिया

---

४४ विदीर्ण, ४५-४६ लिबास के छिद्रों को, ४७ चीड़ का पेड़, ४८ मिट्टी में फँसा हुआ, ४९ ख़ाली दामन, ५० फूल के कपोल से, +कंपित ×किनारा ।

बूए[१] - गुल बनकर हुआ क्या फ़ायदा ।
हाय अब भी खानुमाँ[२] - बरबाद हूँ ।

—जोश

फूल हँस-हँस कर दिखाते हैं जहाँ को दाग़े-दिल ।
मुख्तलिफ़ शकलें हैं इज़हारे-ग़मो[३]-आलम की ।

—आसी उलदनी

किस चमन की ख़ाक में, फूलों का मुस्तक़बिल[४] नहीं ?
दूरबीं[५] नजरों में रंग़ो-बू हैं आबोगिल[६] नहीं ।

—अकबर हैदरी

देते हैं सुराग़[७] फ़स्ले - गुल[८] का ।
शाख़ों पै जले हुए बसेरे ।

—अज्ञात

काँटे किसी के हक़ में, किसी को गुलो-समर[९] ।
क्या ख़ूब अहत्तमामे[१०]-गुलिस्ताँ हैं आजकल ।

—जिगर मुरादाबादी

ऐ 'आरज़ू' इस बाग़ में फूलों के क़फ़स[११] से ।
बेहतर हमें वो अपना नशेमन[१२] कि है खसका[१३] ।

—आरज़ू

बहार आई तो अहले गुलिस्ताँ
आपस में लड़ बैठे ।
यह मौसम कहीं मिलकर गुज़र जाता
तो क्या होता ।

—शमीम जैपुरी

---

१ फूल की सुगंध, २ पीड़ित, ३ शोक - दुःख की, ४ भविष्य, ५ दूरदर्शी, ६ ससार - जल - मिट्टी, ७ चिह्न, ८ बसन्त ऋतु, ९ फल, १० प्रबंध, ११ पिंजड़ा, १२ घोसला, १३ घास फूस का ।

कौन इस तर्ज़े-जफ़ाये[14]-आसमाँ[15] की दाद दे[16]।
बाग़ सारा फूँक डाला, आशियाँ रहने दिया।

—अदीब

आजादियाँ तो देखीं, बरबादियों भी देखो।
कैसे हसीन गुलशन, काँटों पै ढल गये हैं।

—अज्ञात

उस जाने बहाराँ ने, जब से मुँह फेर लिया है गुलशन से।
शाख़ों ने लचकना छोड़ दिया, गुंचे भी चटकना भूल गये।
वही सलूक[18] मेरे दिल से, तुम भी क्यों न करो।
चमन के साथ जो फ़स्ले-बहार करती है।

—अदीब

चमन है गुल के लिए, और गुल चमन के लिए।
वतन है मेरे लिए और मैं वतन के लिए।

—हसरत मोहानी

गुलों ने ख़ारों के छेड़ने पर
सिवा ख़मोशी के दम न मारा।
शरीफ़ उलझें अगर किसी से
तो फिर शराफ़त कहाँ रहेगी।

× × ×

हवाये-दहर बिगाड़े हज़ार फूलों को।
न हो वोह रँग शराफ़त कुछ तो बू होगी।

× × ×

गुलों पर क्या है, काँटो तक का दिल से दुआ-गो हूँ।
ख़ुदावन्दा ! न टूटे दिल किसी दुश्मन से दुश्मन का।

—शाद अजीमाबादी

---

१४ अत्याचार, १५ आकाश, १६ प्रशंसा, १७ प्रेयसी, १८ व्यवहार, १९ संसार।

फूल बनने की ख़ुशी में,
मुस्कराई थी कली।
क्या पता था यह तग़इयुर,
मौत का पैग़ाम है।

उठाये कुछ वर्क़ लाले ने,
कुछ नरगिस ने कुछ गुल ने।
चमन में हर तरफ़ बिखरी हुई,
है दास्तां[२०] मेरी।

—अज्ञात

हर गल में तू है, तुझ में हज़ारों तजल्लियां।
दीवाना कर दिया मुझे, फ़स्ले-बहार ने।

—अ० ल०

किसी में रंगो-बू तेरी न देखी।
चमन में गल बहुत गुज़रे नज़र से।

—अज्ञात

जहाँ गुलशन वहाँ गुल है,
जहाँ तू है वहाँ बू है।
जहाँ उलफ़त[२२] वहाँ मैं हूँ,
जहाँ मैं हूं वहाँ तू है।

—अज्ञात

चार दिन की चार चीजे,
ये सदा कायम नहीं।
फ़स्ले गुल,[२३] जोशे जवानी[२४],
हुस्ने-दिलवर,[२५] चाँदनी।

---

२० कहानी, २१ ज्योति, २२ प्रेम, २३ वसंत ऋतु, २४ यौवन-मद, २५ प्रेयसी का सौन्दर्य।

न शाख़-गुल ही ऊँची है,
न दीवाने-चमन बुलबुल ।
तेरी हिम्मत की कोताही,[२६]
तेरी क़िस्मत की पस्ती है ।

—अमीर

ख़ूब की सैरे-चमन फूल चुने, शाद रहे ।
बाग़बाँ जाते हैं हम, गुलशन् तेरा आबाद रहे ।

—अज्ञात

हमारे फूल, हमारा चमन, हमारी बहार ।
हमीं को जाँ[२७] नहीं मिलती है आशियाने को ।

—श्रीमती सहाब आगा शाइर

गुलिस्ताँ का हर फूल दिल बन के महके ।
अगर एक अश्के-तमन्ना[२८] गिरा दूं ।

—श्रीमती सफ़िया शमीम

ख़िज़ा ने ख़ाक उड़ाई, हज़ार गुलशन में ।
चमन में फूल मगर मुसकराये जाते हैं ।

इस निबंध के लिखने में मैंने निम्नस्थ रचनाओं से सहायता ली है । अत: मैं आदरणीय कवियों, सुधी लेखकों एवं प्रतिष्ठित संपादकों का सश्रद्ध आभारी हूं ।

१. शेर ओ शायरी, श्री अयोध्या प्रसाद जी गोयलीय
२. शेर ओ सुखन, चौथा भाग
३. शेर ओ सुखन, पांचवां भाग
४. ग़ालिब की शायरी श्री ब्रजविहारी लाल श्रीवास्तव
५. नज़ीर की बानी श्री फिराक़ गोरखपुरी

---

२६ कमी (हीनता), २७ जगह (स्थान), २८ कामना कौ आँसू,
२९ प्रसन्न ।

६. उर्दू शायरी	श्री नारायण प्रसाद जैन
७. दर्दे-दिल	श्री बिस्मिल
८. जौंक की शायरी	श्री द्रुपद
९. अकबर की शायरी	श्री जगदीश नारायण
१०. नूर की शायरी	श्री बिस्मिल
११. हमारी शायरी	श्री रिज़वी
१२. उर्दू और उसका साहित्य	श्री अमन
१३. मसनबी मीर हसन	
१४. दीवाने नासिख़	
१५. दीवाने ग़ालिब	
१६. दीवाने दाग़	
१७. शोलए तूर	
१८. रूप	श्री फ़िराक़
१९. झंकार	

प्रो० अमरनाथ जी बैंजल (उर्दू-विभाग, ठाकुर रणमत्त सिंह कालेज, रींवा), प्रो० अख्तर हुसैन निजामी, मौलवी श्री अयाज अली एवं श्री प्रकाश जी भाटिया का मैं कृतज्ञ हूं, जिन्होंने आवश्यक ग्रन्थ अध्ययन के लिए दिए और उपयुक्त उद्धरणों के एकत्र करने में पूर्ण मदद की है।

उर्दू-काव्य में पादप-पुष्पों का उपमान-रूप

उपमेय	उपमान
चेहरा (मुख)	लाला का फूल, गुलाब का फूल, चमेली का फूल, अरम का बाग़, बाग़ (गुलशन, चमन)
माथे की सिकुड़न (बल)	रगे गुल
बाल (जुल्फें)	संबुल (एक लता विशेष) बरगद की जटाएँ रैहान (लता विशेष)
होंठ	फूल की पंखुड़ी, गुलाब के फूल की पंखुड़ी, कली, रंगे-गुल, बर्गे गुल

उपमेय	उपमान
मोती के कर्णफूल	शबनम तहे गुल गुलाब के फूल पर ओस
आँख	नरगिस (एक फूल), अवहर (एक फूल), बादाम
बरौनी	काँटे
दाँत	अनार के दाने, गुंचए यासमीं (चमेली की कली), गुंचए नसतरन (नसतरन की कली)
गाल	गुलाब का फूल, लाला का फूल
हाथ की रेखाएँ	रगे गुल (फूल की रगें)
मेंहदी से रँगे हुए हाथ की अँगुली के नाखून	गुँचए गुल (फूल की कली) उन्नाब (फूल विशेष), गुले औरंम (फूल विशेष)
कंधा	यासमीं (चमेली), समन (फूल विशेष), नसरीं (फूल विशेष), नसतरन (फूल विशेष)
बग़ल	गुले शगुफ्ता (खिला हुआ फूल)
ठुड्डी	स्वर्ग का सेब, समरकंद का सेब, नासपाती, शफ़तालू (फल विशेष), अमरूद
अंगुली	बेंत की शाख, फूल की डाली, पेड़ की शाख, चमेली की शाख
हथेली	बर्गे गुल (फूल की पंखड़ी)
कलाई	संदल की शाख (चंदन वृक्ष की डाल)
उरोज	अनार, फालसा
पैर	कँवल (कमल)
मुसकान	गुंचए नीम शगुफ्ता (अधखिली कली)
माशूका (प्रियतमा) का लम्बा क़द	शमशाद (वृक्ष विशेष) सनोबर (बृक्ष विशेष), सरो (,,) नख्ल (वृक्ष), फूल की डाली, निहाल (पौदा विशेष)
माशूका का कोमल शरीर	गुलदस्ता, चमेली की शाख, समन की शाख,

उपमेय	उपमान
बिरही का शरीर	पुराना चुनार (एक वृक्ष बिशेष)
साधु	फलदार पेड़
सुखी परिवार	चमन (बाग़)
जवानी	खिला हुआ फूल
बुढ़ापा	मुरझाया हुआ फूल, सूखा पत्ता ।

—:०:—

आयुर्वेद में पादप-पुष्प

मानव शरीर के अत्यधिक अनुकूल काष्ठ औषधें ही हैं। इन औषधों का श्रोत वृक्ष एवं लताएं ही हैं। इसीलिए आयुर्वेद में इन्हें सब से अधिक महत्त्व दिया गया है।

—:o:—
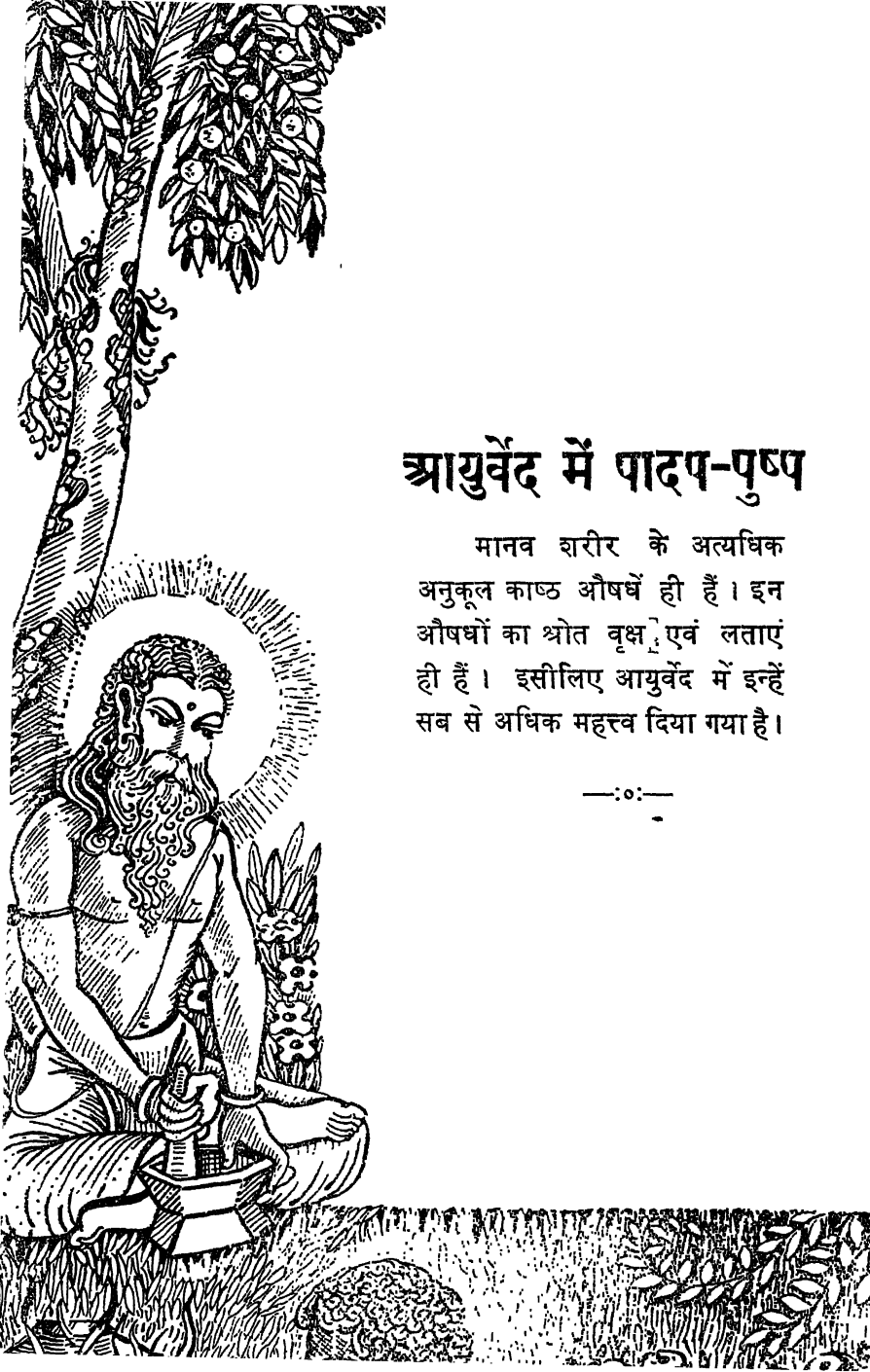
चिकित्सा मे पादप की महत्ता

आयुर्वेद ने अपनी गरिमा की रक्षा पादपों और पुष्पों के बल पर की है। चिकित्सा-शास्त्र की जीवन-संरक्षण शक्ति के प्रमुख स्रोत वृक्ष एवं प्रसून हैं। वैद्य-विद्या, विटप, पल्लव, सुमन तथा फल से बलवती बनी है। आयुर्वेद ने वैज्ञानिक पद्धति से वृक्षों का अध्ययन किया और उनके गुणों को संसार के सम्मुख रखा है। ऐसा कोई वृक्ष नहीं जो उपयोगी न हो। आज ही नहीं, चिरकाल से ऋषि, मुनि, देवता, मानव एवं पशु-पक्षी पादपों से जीवन-शक्ति प्राप्त करते आ रहे हैं और उनको ही अपनाकर अपनत्व की भावना को सुदृढ़ बना रहे हैं। यह सत्य है कि शरीर व्याधियों से परिपूर्ण है—(शरीरं व्याधि मंदिरम्); लेकिन यदि संसार में वृक्ष न होते तो मनुष्य रोगों के बीच रहकर कभी जीवित न रह पाता। वैद्यों ने जो सम्मान प्राप्त किया है, उसके मूल-कारण ये पृथ्वी-पुत्र ही हैं। भारतीय एवं पाश्चात्य चिकित्सा-विशारदों ने पेड़ों की महती शक्ति को स्वीकार किया है। अनेक ऋषियों ने अपने बुढ़ापे को पादपों के बलपर ही यौवन में परिणत किया था।

औषधियों का जन्म वृक्षों से होता है। रस की सामर्थ्य पेड़ों के रसों से पूर्ण होती है। अशोक वृक्ष स्त्री के समस्त रोगों पर रामबाण है। नीम को कल्प वृक्ष माना जाता है। इसको एक चतुर वैद्य के रूप में सम्मानित किया गया है। चिकित्सकों का कथन है कि "सर्व रोग हरो निंब:" नीम सब रोगों को दूर करने वाली है। इसके अलौकिक गुणों पर भारतीय आज भी मुग्ध हैं। गाँवों में सर्वत्र इसे देखा जा सकता है। घरों के आगे इसकी शीतल छाया रहती है। यह अनुभव से सिद्ध हो गया है कि प्रति वर्ष प्रतिपदा (चैत्रसुदी १) को पवित्र होकर यदि मनुष्य नीम की कोंपल और फूल को हींग, काली मिर्च, सैंधा नमक, जीरा, अजवाइन, इमली एवं गुड़ के साथ सेवन करे तो एक साल के लिए उसका शरीर रोग-मुक्त बन जाता है।*

---

*देखिए-'वृक्ष-विज्ञान' (लेखक श्री प्रवासी लाल वर्मा, एवं कुमारी शान्ति,) पृष्ठ ७७

नीम के पत्तों को खाकर जीवित रहने वाले मनुष्य तेजवान देखे गये हैं। निम्ब के नामों एवं गुणों के संबंध में इस प्रकार कहा गया है:—

> निम्बः स्यात्पिचुमर्दश्च पिचुमन्दश्च तिक्तकः।
> अरिष्टः पारिभद्रश्च हिङ्गुनिर्यास इत्यपि।
> निम्बः शीतो लघुर्ग्राही कटुपाकोऽग्निवातनुत्।
> अहृद्यः श्रमतृट्कासज्वारा रूचिक्रमि प्रणुत्।
> व्रणपित्तकफच्छर्दिकुष्ठहृल्लास मेहनुत्।

निम्ब, पिचुमर्द, तिक्तक, अरिष्ट, पारिभद्र, और हिङ्गुनिया—ये नीम के संस्कृत नाम हैं। नीम-शीतवीर्य, लघु, ग्राही, पाक में कटुरसयुक्त, हृदय को अहित कर, जठराग्नि को मंद करने वाला, तथा वात, श्रम, तृषा, खासी, ज्वर, अरुचि, कृमि, व्रण, पित्त, कफ, वमन, कुष्ठ, हृल्लास (उबकाई) तथा प्रमेह का नाशक है।

> निम्वपत्रं स्मृतं नेत्र्यं, कृमि, पित्तः विष प्रणुत्।
> वातलं कटुपाकश्च सर्वारोचक कुष्ठनुत् ॥ १ ॥
> निम्वफलं रसे तिक्तं पाके तु कटुभेदनम्।
> स्निग्धं लघूष्णं कुष्ठघ्नं गुल्मार्शः कृमिमेहनुत् ॥ २ ॥

—नीम के पत्ते नेत्र को हितकर, कृमि-पित्त-विष के नाशक, वातकारक, पाक में कटुरसयुक्त, तथा सभी प्रकार की अरुचि और कुष्ठ को दूर करने वाले होते हैं। नीम का फल रस में तिक्त, तथा पाक में कटु मल का भेदन करने वाला, स्निग्ध, लघु, उष्णवीर्य, कुष्ठ, गुल्म, बवासीर, कृमि, तथा प्रमेह का नाशक होता है।

—भाव प्रकाशस्य पूर्व खंडे, मिश्र प्रकरणम्, पृष्ठ ३१८

सर्व सुलभ एवं विश्व-उपयोगी यह नीम का पेड़ बसन्त ऋतु में सफेद रंग के पुष्पों के साथ बड़ा ही सुहावना लगता है। इसके पत्ते नुकीले होते हैं। ४०-५० फुट तक इसकी ऊँचाई होती है। इसकी छाल का काढ़ा पीने से जीर्ण ज्वर, पित्त ज्वर, निर्बलता, मंदाग्नि, दाह, तृषा, और अजीर्ण आदि दूर हो जाते हैं।

बिनौलियों का तेल विशेष उपयोगी होता है। इस की कुछ बूंदें (२ से ५ बूंद तक) पिलाने से बच्चों के पेट के कीटाणु मर जाते हैं। नीम की कोंपल पीस कर शहद में मिलाकर नाक में टपकाने से आधा सीसी और सिर का दर्द जाता रहता है।

हमारे देश में नीम की दातून करने का बहुत प्रचार है। इससे मुख-शुद्धि होती है।

—वृहत् बूटी प्रचार पृ० १४-१६

पीपल—यह एक पवित्र वृक्ष है। इसकी पूजा का धार्मिक महत्त्व है। ऋषियों ने पीपल की छाया में बैठकर आत्म-बोध प्राप्त किया है। कहा जाता है कि ज्वर-पीड़ित मानव इसकी छाया में बैठकर रोग मुक्त हो जाता है। इसके पके हुए फल शीतल होते हैं और कफ़, पित्त, रक्त-दोष, विष-दोष, अरुचि आदि को नष्ट करते हैं। इसकी लाख शक्ति-वर्द्धक एवं नासिका रोग-विनाशक होती है। पीपल का वृक्ष मधुर, कषाय एवं शीतल कहा गया है। भावप्रकाश के मतानुसार यह (पीपल) योनि का शोधक तथा रक्त - विकार का विनाशक है। इसके गोलाकार एवं नुकीले पत्ते बड़े सुन्दर लगते हैं। इसकी सघन छाया पथिकों की थकावट को शीघ्र दूर कर देती है। इसके पत्ते सदैव हिलते रहते हैं। मनकी चंचलता बताने के लिए इसके पत्तों की उपमा दी जाती है।

वट (बड़)—पीपल की भाँति यह वृक्ष भी पवित्र माना जाता है। इसके पत्तों की पत्तलें और दोने बनाये जाते हैं। इसके लाल फल हरे पत्तों के साथ सुन्दर एवं मनोहर प्रतीत होते हैं। बड़ की जड़ों का काढ़ा शहद के साथ पीने से प्रमेह का नाश होता है। इसका दूध पुष्टिकारक बताया गया है। इसके फल, मधुर, शीतल तथा स्तम्भक होते हैं :—

वटो रक्तफलः शृंगीन्यग्रोधः स्कन्धजो ध्रुवः।
क्षीरी वैश्रवणो वासो वहुपादो वनस्पतिः।
वटः शीतो गुरुर्ग्राही कफपित्तव्रणापहः।
वर्ण्यो विसर्पदाहघ्नः कषायो योनिदोषहृत्।

—भावप्रकाश

वट, रक्तफल, शृंगी, न्यग्रोध, स्कन्धज, ध्रुव, क्षीरी, वैश्रवण, वास, बहूपाद, वनस्पति, ये सब वट के संस्कृत ताम हैं। बरगद-कषाय रस-युक्त, शीतल, गुरु, ग्राही, शरीर के वर्ण को उत्तम बनाने वाला एवम् कफ, पित्त, व्रण, विसर्प, दाह, और योनि सम्बन्धी दोषों को दूर करता है।

जामुन—यह एक विशेप उपयोगी पेड़ है। इसकी चिकनी लकड़ी अधिक मज़बूत तो नहीं होती, फिर भी औषधि-निर्माण में इसका महत्त्व है। इस पेड़ का फल, खट्टा, मधुर शीतल, मल स्तम्भक एवं पित्त-नासक होता है। इसकी छाल 'रक्तातिसार' पर अपना प्रभाव दिखाती है। बिच्छू के दंश पर इसके पत्तों का रस लाभदायक है। जामुन का सिरका पेट के गुल्म और विषूचिका के विनाशार्थ उपयोगी सिद्ध हो चुका है। जामुन की गुठली को घिसकर लगाने से मुहासे नष्ट हो जाते हैं।

आंवला—यह पेड़ हमें अमृत फल देता है। गरीबों के लिए इसका फल नारंगी के समान है। इसका अचार और मुरब्बा सबको प्रिय है। आयुर्वेद के प्रसिद्ध रसों का निर्माण इसके रस से होता है आँवले के वृक्ष की उपयोगिता सर्वांगीण है। यह कुछ तीखा, सारक, मीठा, कढ़ुवा, खट्टा, फीका और शीतल होता है। यह जरा (बुढ़ापा) और व्याधि का नाशक, वृष्य, केश हितकारी और अरुचि-नाशक होता है, तथा रक्त, पित्त, प्रमेह, विष, ज्वर, आध्मान, बंधकोष, सूजन, शोष, तृषा, रक्तविकार, और त्रिदोष का नाश करता है।

—वृक्ष-विज्ञान पृ० १३१-१३२

इसके सम्बन्ध में यह दोहा प्रसिद्ध है :—

हरड़ बहेड़ा आँवला, घी शक्कर से खाय।
बगल में दाबै तीन जन, सात पैंड़ उड़ि जाय।

आँवला पुरुष-शक्ति की वृद्धि में अद्भुत प्रभाव दिखाता है। महर्षि च्यवन को यौवन की प्राप्ति इसी फल से ही हुई थी। सूखे आँवले भी कम उपयोगी नहीं होते। अरुचि, खुजली, स्वरभंग, प्रमेह आदि रोगों पर इस फल का प्रयोग खूब किया

जाता है। वीर्य-वृद्धि के लिए आँवले के रस को घी में मिलाकर खाया जाता है। आँवले के चूर्ण को घी तथा शक्कर के साथ खाने से सिर का दर्द शान्त हो जाता है। केशों को श्याम रखने में इस फल ने विशेष प्रसिद्धि पायी है। मस्तक रोग के नाशार्थ त्रिफला-लौह* का प्रयोग किया जाता है। शरीर की कान्ति-वृद्धि में आँवले के महत्त्व को सबने एक स्वर से स्वीकार किया है।

पाण्डुरोग में सूखा आँवला काम में लाया जाता है।

त्रिष्वामलकमाख्यातं धात्री तिष्यफलाऽमृता।
हरीतकी समं धात्री फलं किन्तु विशेषतः।
रक्तपित्त प्रमेहघ्नं परं वृष्यं रसायनम्।
हन्ति वातं तदम्लत्वात्पित्तं माधुर्यशैत्यतः।
कफं रूक्षकषायत्वात्फलं धात्र्यास्त्रिदोषजित्।
यस्य यस्य फलस्येत वीर्यं भवति यादृशम्।
तस्य तस्यैव वीर्येण मज्जानमपि निर्दिशेत्।

—**भावप्रकाश पृ० १३५**

आमलक, धात्री, तिष्यफला, अमृता, पंचरसा, श्रीफली, धात्रिका, शिवा, अकरा, व्यवस्था, वृष्या, कायस्था, बहूफला, शान्ता, अमृतफला, वृत्तफला, रोचनी, कर्षफला, तिष्या, धात्रीफल, श्रीफल, अमृतफल, शिव, जातीफल ये सब आँवले के संस्कृत नाम हैं।

आँवले का फल हरड़ से अधिक उपयोगी है। यह रक्त-पित्त तथा प्रमेह को नष्ट करता है। वीर्य-वर्द्धक भी है।

आम—आम का पेड़ तथा फल, दोनों ही कई दृष्टियों से उपयोगी हैं। इस वृक्ष की अनेक जातियाँ हैं, जिनसे भिन्न-भिन्न प्रकार के आम प्राप्त होते हैं। पके आम मधुर होने के कारण विशेष प्रिय होते हैं। आम, रसाल, सहकार, अनिसौरभ, कामांग, मधुदूत, माकन्द, पिकवल्लभ, मृषाल, वसंतद्रु,

* हरड़ बहेड़ा और आँवला।

पिकप्रिय, आदि आम के अनेक नाम संस्कृत साहित्य में प्राप्त हैं। आयुर्वेद के अनुसार आम का फूल (बौर) शीतल, रुचिकारी, वातकारक, एवं कफ, पित्त, प्रमेह दुष्ट रुधिर नाशक है। वृक्ष पर पका हुआ आम भाटी और वात-विनाशक बताया गया है। पाल का आम पित्त-नाशक एवं विशेष मधुर होता है। आम-रस बल-दायक, दस्तावर, तृप्ति दायक, एवं कफ वर्द्धक है। आम की छाल का उपयोग प्रदर रोग के विनाशार्थ किया जाता है। आम की गुठली के चूर्ण को शहद के साथ खाने से पेट के कृमि नष्ट हो जाते हैं।

महुआ—यह वृक्ष ग्राम निवासियों के लिए कल्पवृक्ष के समान है। इसका प्रत्येक अंग, फूल तथा फल मानव जाति के लिए लाभप्रद है। इसके फूल मधुर, धातु वर्धक, गुरु और स्निग्ध होते हैं। धातु-पुष्टि के लिए इस पेड़ की छाल का चूर्ण गाय के घी और शहद के साथ खाया जाता है। बकरी के दूध में महुए के फूलों को पकाकर पीने से गठिया रोग नष्ट होता है। संस्कृत में महुए के नाम ये हैं—

मधूक, गुडपुष्प, मधुपुष्प, मधुस्रवां, वानप्रस्थ, मधुष्ठील, मधूलक आदि।

'भाव प्रकाश' के अनुसार महुए का फल शीतल, भारी, मधुर, वीर्य वर्द्धक हृदय को अप्रिय, और वात-पित्त, तृषा, रक्त-विकार' दाह, श्वास, क्षत, क्षम को नष्ट करता है।

पलाश—जंगलों में पलाश के वृक्ष सर्वत्र पाये जाते हैं। इसकी उपादेयता आयुर्वेद में अन्य पादपों के समान तो नहीं है, फिर भी अनेक रोगों पर इसका प्रयोग किया जाता है। इसके पुष्प अत्यधिक लाल होते हैं। कवियों ने इसकी लालिमा को कानन-पावक के रूप में देखा है। पलाश अग्नि को दीप्त करने वाला वीर्य-वर्द्धक, दस्तावर एवं संग्रहणी, बवासीर तथा गुदा के रोगों नष्ट करता है।

ढाक के फूल को रुधिर विकार, और कुष्ठ रोग को दूर करने में समर्थ बताया है।

पलाश के पेड़ में लम्बी - लम्बी फलियाँ लगती हैं, जो पलाश - फल कहलाती हैं। ये कृमि, वात, कफ तथा कोढ़ को नष्ट करती हैं।

हिन्दी में पलाश को ढाक कहते हैं। संस्कृत में इस वृक्ष के नाम ये हैं—पलाश, किंशुक, पर्ण, रक्तपुष्पक, ब्रह्मवृक्ष, त्रिपर्ण, आदि।

'भावप्रकाश' में इस वृक्ष के नाम पुष्प एवं दल का विवरण इस प्रकार दिया गया है—

पलाशः किंशुकः पर्णो यज्ञियो रक्तपुष्पकः।
क्षारश्रेष्ठो वातहरो ब्रह्मवृक्षः समिद्वरः।
पलाशो दीपनो वृष्यः सरोष्णो व्रणगुल्मजिम्।
कषायः कटु कस्तिक्तः स्निग्धो गुदरोजजित।
भग्न संधान कृद्दोष ग्रहण्यर्शः कृमीनहरेत्।
तत्पुष्पं स्वादु पाके तु कटु तिक्तं कषायकम्।
वातलं कफ पित्तास्र कृच्छ्जिद ग्राहि शीतलम्।
तृड्दाह शमकं वातरक्त कुष्ठहरं परम्।
फलं लघूष्णां मेहार्शः कृमिवात कफाहम्।
विपाके कटुकं रूक्षं कुष्ठ गुल्मोदर प्रणुत्।

—पृष्ठ २५६

(अति संक्षेप में इन श्लोकों का भाव ऊपर दे दिया गया है।)

बेल—इस वृक्ष के पत्तों का धार्मिक महत्त्व भी है। भगवान् शंकर की पूजा में ये पत्र विशेष रूप में समर्पित किए जाते हैं। इसके पके फल स्वादिष्ट होते हैं। बेल-पत्र वात-नाशक तथा फल (पका हुआ) दाहक, मधुर ग्राही एवं वातकर होता है। बेल के पत्तों को गुड़ में मिलाकर यदि खाया जाय तो विषमज्वर शान्त होता है। जीर्ण-ज्वर को दूर करने में बेल की जड़ विशेष प्रभाव दिखाती हैं।* बेल-पत्र का लेप शारीरिक दुर्गंधि को मिटाता हैं 'भाव प्रकाश' में इस का विवरण इस प्रकार मिलता है:—

*** वृक्ष विज्ञान पृ० १५३-१५५,**

बेल का वृक्ष बड़ा होता है। शाखाओं में काँटे होते हैं। डालियों में पत्ते बहुत होते हैं। एक डंठल में तीन-तीन पत्ते त्रिशूलाकार होते हैं। फल गोल - गोल कड़े छिलके का, तोल में आधपाव से लेकर ढाई सेर तक का होता है। यह खाने में स्वादिष्ट तथा बहुवीज युक्त होता है। गोंद के समान चिपकता हुआ एक पदार्थ इसके गूदे में रहता है। ग्रीष्म ऋतु के प्रारंभ में इसके पुराने पत्ते गिर जाते हैं, उनके स्थान पर लाल रंग के नवीन पत्ते निकलते हैं, परन्तु फिर हरे हो जाते हैं। बहुत से लोग इसकी लकड़ी चन्दन के समान मानते हैं। इसके मूल की छाल दशमूल के क्वाथ में एक प्रधान औषधि मानी जाती है। बेल के वृक्ष हिन्दुस्तान के प्रत्येक भाग में होते हैं और वन में तो बेल का वन ही है। इसका कच्चा फल औषधि के प्रयोग में आता है।

इस प्रकार कुछ वृक्षों के महत्त्व पर आयुर्वेद-मतानुसार प्रकाश डाला गया है। पुष्पों का प्रयोग भी औषधि-निर्माण में होता है। सौन्दर्य के प्रतीक ये पुष्प जीवनी-शक्ति को सुन्दरतर बनाने में बड़े सहायक माने गये हैं। गुलाब त्रिदोष नाशक है तो चमेली मुख-दन्त-मस्तक के रोगों को जड़ से नष्ट करती है। चम्पा का पुष्प मंद सुगंध रखता हुआ भी कृमि विनाशक कहा गया है। केवड़े का फूल नेत्रों की ज्योति को बढ़ाता तो पद्मिनी रुधिर-विकारों को शीघ्र नष्ट करती है। पुष्पो में गुलाब का विशेष स्थान है। कवियों के समान ही आयुर्वेद-विशारदों ने इसके विषय में बहुत कुछ लिखा है। इसका इत्र बड़ा मनमोहक होता है। गुलकन्द की मधुरता हृदय को पुष्ट करती है। काँटों के साथ फूलने वाला यह गुलाब शीतल, हृदय को प्रिय, ग्राही तथा चरपरा होता है। 'भाव-प्रकाश' के अनुसार सेवती और गुलाब---ये दोनों एक ही जाति के हैं। परन्तु सेवती का वृक्ष और गुलाब का क्षुप होता है। विशेष करके ये दोनों वन उपवन और पुष्प वाटिकाओं में बहुत होते हैं। सेवती के सफेद फूल होते हैं और ये प्राचीन हैं। गुलाब दो प्रकार का होता है एक देशी, जिसमें महा सुगंध आती है और फूल गुलाबी होते हैं; फूल चैत वैशाख में आते हैं; दूसरा सादा गुलाब चीनी। वह कई प्रकार का होता है लाल, गुलाबी, सफेद और पीला। इन पर भाँति-भाँति के फूल बारहों महीने आते हैं; यह नवीन जाति का है अर्थात् पहिले हिन्दुस्तान

में नहीं होता था। अब ऐसा फैला है कि उसके नाम से गुलाबघाटी और पुष्पोद्यान प्रसिद्ध हो गये हैं। संस्कृत में शतपत्री (सेवती गुलाब) के नाम हैं—

शतपत्री, तरुणी, कर्णिका, चारुकेशरा
महाकुमारी, लाक्षा, कृष्णा, अति मंजुला
सुवृत्ता, शतपत्रिका, लाक्षापुष्पा आदि

—'भाव प्रकाश २३८'

इस निबंध को लिखने में मैंने निम्नस्थ ग्रन्थों से सहायता ली है; अतः मैं विद्वान् लेखकों का श्रद्धापूर्वक आभार मानता हूँ।

१ भाव प्रकाश, २ हारीतक्यादि निघंटु, ३ शान्तिग्राम-निघंट्-भूषण, ४ वृक्ष विज्ञान, ५ सचित्र वहृद् बूटी प्रचार, ६ धन्वन्तरि (अनेक अंक)।

—०००—
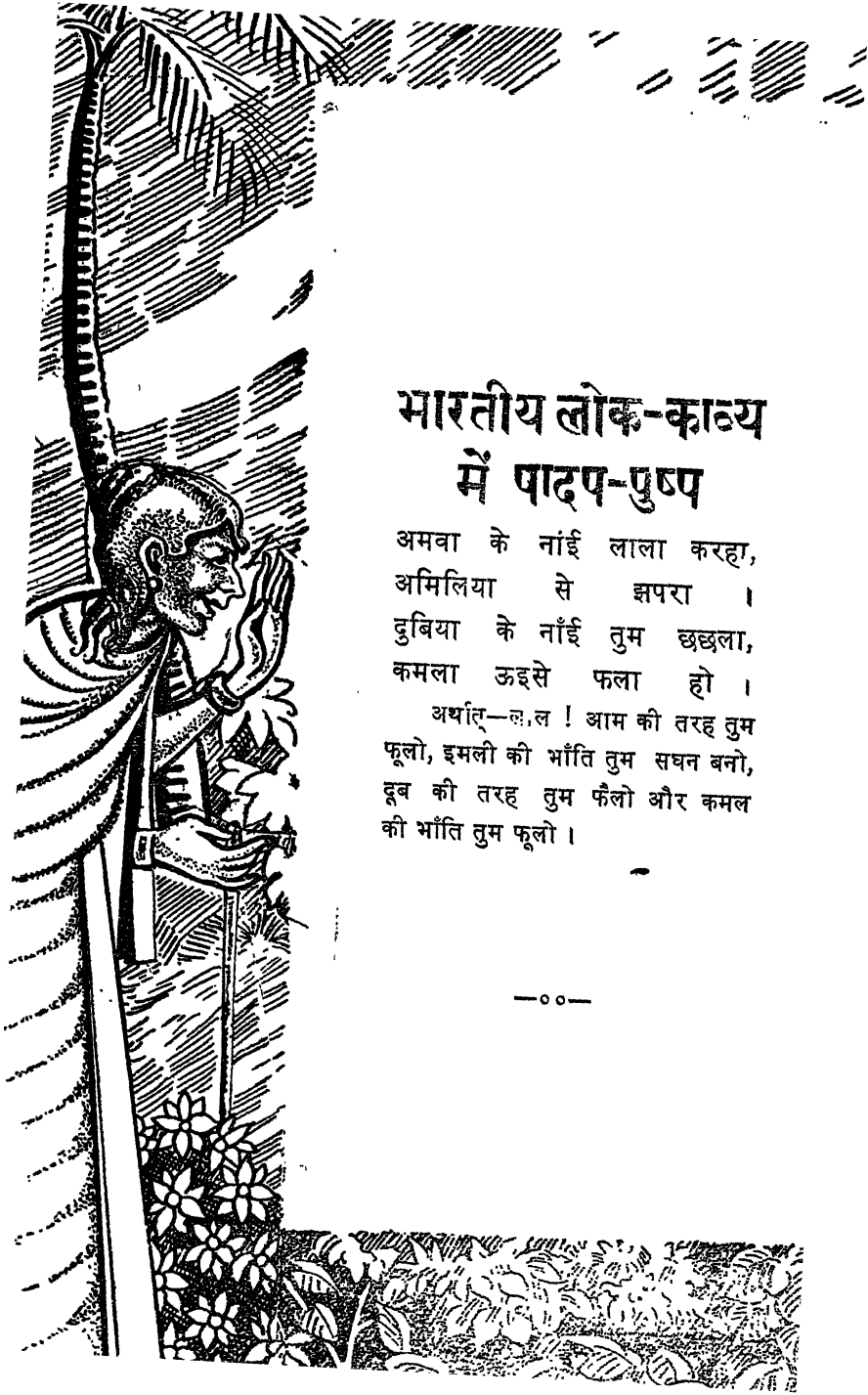
भारतीय लोक-काव्य में पादप-पुष्प

अमवा के नांई लाला करहा,
अमिलिया से झपरा ।
दुबिया के नाँई तुम छछला,
कमला ऊइसे फला हो ।

अर्थात्—लाल ! आम की तरह तुम फूलो, इमली की भाँति तुम सघन बनो, दूब की तरह तुम फैलो और कमल की भाँति तुम फूलो ।

—○○—

लोक जीवन मे पादपों का महत्त्व

लोक-जीवन में वृक्षों का अत्यधिक महत्त्व है। इन पादपों की हरियाली ही लोक-मानस को प्रसन्न रखती है। पेड़ न रहें तो लोक-प्राण नीरस बन जाय। वृक्षों की छाया में ही लोक के स्वर गीत बनकर निकलते हैं। बिरवों के नीचे बैठकर ग्राम-बधू अपने जीवन के इतिहास को पढ़ती है। हमारा लोक-गीत पेड़ की शाखा पर झूलता और कोमल किसलय पर ऊँघता है। यही पेड़ लोक की भूख मिटाता और प्यास को शान्त करता है। आदि मानव वृक्षों की हरियाली में ही उत्पन्न हुआ, बढ़ा, खेला-कूदा, जवान बना, जीवन का रस लिया और समाप्त हुआ। परमात्मा ने मानव-सृष्टि के पूर्व वृक्षों को उत्पन्न कर के बड़ा भारी काम किया। हमारे जीवन के आधार ये पादप ही हैं। ग्रामों का दायित्व, आज से नहीं, अपितु अज्ञात काल से वृक्षों पर ही अवलंबित है। ये पृथ्वी के पुत्र जन-जन का उल्लास और अनुभूतियाँ हैं। हमारे जीवन के समस्त कार्य इन वृक्षों के ही समक्ष होते रहते हैं। गोरी पेड़ की शाखा पकड़ कर अपना दुखड़ा रोती है और उसके आसूँ गिरने लगते हैं। बिरवा उसे मनाता, समझाता और उसके आँसू पोंछता है। गोरी इसके अश्वासन में माता की गोद का सुख पाती है। घर में विपत्ति आती है, चारों ओर नैराश्य दिखाई पड़ता है, वधू बिकल हो उठती है। वह वट की तरफ़ दौड़ती है और उसकी पूजा करके अपने दुःख की समाप्ति मान लेती है। नारी ने पादपों को अपना कर बहुत कुछ पाया है। हार में काम करती हुई युवती जब थक जाती है तव वह पीपल की छाया में बैठकर सुख की साँसें लेती है। सास की कड़ी फटकारों को सुनकर जब भोली बहू सिसकियाँ भरने लगती है, तब आँगन की तुलसी उसे समझाती हुई कहती है—बेटी, समझ से काम कर। अपने पहले घर को भूल जा। अब तो तुझे इसी घर में जीवन बिताना है। वह समय कितना अच्छा होता है जब कोयलिया अमराई में कूकती है और नवेली बहू अपने प्रियतम के साथ अठखेलियाँ करती है। झोपड़ी के सामने लहराते हुए नीम के पेड़ को देखकर एक निर्धन ग्राम-निवासी अपनी गरीबी भूल जाता है। भूखे पेट को दबा कर एक वृद्ध किसान वृक्ष से बातें करके अपनी क्षुधा शान्त कर लेता

है। धूल से सने बच्चे जब पेड़ की छाया में खेलते हैं, तब उनकी माताएँ हाथ जोड़ कर इस परोपकारी महादेवता वृक्ष को प्रणाम करती हैं और आँचल फैलाकर कहती हैं—"वृक्ष बाबा, हमारे सौभाग्य के रक्षक तुम ही हो; हमारे बाल-गोपाल के सहारे तुम ही हो। इन्हें तुम धूप से बचाना, भूतों से बचाना, और जीभर खिलाना।"—सृजन और प्रलय के साक्षी ये पेड़ ही हैं। कौन कहता है कि ये निर्जीव हैं। इन्हें प्राण-विहीन कहने वाला स्वयं मृत है। इनको कठोर बताने वाला अपनी कठोरता को ही प्रकट करता है। जीवन को सरस बनाने वाली वृक्षों की हरियाली इस विशाल गगन के समान असीम और गंभीर सागर की भाँती अपार अपरिमेय है।

हमारे लोक-काव्य की साँसें ये वृक्ष ही हैं। फूल इस ललित काव्य की मधुरिमा है। इस आदि-काव्य की सृष्टि पेड़ों की सुखद छाया में ही तो हुई है। इसीलिए इस चिरंतन काव्य की पंक्ति-पंक्ति में पेड़ लहराते और फूल खिलते हैं। सच तो यह है कि लोक-काव्य का रसस्वादन वही कर सकता है, जिसका हृदय पेड़ की भाँति सरस और पुष्प की तरह विकसित हो। लोक-काव्य का अध्ययन करने वाला यह सुगमता से समझ सकता है कि ये वृक्ष हमारे परिवार के ही अंग हैं। इनका फूलना-फलना हमारी समृद्धि का परिचायक है। इनकी हरियाली हमारे जीवन की सुषमा और हमारी रागात्मक भावना की छाया है।

"हरियाली में कोख अंतर्निहित है और कोख में हरियाली। हरियाली सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्रतीक है। लेकिन लोक-रुचि इससे भी दो पग आगे बढ़ गयी। उसने सृजन के प्रतीक रूप में हरियाली को मान्यता नहीं दी, वल्कि उसने सृजन-संबंधी अधिकांश भावनाओं को हरियाली का ही रूप दे दिया। वह केवल हरियाली की बात करता है, और उससे सृजन की समूची व्यापकता स्पष्ट हो जाती है वह केवल वृक्षों की बात करता है, और उससे परिवार की सारी बातें स्पष्ट हो जाती हैं। वह परिवार के स्थान पर आम, इमली, नींबू, नीम, पीपल, बड़, बबूल के ही फलने-फूलने और फैलने की बात करता है और इन वृक्षों में परिवार के सभी सगे-संबंधी मां, बाप, भाई, भौजाई, देवर, बहू, जेठ, ननद, इत्यादि साकार हो

उठते हैं। वह परिवार की बात करता है तो उसमें वृक्षों की हरियाली स्वयमेव चित्रित हो जाती है।"*

अनेक देवी-देवताओं के विश्राम-स्थल ये पादप प्रणम्य और सेवनीय हैं। यही कारण है कि इन्हें लगाना और इनकी रक्षा करना पुण्य-कार्य माना गया है। सब जानते हैं कि पीपल वृक्ष की छाया में ही महात्मा बुद्ध को आत्म-ज्ञान प्राप्त हुआ था। निम्नस्थ बाघेली सोहर में बताया गया है कि आम के पेड़ का लगाना जन-हित की दृष्टि से शुभ है। तोते अमियाँ कुतरेंगे और अपनी भूख मिटाकर प्रसन्न होंगे।

अमवाँ लगाए क बड़फल जो आम फरहैं हो।
अमवाँ में लगि हैं टिकोरिया त सुगना[१] कतरैं हो।

भगवती शीतला की बन्दना करता हुआ एक फल पूछता है कि माता केवड़े का वृक्ष और अनार का वृक्ष कहाँ लगाऊँ और किससे इनका सिंचन करूँ ?

दे गई बारम्बार हमें आसा के बिरछा दे गई हो माँ।
कहाँ लगाऊँ मैया दहि क्योरे, कहाँ लगाऊँ अनार।
हम्हें आसा के बिरछा दे गई हो माँ।

अगुवारे लगाऊँ दुधिया क्योरे,
पिछुआरे लगाऊँ अनार।
हम्हें आसा के बिरछा देगई हो माँ।
काहे से सींचों दुधिया क्योरे,
काहे से सींचों अनार।
हम्हें आसा के बिरछा देगई हो माँ।
दुधुअन सींचो मैया दुधिया क्योरो,

---

*परम्परा लोक-गीत-अंग (खेत, ब्रच्छ और हरियाली, ले० श्री विजयदान देथा)
१ तोते,

कृत्रिम सीमाओं में बाँध कर यहां वृक्षों का जन-कल्याणकारी रूप निखारा जायगा ।

अमृतलाल अनार

हमें आशा के बिरछा दे गई हो मां ।

आम की शीतला छाया में एक छोटी चारपाई पड़ी है, उस पर गौरी, तथा महादेव जी बैठे हुए हैं—

आमा की शीतल छैयाँ ओई तरैं गौरी की सेज,
सकरे खटोला-अरे गौरा महादेव घिसामिस होयँ ।
सुनियो गौरा महादेव के राछेरे ।

—बुन्देली लोक गीत

सावन के महीने में ससुराल जाती हुई एक बधू कहती है—नीबू के पेड़ के नीचे कुछ समय के लिए डोला रखदो, है मुसाफिर ! मुझे जी भर सावन की छटा देख लेने दो ।—

"निबुला तरैं डोला धर दे मुसाफिर,
आई सावन की बहार रे ।
अबकी सावन मैं झूल न पाई,
जानैं पड़ौ ससुरार रे ।
जल बिच चमकै उजरी मछरिया,
रन मैं चमके तरवार रे ।
घोड़िला पै चमके पिय की पगड़िया,
सिजिया पै बिन्दिया हमार रे ।
मोरे पिछवाड़े एक बगिया लगत है,
निबुला नरंगी अनार रे ।
कच्ची कलिन हाथ सुअना कतर गऔ,
अंगिया में पड़ गओ दाग रे ।

—बुन्देली लोक गीत

प्राचीन समय में हमारे ग्रामों में बागों की बहार थी, और विशेष रूप से इनमें नारंगी तथा अनार के पेड़ लगाये जाते थे ।

भगवान् रामचंद्र भी बगिया लगाने में सुख का अनुभव करते थे। वे अपने बाग की देखभाल स्वयं करते थे और पके हुए नीबुओं को अपनी ससुराल भिजवा देते थे। देखिए—

राम के बगिया, सिता कै फुलवारी।
लछिमन देवरा, बइठ रखवारी।
तोरि तोरि नेबुवा पठावैं ससुरारी।
वहि नेबुवा के बनैं तरकारी।

—बाघेली संहार

बसन्तु ऋतु में गये जाने वाले लोक गीतों में विविध पुष्पों, फलों एवं पदार्थों का नामोल्लेख हुआ है—

(१)

अब रितु आइ बसंत बहारन,
पान फूल फल डारन।
हारन हद्द पहारन पारन,
धाम धवल जल धारन।............

(२)

दिन आये बसन्ती नीरे ललित और रँग की कीरे।
टेसू और कदम फूले हैं, कालिन्दी के तीरे।
बसते रात नदी नद तट पै, मजे में पंडा धीरे।
'ईसुर' काह नार बिरहन पै, पिउ पिउ रटत पपीरे।

(३)

बालम नओ बगीचा जारी,
दिन दिन पै तइयारी।
बिरछन बेल लतान फैल गई,
झुक आई अँधियारी।

डोड़ा[1], लोंग, लायचीं लागी,
फरीं जिमुरियाँ भारी।
'ईसुर' उजर जान ना दइयो,
करा देव रखवारी।

(४)

गेंदा का फूल ललोतर,
हो, बेला कै सफेद।
केवड़ा का फूल सोहामन,
देबी का चढ़इ,
केवड़ा कै फूल सोहामन।

(५)

हरि हो, कोइलिया बोलइ,
कोइलिया बोलइ अमौवा कै डार।
कोइलिया बोलइ।............
कहउँ होतिउँ बदरिया घुमड़ि रहतेउँ,

(६)

जउ हम होइत नेब्बूनौरंगी,
राजा पियारे के बगिया लटकि रहतेउँ।
जौ हम होइत मलया गिरि चंदन,
राजा पियारे के मथवा लपटि रहतेउँ।
जौ मैं होतिउँ लँइची का बिरवा,
राजा पियारे के मुहमा गमकि रहतेउँ।
जौ मैं होतिउँ मोती का बिरवा,
पिया प्यारे के छतिया लपकि रहतेउँ।

—बाघेली लोकगीत

---

१ बड़ी इलायची।

(७)

कौना मास फूलेला गुलबवा[1] हो रामा,
कि कौना रे मासे।
बेला फूले चमेली अवरु फूलेला कचनरवा[2]।
गेंदवा जो फूले रामा माघ रे फगुनवा,
चैत मासे फूलेला गुलबवा हो रामा।

(८)

अमवा के लागले टिकोरवा रे संगिया,
गूलरि फरेले हड़फोर।
गोरिया का उठलेहा छाती के जोबनवा,
पिया के खेलवनवा रे होई।

—भोजपुरी लोकगीत

(९)

अमवा के डढ़िया[3] बोलेल कोइलिया,
सुगा बरवा[4] के बोले डाढ़ि।
अमवा मउरा गइले सेमर उकठि गइले,
बरवा के सूखि गइले डाढ़ि।

—भोजपुरी लोकगीत

(१०)

चइत मास जोबना फुलायल हो रामा।
(कि) सइयां नहिं आयल,
सइयां नहिं आयल।
चइत मास आयल।

---

१ गुलाब, २ कचनार, ३ डाल, ४ वट।

रहि रहि जिया घबरायल हो रामा
बेली फुलायल चम्पा फुलायल,
सब बन फुलवा फुलायल हो रामा।
अमवा फुलायल,
महुआ फुलायल,
मलियाक बगिया हो रामा।

अर्थात् चैत में जोबन रूपी फूल खिल गये, किन्तु, प्रियतम नहीं आये, और चैत आगया। रह-रह कर जी घबरा उठता है, हे राम! बेली खिल गयी, चंपा खिल गयी। वन-उपवन में रंग-रंग के फूल चिटख गये। आम में बौर लग गये। माली के बाग में महुआ खिल गया किन्तु प्रियतम नहीं आये।

—मैथिली गीति काव्य, श्री राकेश

(११)

कौन बन आमा, कौन बन जाम।
कौन बन में निकलेंगे लखन सिय राम।

—छत्तीस गढ़ी ददरिया

(१२)

आवय बहार गुलि बादामन,
शारिका दीबिये अंदी अंदी।
पोशि चमन देवार वन्दी।
पोश लागस सुबुहन स शामन।
आवय बहार गुलि बादामन।

अर्थात् बादाम के फूलों की बहार आ गयी है। शारिका देवी के चारों ओर फूलों के चमनों की दीवार बँधी है। सुबह-शाम फूल चढ़ाऊँगी। बादाम के फूलों की बहार आगयी है।

—काश्मीरी लोक-गीत, श्री देवेन्द्र सत्यार्थी

राजस्थानी लोक-गीतों की निम्नस्थ पंक्तियों में वृक्षों का मनोरम स्वरूप अंकित किया गया है।

मधुवन रो ए आंबो मोरियो,
ओ तो पसर्‌यो ए सारी मारवाड़ ।
आज म्हाँरी अमली फल रही जी ।
ऊगी नीमड़ली घहर-घुमेर, मारू जी,
फैली सौ क़ौस में, जी म्हाँरा महाराज ।
ऊग्यो नींबू पान-दु-पान, बारी घण, वारी ओ हंजा ।
ऊगतड़े जुग मोयो ओ गोरी सायबो, जी राज ।
मर वे री जड़ ऊंड़ी पाताल में ए ।
हे के भोली, बारां रे कोसां में मरवो झुक रह्यो ए ।
नींबूड़े रो जड़ गई रे पताल,
ओ थां पर वारी रे साइयाँ ।
सौवां ने कोसां पर नीबू फैलियो ओ राज ।

× × ×

बांवलिया कितरा बीघा में थारो पेड़ ?
बांवलिया, कितरा बीघा में थारी छाँवली ।
गोरी ए, बारै बीघा में म्हांरो पेड़ ।
सोलै बीघा में म्हारीं छावली ।

उधर मधुवन का आम बौरा गया है। हरा-भरा ! फला-फूला । और वह फैला तो इतना फैला कि सारे मारवाड़ ही में फैल गया । इधर इमली फल रही है, फैल रही है; उधर घहर-घुमेर नीमड़ी झूम रही है—सौ-सौ कोसों में फैल गयी है । इधर नन्हा-सा नीबू उग आया है। अभी तक सिर्फ पान-दो पान ही अंकुरित हुए हैं। फिर भी उसने उगते ही सारे जुग को मोह लिया । देखते-देखते उसकी जड़ें पाताल तक गहरी चलीं गयीं । वह सौ-सौ कोसों में फैल गया । उधर मरवे का छोटा-सा पौधा भी पाताल में अपनी जड़ें फैला रहा है। बारह-बारह कोसों तक उसकी डालें झुक गयीं हैं । इधर बबूल का पेड़ भी बारह बीघों में छाया हुआ है । और छाँह उसकी सोलह बीघों तक फैली हुई है ।

(खेत, ब्रच्छ, और हरियाली)

लेखक श्री विजयदान देथा

लोक-काव्य में अलंकारों के रूप में भी पादप, पल्लव, पुष्प एवं फल का प्रयोग हुआ है।

एक पति कह रहा है कि चम्पा के फूल के समान मेरी स्त्री सुख की नींद सो रही है—

'चम्पा बरन मोर धनिया,
सहज सुख सोवह हो।'

× × ×

एक कन्या अपने माता-पिता और नगर-निवासियों को आम के वृक्ष के समान हितकारी बताती है—

आम रूख अम्मा रे आम रूख बाबा
आम रूख नगरां के लोग।

अविवाहिता का शरीर पीपल के पत्ते के समान सदैव डोलता रहता है—

पीपर को पत्ता न डोले रे............
पत्ता न डोले अनव्याही को।
पीपल के पत्ता सो।.........

× × ×

एक विरहणी अपनी सखी से कह रही है कि उसकी देह चंदन के वृक्ष के समान हिलती रहती है :—

चंदन बिरछ अस डोलै,
मोरी देहियाँ हो रामा।
कइसे कटै दिन-रतियाँ-हो रामा।

× × ×

युवती कमसिन है लेकिन उसकी देह सुपारी सी गठीली है। पुष्प-वर्ण के समान वह हल्की है और चन्दन की भाँति चिकनी। इन पंक्तियों में लोक-कवि ने अपनी रसिकता का पूर्ण परिचय दे दिया है—

पनमा अइसे पातर सुपरिया अइसे ठुरहुर हो।
रामा, फुलवा वरन हलुकुइयां,
चँदन अइसे चीकन हो।

\+ \+ \+

अवधी के लोक-गीत में वह सुन्दरी केसर के समान महकती है—

'पनवा की नइयाँ राम पातर,
सुपरिया अस ठुरहुर।
फुलवा वरन हलुकइया,
केसर अस महकैं।

\+ \+ \+

कोई रसिक अपनी प्यारी को जीरे के समान पतली और फूल के समान सुन्दर बता रहा है। सबकी रुचि समान कैसे हो सकती है ?

जिरवै अस धन पातरि,
कुसुम अस सुन्दरि हो।

× × ×

माता अपनी पुत्री की आँखों तथा ओष्ठों की तुलना क्रमशः नीबू की फाँक तथा पीपल के पात से करती है—

आँख नीबू की फाँक बच्ची सोने की चिड़िया।
नाक सुए की चोंच, होठ पीपल के पात से।

वृक्षों तथा पुष्पों का देवी देवताओं की पूजा में विशेष महत्त्व है। जैसा कि पहले लिखा गया है, बट, पीपर, ऊमर, नीम आदि कई वृक्षों में भगवान् एवं भगवती का निवास है, अतः वे पूज्य हैं। भगवान् ने स्वयं कहा है कि निम्नलिखित पत्र पुष्प उन्हें विशेष प्रिय हैं—

बेला, चमेली, जूही, अतियुक्ता (माधवी लता) कनेर, वैजयंती, विजया, चमेली के गुच्छे, कर्णिकार, कुरैया, चम्पका चानक, कुन्द, कर्चूर, मल्लिका, अशोक तथा यूथिका इत्यादि फूल मेरी पूजा के लिए उत्तम होते हैं। केतकी का पत्ता और पुष्प, भृङ्गराज, तुलसी की पत्ती और फूल ये सब मुझे शीघ्र प्रसन्न

करने वाले हैं। लाल, नीले और सफेद कमल मार्गमीर्ष मास में मुझे अत्यन्त प्रिय हैं। ......

बिल्व-पत्र, शमी-पत्र और भृंगराज-पंत्र ये मेरे पूजन के लिए शुभ हैं।

[दोखिए संक्षिप्त स्कंद पुराण (कल्यणाङ्क) पृ० ३४३]

पलाश की लकड़ी यज्ञ के लिए पवित्र मानी जाती है। एक भक्त विप्र भगवती से विनय करता है कि वह आम के पत्ते, गाय के घी और पलाश की लकड़ी से हवन करता है—

आरे आम के पलउवा ए देवी,
गइया केरा घीव हो।
आरे परास के लकड़िया ए देवी
करीले आहुतिया हो।

(भोजपुरी ग्राम-गीत)

श्री भगवती दुर्गा के गीतों में नीम-वृक्ष का उल्लेख बारंबार हुआ है। दुर्गा मैया का झला नीम के पेड़ की शाखा पर डाला जाता है।

तुलसी के बिरवा की पूजा हिन्दू संस्कृति का एक प्रधान अंग बन गयी है। भगवान् विष्णु की कृपा पाने के लिए तुलसी महारानी की भक्ति अनिवार्य बतायी गयी है। प्रभु को तुलसी- दल के बिना छप्पन भोग अच्छे नहीं लगते—

"तुलसी महारानी नमो नमो।
सहस दल तोहरे रानी तुलसी।
एक दल देव हमैं महा पटरानी।
धूप दीप मलियागिरि चन्दन,
फूलन का बरसाना।
छप्पन भोग धरा प्रभु आगे,
ना भावे बिना तुलसी,
धनि धनि भागि तुम्हारी रानी तुलसी।"

लोक-काव्य की धरती पर हमारे वृक्ष और फूल मानव की भाँति बोलते हैं और उनके ही समान सुख-दुख का अनुभव करते रहते हैं। पादपों की अनुभूतियां

बड़ी सूक्ष्म होती हैं। वे अपने प्रिय जनों को पहचानते हैं और उनकी ममता को कभी नहीं भूलते। व्रज के पेड़ कृष्ण के वियोग में सूख गए थे। भगवती सीता के अपहरण के पश्चात् पंचवटी के वृक्ष अपने पुष्प रूपी आँसुओं को बहाकर खूब रोये थे।

आम का पेड़ फूल रहा है। एक सुन्दरी उसकी सुगंध पर मोहित होकर पूछती है—

"प्यारे! अभी तुम कैसे फूल गये?" आम का कहना है कि रिमझिम वर्षा से मैं पुलकित हो उठा हूँ—

'कि गुन अमवा बउरलै,
अरे ना जानों कौने गुन।
कि अरे अमवा तोके मलिया जो सीचेला,
कि अपने गुन।
नाहीं मोके मलिया जो सींचेला,
नाहीं हम अपने गुन।
रिमकि झिमकि दैव बरिसै उनके जो
बुंदे परे।

—कविता कौमुदी

वह समय कितना सुहावना था, जब हमारे देशवासी सौ-सौ आम के पेड और दस-दस हजार जामुन के बृक्ष अपने बागों में लगाया करते थे।

एक सय आम लगायन सौलय जामुन हो।
रामा तबहूँ न बगिया सुहावन हो।
एक रे कोयल बिनु।

एक वह दिन था जब हमारे देश में सर्वत्र सुपारी, चंदन, इलायची, महुआ कदंब, खजूर, नीबू, भमरी, पलाश, अनार, लौंग, बादाम, केला, नारंगी आदि के सुन्दर पेड़ सुशोभित थे।

मोरे पिछुवरवा सुपरिया कै पेड़वा,
अछन बिछन भई डार।

मोरे पिछवरवा लवँग केरि डरिया,
लवँग फुलै आधी रात ।

\+ + +

गंगा जमुनवा कै बिचवा, कदंब एक पेड़वा।
तेहिं पर परला हिंडोलवा झुलत रानी रुकुमिन।

\+ + +

छापक पेड़ छिउल कर पनबन घन बिन हो।
तिहिं तर ठाढ़ी सीता रानी तो बहुत विपति में हो।

\+ + +

पीपल की भल छइयाँ, सजन मन लागा हो।

× × ×

नदिया किनारे बेला किन बोए,
किनने बोए अनार ।

\+ + +

रामा के दुआरे पिपर केर बिरवा मोतियन करहई डार।

× × ×

महुआ की भीनी सुबास,
मन ललचावन हो ।

\+ + +

अरे मोरे पिछुअरवा खजुरवा ।
त फरिके लटकि बलमू ।
अरे चढ़ति के रहिलें देवरवा,
न चढ़लें हमार बलमू ।

\+ + +

आधी बगिया में आम बौरे, आधी में इमली बौरे हो।
तबहू न बगिया सुहावन, एक रे कोइलि बिनु हो।

\+ + +

अमवा महुअवा के बाग, ताहि रे बीच राह लगी।
अमवा के लामे लामे पात, टिकोरवा लटकि रही।

पुष्पों के प्रति भारतीयों का अत्यधिक प्रेम रहा है। लोक काव्य की मधुर भावनाएं विबिध पुष्पों के पराग से सदैव सुरभित हैं।

बनों में निवास करने वाले आदिवासियों के गीतों में वृक्षों एवं पुष्पों की प्रधानता है। उनका सारा जीवन पेड़ों की छाया में ही व्यतीत होता है और उनका शरीर पुष्पों के आभूषणों से नित्य प्रति सजता है। ये हीं इनके जीवन साथी हैं। ये प्रकृति-प्रेमी आदिवासी बृक्षों को बड़े प्रेम से सजाते और बड़े अनुराग से उनको सींचते रहते हैं।

आदिवासियों के नीचे लिखे गीतों में विबिध पादपों एवं पुष्पों का उल्लेख हुआ है—जिनके द्वारा उन्होंने अपनी मानसिक परिस्थितियों को व्यक्त किया है।

१

करमा

ए हे हे हाय पतरैला हो जवान
देखे मा लागे सुहावन रे।
कौन फूल फूले लुहि-लुहिआ हो?
कौन फूल फूले मन लाल?
कौन फूलेगा रस डोमरी।
जहाँ छैला करे दरबार।
देखे मा लागे सुहावन रे।
राई फूल फूले लुहि-लुरिया हो।
सेमर फूले मन लाल।
महुआ फूलेगा रस डोमरी।
जहँ छैला करे दरबार।
देखे मा लागे सुहावन रे।

२

खरल-खरल बाँस बोलै,
तबली निसाना ।
झिरियन में तोप छूटै,
बीजली निसाना ।

३

रानी लगावे आमे[1] अमुलिया[2] ।
राजा लगावे आम डार ।
सुन्दर रे ।

४

ऐ हे बरवा[3] के पीपर पाकै
सुवा कनैठी[4] देय ।
पातर मुँह के छोकरी,
मोरे परसि देय ।

५

पतिरा मुनगा[5] पातर पेड़,
मलनि सँवारो ।
मुनगा चढ़िला गूलर खाय ।
पातर गोरी के सरीर टूट गइले ।
मुनगा के डार ।

६

जमुनी[6] विरछा[7] जूड़ी छाँह,

---

१ आम, २ इमली, ३ बट, ४ आवाज,
५ एक बृक्ष, ६ जामुन का पेड़ ७ बृक्ष ।

ओही तरे पलँगा बिछाय,
जाय रे पहुड़ राजाराम ।

७

राई फूलै रे केर बगिया रे ?
गेंदा फूलै रे छतनार ।
बेहली का फूल, रस फूल डोहरी रे
देखनी मा लगत है सुहावन रे ।

८

लौकी बेला करैला की पाती हो हाय ।
ढाका बिना कुमलाय तलफ गै हो ।
न कछू बोलै न कुछ बताए हो हाय ।

९

बिरहा

पोखरा के भिटवा पै देखली तीन पेड़,
बिरवा केरा[८] कटहर[९] आम ।
ओखरे छाँहे बइठल तीन बनसुतिया,
देखली सीता, लछिमन, राम ।

१०

कच्चा रे आमा जमुन गदराय ।
पनघट माँ रंगीला छयल विदुराय ।
नई नई बगिया मा फूला हइ गुलाब ।
तहँ ठाढ़े होइके दइहौं जवाब ।

११

पीपर होतेंव जरी[१०] जमइतेव,
भुइयाँ[११] लपटेंव[१२] डार ।

---

८ केला, ९ कटहल, १० जड़, ११ पृथ्वी, १२ चूमती ।

आंमा[13] होतेंव दू[14] फर[15] फरतेंव[16],
सुआ जो होइतेंव दाँत ।

बिहार प्रान्त में रहने वाले मुण्डा आदिवासियों का साहित्य प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण है। इनके गीतों में काननो में निर्भीक सैनिकों के समान खड़े हुए अनेक बृक्ष आप को देखने के लिए मिलेंगे। आप कुछ ऐसे पुष्पों से भी परिचित हो सकेंगे, जो इस प्रदेश की सुन्दरता हैं।

(१)

ओको मुली रेया हो मेहम,
जुड़ी दारु गोलाँची ।
चियय मुली रेया हो मेहम
पौतिदारु अटल बा ।
सिंगी तुरोः रेया हो मेहम,
जुड़ी दारु गोलाँची
चण्डुः मुलुः रेया हो मेहम,
पाँति दारु अटल बा ।
सिंगी तुरतन लेखा हो मेहम,
गुडी दारु गोलाँची ।
चण्डु मुलु तन लेका हो मेहम,
पाँति दारु अटल बा ।

हे प्रिये, गुलइची के पेड़ का जोड़ा किस तरफ है? हे प्रिये अटल फूल के पेड़ों की पंक्ति किधर हैं? गुलइची का जोड़ा पेड़ पूरब की ओर है, और अटल फूलों की कतार पच्छिम ओर है। गुलइची का जोड़ा पेड़ उगते हुए सूरज के समान है। अटल फूलों की कतार चमकते हुए चाँद की तरह है।

(२)

बुरु चेतन सोखी लुदाम बा।
नारा लत्तर सोखी नाराइन।

---

१३ आम, १४ दो, १५ फल, १६ लदजाती।

पेटेः लेम सोखी लुदाम बा।
चंगड़ा लेम सोखी नाराइन।
अम जुड़ी सोखी-लुदाम बा।
अम जोता सूखी नाराइन।
पेटेः लेम सोखी लुदाम बा।
चंगड़ा लेम सोखी नाराइन।

—हे सखी, पहाड़ के ऊपर लूदम फूल है। हे सखी, नाले के नीचे नारायण फूल है। हे सखी, लूदम फूल को तोड़ लो। हे सखी, नारायण फूल को छिनगा लो। हे सखी, लूदम फूल तुम्हारी जोड़ी है। हे सखी, नारायण फूल तुम्हारा संगी है। हे सखी, लूदम फूल को तोड़ लो। हे सखी, नारायण फूल को छिनगा लो।

(बाँसुरी बज रही—ले० श्री त्रिगुणायत) पृष्ठ, १८४, १९०।

इस गीत में खजूर और जामुन खाने की चर्चा है।

सिंध्यां ना बीन मां सिंध्या खाबा गई,
सिंध्यां धोरिने होल्विही दि झेरे भाय भाय।
सिंध्यां ना उपरें ओधर चोडीने,
सिंध्यां धोरिने होल्विही दि झेरे भाय भाय।
खुलो कोरेनें विच ही लीझें वो यायणिही,
जां वहूँ ना वोर मां जांभूं खावा गई,
जां भं धोरिवे होल्विही दि झेरे भाय भाय।

—खजूर के जंगलों में खजूर खाने गये थे। उस खजूर के पेड़ पर चढ़कर उसे हिलादो, जिससे खजूर नीचे गिर जावेंगे। नीचे गिरने पर हमारी समधिन अपनी साड़ी के पल्ले में ऊपर ही उन्हें सँभाल लेगी। जामुन के वन में जामुन खाने गये। जामुन के पेड़ पर चढ़कर उसे हिलादो, समधिन साड़ी के पल्ले में ऊपर ही जामुनें सँभाल लेगी।

—आदि वासियों का प्रकृति प्रेम, ले० श्री, इन्द्रजीत शर्मा, विश्ववाणी १९५७।

लोक-जीवन के सतत संगी ये वृक्ष हमें बहुत कुछ देते रहते हैं। ग्राम-वधुएँ तो इनकी छाया में बैठकर अपने सुख-दुख की गाथाएँ सुनाती और सुनती हैं। विरहिणी पेड़ों के सहारे अपने परदेश-यात्री पति की लम्बी अवधि का परीज्ञान कर लेती है और एक लम्बी सांस छोड़कर स्वयं को समझा लेती है—

कवनी उमिरिया सासु निबिया लगायेन,
कवनी उमिरिया विदेसवा गये हो राम।
खेलत कूदत बहुवरि निबिया लगाये,
रेखिया भिनत गै विदेसवा हो राम।
फरिगै निबिया लहसि गये डरिया,
तबहू न आए तोर विदेसिया हो राम।

हे सास ! किस अवस्था में उन्होंने नीम के पेड़ को लगाया और किस उम्र में वे विदेश गये थे ? बहू ! खेलने-कूदने की अवस्था में (वाल्यावस्था में) उसने नीम का पेड़ लगाया था और रेख निकलने के समय (युवक होने पर) वह परदेश चला गया था।

हे सास ! पेड़ बड़ा हो गया है और उसकी सखाएँ फैल चुकी हैं; लेकिन आपके विदेशिया (आपका पुत्र) आज तक वापिस नहीं लौटे।

इन वृक्षों को हमें अपने मित्रों के समान अपनाना चाहिए। इनमें प्राण हैं और सुख-दुख की भावनाएँ हैं। काश्मीरी, मराठी, पंजाबी, गुजराती, बुन्देली, बघेली, अवधी, तैलगू, छत्तीसगढ़ी, मालवी, भोजपुरी आदि लोक गीतों में इन वृक्षों ने अपने जीवन की कहानियों को मानव-वाणी में कहा है।× निर्दय होकर जो मनुष्य इनका विनाश करता है, वह जीवन में कभी सुखी नहीं रह सकता। पालि ग्रन्थों में तो स्पष्ट वर्णन है, "कुछ देवता वृक्षों पर ही रहते हैं और इसी बात को लेकर भिक्षुओं को वृक्ष काटना मना किया गया है। जो भिक्षु किसी वृक्ष को काटता है उसे पाचित्तीय (प्रायश्चित) करना होता है।......"

समन्त पासादिका में आचार्य बुद्ध घोष ने लिखा है, "हर पक्ष में पूर्णिमा और अमावस्या को हिमालय में देवताओं की सभा होती है, उसमें देवताओं से वृक्ष धर्म पूछा जाता है—तुम वृक्ष-धर्म के अनुसार रहते हो या नहीं ? वृक्ष-धर्म कहते हैं—

× देखिए 'Flowering Trees in Indian' नामक पुस्तक का अध्याय Trees in India Folk Songs p. 33.

वृक्ष-धर्म के नष्ट होने पर वृक्ष देवता के खिन्न न होने दो। जो देवता वृक्ष-धर्म के अनुसार नहीं रहते, उन्हें देव-सभा में प्रवेश नहीं करने देते हैं।" ×

पीड़ित वृक्षों के शाप भयंकर होते हैं। आज का मानव भूख से तड़प रहा है। उसने वृक्षों को काटकर ही अकाल को निमंत्रण दिया है। वृक्षों का विनाश ही अवर्षण का कारण है। वृक्षों की हरियाली से हरा-भरा देश कभी अन्न की कमी से पीड़ित नहीं हो सकता। वन के पेड़ के शाप को ध्यान से सुनिए। इसमें उसकी पीड़ा बोल रही है—

"बुत्त वणोटया तू क्यों न खला एँ कुरमाणाँ
हिक्के तेरी भोएँ भैंड़ी, हिक्के तेरा ए मुड्ढ पुराणा
न मेरी भोएँ भैड़ी न मेरी मुड्ढ पुराणा।
कुज्झ खा लया कलहारियाँ दीयाँ डाचीयाँ।
कुज्झ वड्ढ लिया दरखाणाँ।
दरखाणा दे मरण वच्चियाँ बच्चड़े।
नित्त पइयाँ ढुक्कणे नित्त मुकाणाँ।
डाचीयाँ दे मरण तोड़े तोड़ीयाँ।
यह दीयाँ मुह्लाराँ ते सोने दीयाँ लाटीयाँ।
उम्भ ते लम्मे दे चोर बग्गने।
बन्हि के लै जायन बन्ह कताराँ।
मुड़ताँ नित्त पइयाँ ढुक्कनें नित्त दीयाँ बाहराँ।

—'ओ वन के पेड़, तू खड़ा क्यों रो रहा? एक तो तेरी धरती खराब है, दूसरे तेरा तना पुराना है।

न मेरी धरती पुरानी है, न मेरा तना पुराना है। कुछ तो मुझे कलहारों की ऊँटनियाँ खा गई कुछ मुझे तरखानों ने काट डाला।

तरखानों के बच्चे-बच्चियाँ मर जायें, उनके यहाँ हर रोज शोक मनाने के लिए संबंधी आया करें। ऊँटनियों के बच्चे-बच्चियाँ मर जायें, जिनकी रेशम

×पूजनीय वृक्ष, ले० भिक्षुधर्मरक्षित (आजकल, जौलाई १९५५; पृष्ठ २०)

की मुहारें हैं और जिनके गले में सोने की घंटियाँ हैं। दक्षिण और पश्चिम के चोर घूम रहे हैं। ये उन्हें कतारों में बाँध कर ले जायें। हर रोज चोरों की नयी-नयी टोलियाँ आया करें।+

इसी भाव को लिए हुए एक पंजाबी लोक गीत है, जिसका अंग्रेजी अनुवाद डॉ० रन्धावा ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक Flowering Tıees in India में इस प्रकार दिया है—

"Tree, O tree" said the parrot,
"Firstly, your soil is bad.
Secondly your stem is old."
"Neither my soil is so bad,
Nor, my Stem so old.
Firstly, the Nawab Sahib's she-camels have eaten me.
Secondly, the carpenters cut away the beams.
May the mourners in batches visit the carpenters houses.
May the Nawab's she-camels all expire
And may the wise old Nawab himself too expire."

(हिन्दी)—हे पेड़ हे पेड़, तोते ने कहा।
पहले तो तुम्हारी मिट्टी बुरी है।
दूसरे तुम्हारा तना पुराना होगया है।
न तो मेरी मिट्टी खराब है,
और न मेरा तना पुराना है।

पहले तो नवाब साहब की ऊँटनियों ने मुझे खा लिया है। फिर बढ़इयों ने मेरी शाखाएँ काट डालीं। भगवान् करे बढ़इयों के घरों में उनके संबंधी शोक मनाने आवें। नवाब साहब की सब ऊँटनियाँ मरजायें और नवाब साहब भी मर जायें।

नीबू के पेड़ का काँटा बहुत तेज होता है। बुन्देलखण्ड की एक गोरी नीबू तोड़ने गई और उसके गोरे हाथ में काँट लग गया। वह बेचैन होकर गा उठी—

+वृक्ष बुलाते हैं-श्री देवेन्द्र सत्यार्थी (आजकल अप्रैल १९५४)

दादरौ

निबुआ बेइमान जरसें कटाय डारौ निबुआ।
निबुआ गोड़न धन गई तीं,
गोड़न धन गई तीं।
काँटौ लगौ गोरे हात,
जर सें कटाय डारौ निबुआ।
निबुआ सींचन धन गई तीं,
सींचन धन गई तीं।
काटौ लगौ गोरे हात।
निवुआ दगावाज़ जर सें कटाय डारौ।
निबुआ टोरेन धन गई तीं,
टोरन धन गई तीं।
काँटौ लगो गोरे हात,
जर सें कटाय डारौ निबुआ।

अन्योक्ति के रूप में भी इसका अर्थ निकाला जा सकता है।

बुन्देलखण्ड के प्रसिद्ध लोक-कवि ईसुरी को बाग लगाने का बहुत शौक़ था, ऐसा कहा जाता है। उनका बाग-विषयक यह फाग बहुत प्रसिद्ध है—

"जौ तन बाग बलम कौ नीकौ,
सींचौ सुहाग असी कौ।
श्रीफल फरे धरे चोली में,
मदरस चुअत लली कौ।
लेत पराग अधर कौ मधुकर,
विकसी कमल कली कौ।
ईसुर कात बचाये रहियौ,
छुए न छैल गली कौ।

वृक्ष-पत्र का संबंध एक दूसरे के सौन्दर्य का परिपोषक है। इसके माध्यम से लोक-कवियों ने सरस अनुभूतियों का यथावसर प्रदर्शन किया है—

बाग चिरैयन बिन सूने हैं,
ठाकुर बिन सूनी चौपार।
बिना पत्र के तरुवर सूनें,
सूनी सूर बिना है नार।
रैन तौ सूनी है चंदा बिन,
सूनें कमल बिना हैं ताल।
इकले ऊदल के जियरा विन,
सूखी भुम्मि चंदेलन क्यार।

—आल्हा

फूल के समान सलोनी युवती फूलों के सहारे ही तो अपनी मनोगत भावनाओं का प्रकाश करती रहती है। बुन्देलखण्ड की एक गोरी खेत काटती हुई गा रही है—

ऊँचौ सौ सेमर डगमगै,
फूलो है लाल गुलाब।
सेंमर फूल बिसूरियो,
मेरौ जनम अकारथ जाय।
ना फूल चढ़ै देवी देवता,
ना फूल राउरै जाएँ।
कौन बरन वाकी बोंड़िया,
कौन करन फूल होंय।
हरदी बरन वाकी बोंड़िया,
कुसुम बरन फूल होंय,
पैलो फूल घर टोरियो,
लोटा भरौ रंग होय।
दूजौ फूल घर टोरियो,
गगरी भरौ रंग होय।
तीजों फूल घर टोरियो,

मोंना भरौ रंग होय।

एक बुन्देली बाला अनार के पेड़ से पूछती है—

"अनार तुम क्यों सूख गये हो ?" क्या क्वांर में वर्षा नहीं हुई, इसीलिए तुम सूख गये ?" अनार का वृक्ष कहता है—"मेरी सहेली अपनी ससुराल चली गयी है, उसके ही वियोग से मैं आषाढ़ में सूख गया हूँ।"

लोकोक्तियों में पादप-पुष्प

"अक्का कोदौ नीम बन,
अम्मा मौरी धान ।
जो पलास फूलै नहीं,
वर्षा नहीं निदान ।"

खेती करनेवालों का कहना है कि अकौआ के फूलने पर कोदों की फसल अच्छी होती है। इसी प्रकार नीम के फूलने पर वन की उपज पर्याप्त होती है। पलाश यदि नहीं फूलता तो वर्षा की कमी से कृषक-वर्ग व्याकुल हो उठता है।
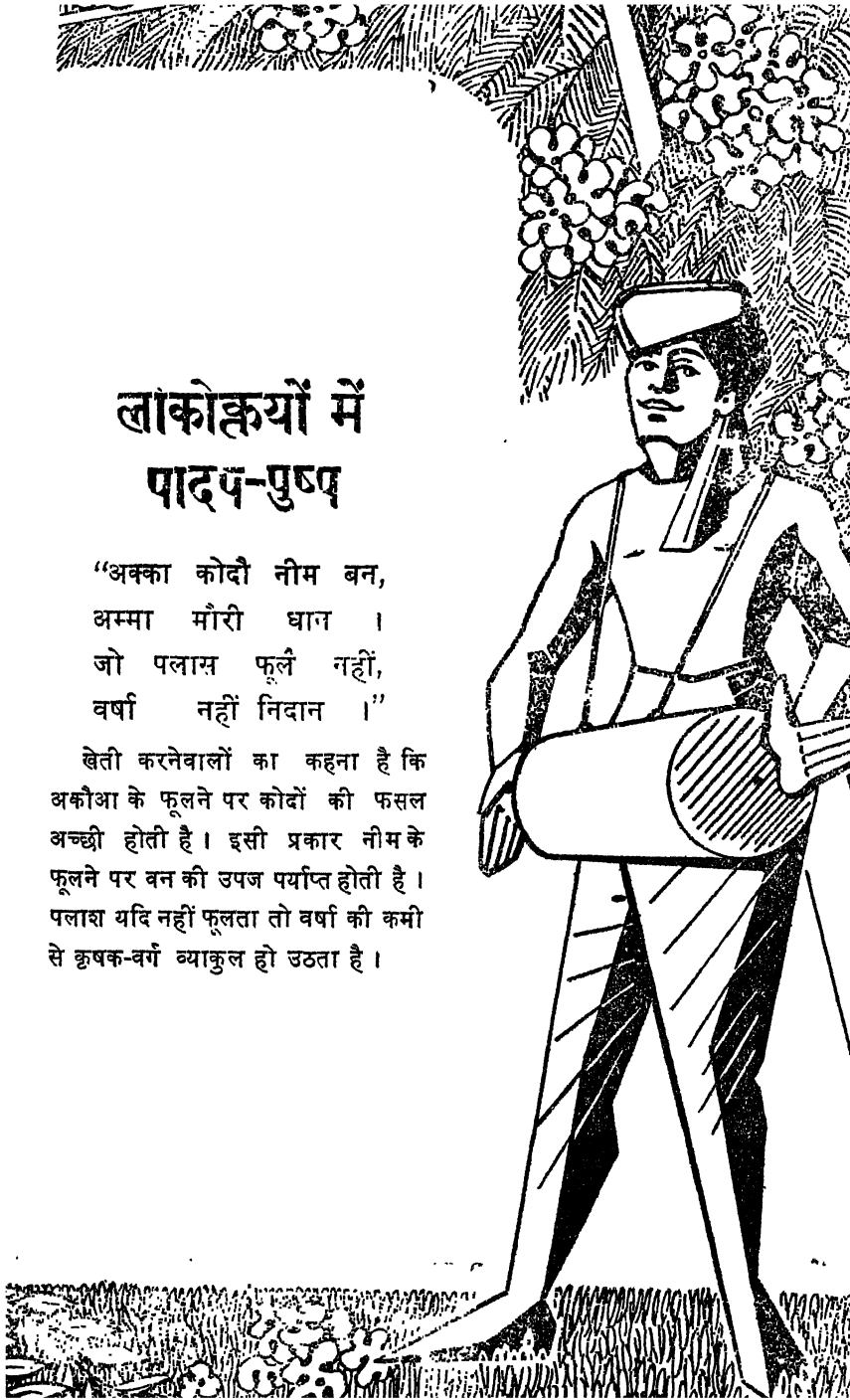
लोकोक्तियों का महत्त्व

लोकोक्ति एक सूत्र है, जिसमें संसार के परिपक्व अनुभवों को प्रकट किया जाता है। इस विशाल संसार में रहता हुआ मानव अपने और पराये जीवन के द्वारा सुख-दुख, उत्थान-पतन, पाप-पुण्य, नीति-अनीति, सत्य-असत्य, मानवता-दानवता, आदि के अनुभव प्राप्त करता रहता है, जिनका वह संक्षिप्त रूप में अपने दैनिक व्यवहार में प्रयोग करता और अपने जीवन को सतर्कता के साथ मिलाता है।

लोकोक्ति के रूप में प्राप्त एक प्रबुद्ध मानव के विचार अन्य जन-समुदाय के लिए पथ-प्रदर्शक बनते हैं। इसीलिए लोकोक्ति का महत्त्व शास्त्र-वचनों से कम नहीं है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि संसार एक बिन्दु के रूप में स्थित है। कोई ऐसा विषय नहीं, जो लोकोक्ति में समाहित न हो सका हो। धर्म-कर्म, नीति-विज्ञान, आचार-विचार, न्याय-दर्शन आदि समस्त विचार-धाराओं के साथ लोकोक्ति जीवित है। विषय की विशालता होते हुए भी प्रकटीकरण का माध्यम संक्षिप्त है। कुछ विद्वानों के मतानुसार संक्षिप्तता, सारगर्भिता और सजीवता कहावत के प्रमुख तत्त्व हैं। लोकोक्ति-शास्त्र, ग्रामीण जनता का नीति-शास्त्र है। सांसारिक व्यवहार-पटुता और सामान्य बुद्धि का जैसा निदर्शन कहावतों में मिलता है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है।[1]

कहावत में सूत्र-प्रणाली होती है। भाव की मार्मिकता घनीभूत रहती है। इसमें लघु प्रयत्न से विस्तृत अर्थ व्यक्त करने की प्रवृत्ति रहती है।[2]

लोकोक्ति शास्त्र ने पृथ्वी-आकाश के समस्त पदार्थों को अपनाया है। जड़-चेतना, दोनों इसके विषय हैं। इनके माध्यम से एक अलौकिक सत्य का उद्घाटन करके यह शास्त्र बड़ा लोक-प्रिय होगया है।

यहाँ केवल वृक्ष, पुष्प, पल्लव, एवं फल से संबंध रखनेवाली लोकोक्तियों पर विचार करने का प्रयास किया जाता है। कहावतों से हमें अन्योक्ति अलंकार का

---

१. राजस्थानी कहावतें—डॉ० कन्हैयालाल सहल।

२. लोकोक्ति-साहित्य की पूर्व पीठिका—डॉ० सत्येन्द्र

अनेक बार स्मरण हो आता है। लोकोक्ति के वाच्यार्थ की अपेक्षा ध्वन्यर्थ विशेष प्रभावकारी होता है। यह कहना भी अनुचित न होगा किहावत का वाच्यार्थ विशेष महत्त्व नहीं रखता है, हमें तो शब्दों के सहारे उस गहन सत्य की अनुभूति करना है जो हमारे जीवन के लिए परमावश्यक है।

अपने जीवन में महान् बनने वाले पुरुष के सुन्दर लक्षण बचपन में ही दिखाई पड़ने लगते हैं, इस सिद्धान्त को चित्रित करने के लिए एक प्रसिद्ध कहावत है—

होनहार बिरवान के होत चीकने पात।

\+ + +

संसार में माया के प्रभाव से कोई नहीं बच सकता। इसकी सत्ता सार्वभौमिक है। इसलिए इसका प्रभाव भी व्यापक है। इस संबंध में एक लोकोक्ति इस प्रकार है—

"वह कौन पेड़ है जिसे हवा नहीं लगी।"

कहा जाता है कि महापुरुष कष्ट देनेवाले तथा अपने विनाशक की भलाई करते हैं। इस तथ्य का निरूपण इस कहावत में हुआ है—

"पेड़ अपने काटने वाले को भी छाया देता है।"

अशिक्षित लोगों में अक्षर मात्र जानने वाले पुरुष को पंडित माना जाता है। इस कथन का समर्थन यह कहावत करती है—

"जहाँ रूख न बिरूख वहाँ रेंड़ै पुनीत।"[१]

निम्नस्थ लोकोक्तियाँ ऐसी हैं, जिनमें वृक्ष का उल्लेख हुआ है :—

१. पेड़ अपनौ फल नइ खात।
२. सूखे पेड़ भी बसन्त में हरे हो जाते हैं।
३. पेड़ दूसरों के हीं लिए फूलते-फलते हैं।
४. नीम न मीठी होय, चहै सींचो गुड़ घी से।
५. जो तरु पतरो होय, एक दिन धोखा दै है।
६. काँटा बुरा करील का औ बदरी का घाम।
७. बड़े भये तो का भये, जैसे पेड़ खजूर।
   पंछी को छाया नहीं, फल लागै अति दूर।

---

१ निरस्तपादपे देशे एरण्डोऽपि द्रुमायते।—(संस्कृत-लोकोक्ति)

८. रोपै पेड़ बबूर को, आम कहाँ ते होय ।

९. एक तो करेला, दूसरे नीम चढ़ा ।

१०. कैसें निबहैं केर बेर कौ संग ? (केले और बेर के पेड़ का साथ कैसे निभ सकता है)

११. एक न एक दिन पेड़ गिरता ही है ।

१२. बड़ेई रूख पै गाज गिरत ।
(बड़े वृक्ष पर ही बिजली गिरती है ।)

१३. फलदार वृक्ष के पास सब आते हैं ।

१४. पेड़ सूखा और पक्षी भागे ।

१५. पेड़ गिर जाने पर छाया भी चली जाती है ।

१६. ऊँचे पेड़ जल्दी गिरते हैं ।

१७. छोटे पेड़ बहुत समय तक खड़े रहते हैं ।

१८. पत्थर मारने पर भी पेड़ फल देता है ।

१९. फलों के पक जाने पर ही पेड़ को हिलाओ ।

२०. अच्छे पेड़ों को सब सताते हैं ।

२१. सीधे पेड़ों की जड़ें टेढ़ी होती हैं ,

२२. पेड़ की पहचान छिलके से न करो ।

२३. पौधा ही तो एक दिन पेड़ हो जाता है ।

२४. त्याग करने से ही तो पेड़ पूजा जाता है ।*

२५. कर्महीन कलपत रहै कल्पवृक्ष की छाँह ।
(अभोग को कल्प वृक्ष के नीचे भी शान्ति नहीं मिलती ।)

२६. वृक्ष दूसरों को छाया देते हैं और आप धूप में तपते हैं ।

२७. नीम का पेड़ सब रोगों को दूर करता है ।

२८. जैसा वृक्ष वैसा फल ।
(यथा वृक्षम् तथा फलम्)

२९. पौधा मुड़ जाता है, पेड़ नहीं मुड़ता ।

३०. कदम्ब की फली सहसा फ़ूट पड़ती है ।

३१. केले का पेड़ एक ही बार फल देता है ।

---

*त्यागाज्जगति पूज्यन्ते पशुपाषाणपादपाः । (संस्कृत-लौकिक्त)

३२. एक डाली में दो फूल ।
३३. वृक्ष के हिलने से उसकी सब शाखाएँ हिल उठती हैं ।
३४. समय पर आम को इमली कहना पड़ता है ।

+ + +

पल्लव, पुष्प एवं फल वृक्ष के मुख्य अंग हैं । इन्हीं से पादप की शोभा और उपयोगिता है । निम्नलिखित लोकोक्तियों में पेड़ के इन्हीं अंगों के उल्लेख से अनुभवी विद्वानों ने यथार्थवाद तथा आदर्शवाद के सर्वमान्य सिद्धान्तों को समझाया है ।

किसी धूर्त की चालाकी को अच्छी तरह से समझनेवाला कह बैठता है—

"तुम डार-डार हम पात-पात ।"

चतुर पुरुष की बातों से नयी बातें निकलती हैं । उनका कथन अनुभव से परिपूर्ण होने से अपरिमित भावों से भरा रहता है, जिससे अनेक तथ्यों का स्पष्टीकरण होता है । इसी आशय को लोकोक्ति में यों कहा गया है—

"ज्यों केला के पात में पात-पात में पात ।
त्यों चतुरन की बात में, बात-बात में बात ।"

परिवर्तनशीलता बनाने के लिए कहा जाता है कि--

१—हरा पत्ता भी एक दिनपीला पड़ जाता है ।
२—फूल को भी एक दिन सूखना है ।
३—सरस पेड़ भी नीरस बन जाता है ।

एक बार हाथ से गया अवसर फिर नहीं मिलता । इसलिए मनुष्य को प्राप्त संयोग का पूरा उपयोग करना चाहिए । लोकोक्ति में इस विचार को यों व्यक्त किया गया है—

"एक बार गिरा पात (पत्ता) फिर नहीं लगता ।"

ऐसी बहुत सी कहावतें प्रचलित हैं, जिनमें पुष्पों का उल्लेख है । इनमें प्रसून (फूल) विविध भावों के प्रतीक रूप में आया है । ऐसा कौन सहृदय होगा जो चमेली के फूल को हाथ से मसले ? मानव कदापि कठोर कार्य नहीं कर सकता । इस पर यह कहावत है—

मल्लिका के फूल को कौन हाथ से मसलता है ?

प्रत्येक मनुष्य का स्वभाव अपनी विशेषता रखता है । इस विषय में यह लौकोक्ति है —

प्रत्येक पुष्प की सुगंध अलग होती है। (Every flower has its perfume.)

इन कहावतों में फूल के माध्यम से निरूपित भावनाओं पर विचार कीजिए--

१. कली ही तो फूल बनती है।
२. वह गुल ही क्या जिसमें खुशबू न हो।
३. कागज के फूल पर कौन रीझता है?
४. फूल को देखो, उसे छुओ मत।
५. फूल सौन्दर्य का प्रतीक है।
६. फूलों पर ही तो भौंरे मँडराते हैं।
७. जंगल में खिलने वाले फूलों का उपयोगी ही क्या?
८. फूल के साथ कीड़ा भी प्रभु-मस्तक पर चढ़ जाता है।
(कीटोऽपि सुमनः संगादारोहति सत्यं शिरः।)
९. कुछ फूल खिलने के पहले ही मुरझा जाते हैं।
१०. चित्र के फूलों में सुगंध नहीं होती।
११. कली की अपेक्षा फूल में अधिक सुगंध होती है।
१२. एक बार मुरझाया हुआ फूल फिर नहीं खिलता।
१३. गूलर का फूल किसने देखा है?
१४. फूल फल का संकेत करते हैं।
१५. ताजे फूल की महक को कौन भूल सकता है?
१६. फूलों से ही बाग़ की शोभा है।
१७. बुलबुल की आशनाई गुल से ही है।
१८. गुलों से खार बेहतर है,
जो दामन थाम लेते हैं।
१९. डाली पर झूमता हुआ फूल किसको नहीं लुभाता?
२०. एक फूल से माला नहीं बनती।
२१. जवानी गुलाब का फूल है।
२२. फूलों पर सोने वाला, काँटों को क्या जाने।
२३. गुलाब का फूल काँटों में खिलता है।
२४. सुन्दरतम गुलाब का फूल एक दिन मुरझाता ही है।
२५. सिरस का फ़ूल हीरे को नहीं छेद सकता।

फलयुक्त वृक्ष ही पूजित होता है। फलों को न देने वाला पादप कुल्हाड़ी की चोटों को खाकर शीघ्र ही भूमि पर गिर पड़ता है। मानव फल की ही आशा से पेड़ लगाता है, इसलिए पेड़ की सार्थकता फल पर ही आधारित है। सरस फल को पाकर भगवान् प्रसन्न होते हैं और भक्त को भक्ति का फल देते हैं। फलों की सुन्दर डालियों को पेश करके नौकर अपने कठोर मालिक को प्रसन्न कर लेता है। फल का कोई भाग निरर्थक नहीं होता, तभी तो लोग कहते हैं—

"आम का रस भी मीठा होता है और गुठली भी उपयोगी।"

"आम के आम, गुठलियों के दाम।"

एक वस्तु के जब अनेक चाहने वाले होते हैं तब इस कहावत को प्रयोग किया जाता है—

"एक अनार सौ बीमार।"

आय से अधिक व्यय जब होने लगता है तब भी इस लोकोक्ति को कहते हुए सुना जाता है।

महँगी में गेहूँ दाख के समान लगता है—

"चना चिरौंजी होगए, गोहूँ होगए दाख।"

भूख में गूलर भी पकवान की भाँति रुचिकर होता है—

"भूख में गुलर ही पकवान।"

जब प्राप्त आय दूसरे काम में लग जाती है तब हम कह उठते हैं—

आमों की कमाई, नीबुओं में गँवाई।

स्वभाव की अपरिवर्तनशीलता प्रमाणित करने के लिए संस्कृत की लोकोक्ति विशेषप्रसिद्ध है:—

'फलं कनकवृक्षस्य नित्यं अम्बु प्रसादकम्।'

कनक (धतूरे) के वृक्ष का फल पानी को हमेशा साफ करता है।

बुरे काम का परिणाम शुभ नहीं होता बबूल के पेड़ से आमों की आशा कैसे की जा सकती है—

"रोपै पेड़ बबूर का, आम कहाँते होय।"

निषिद्ध कार्य करने के लिए उत्कट लालसा देखी गयी है। बार-बार रोकने पर भी मानव उसे करने के लिए उतावला होने लगता है। इस संबंध में अंग्रेजी की यह कहावत दुहरायी जाती है—

Forbidden fruit is sweetest.

(निषिद्ध फल सबसे अधिक मीठा होता है।)

फल प्राप्ति के लिए कष्ट-साधना आवश्यक है—

फल पाने के लिए पेड़ पर चढ़ना ही पड़ता है। अंगूर और लोमड़ी की कहानी प्रसिद्ध ही है। जब कोई वस्तु प्रयास करने पर भी प्राप्त नहीं होती तब अपनी झेंप मिटाने के लिए प्रयत्नशील व्यक्ति वस्तु की निंदा करने लगता है। इसीलिए कहावत मशहूर होगयी है—

लोमड़ी को अंगूर खट्टे।

कई बार उछल-कूद करने पर जब लोमड़ी एक भी अंगूर न पा सकी तब उसने कहना शुरू कर दिया कि अंगूर खट्टे हैं।

—ooo—

सुन्दरता और योग्यता का संयोग बड़े भाग्य से ही मिलता है। योग्य पुरुष कुरूप होते हैं और सुंदरता में योग्यता नहीं देखी जाती। चाणक्य बड़ा बुद्धिमान और विद्वान था, लेकिन देखने में वह कुरूप था। कहा जाता है कि प्रेम की साकार प्रतिमा लैला काली थी। रंभा (स्वर्ग की अप्सरा) अत्यन्त रूपवती कही जाती है, परन्तु बड़ी मयाविनी है। अतः पके हुए आम की लोकोक्ति प्रचलित है कि परिपक्व आम सुन्दर और मीठा भी होता है। सौंदर्य तथा माधुर्य के समन्वय को देखकर पीतवर्ण वाले रसाल 'आम' की अनुभूति होने लगती है।

बाहर से मनोहर ओर भीतर से निकम्मे व्यक्ति की तुलना में बिम्बाफल (कुँदरू) प्रसिद्ध है। प्रायः ऐसे सूरत हराम मनुष्यों के लिए कहा जाता है कि ये तो विम्बाफल हैं, इनसे दूर रहने में ही भलाई है। सत्पुरुष बाहर से कठोर और हृदय के कोमल हुआ करते हैं। अनुशासन प्रिय अधिकारी कठोरता दिखाते हुए भी दयालु होते हैं। इनके संबंध में नारियल को लेकर एक संस्कृत लोकोक्ति निर्मित हुई है:—

नारिकेल समाकारा दृश्यन्ते हि सुहृद्ज्जनाः।

—नारियल के सदृश्य सत्पुरुष देखे जाते हैं।

व्यक्ति-स्वभाव के प्रदर्शन में कतिपय फूलों को लेकर कहावतों का निर्माण हुआ है—बनिये की टेंट से पैसे बड़ी कठिनता से निकलते हैं। इस लक्ष्मी-पुत्र से प्राप्ति होना सरल नहीं है। कहा जाता है कि वैश्य का सिद्धान्त है कि चमड़ी जाय, पर दमड़ी न जाय। हाँ, फँस जाने पर बनिया थैली का मुँह खोल देता है—"दबौ बनिया देय उधार।" एक कहावत में बताया गया है कि गला दबाने पर ही आम, नींबू और बनिया रस देते हैं—

अम्बा, नींबू, बनिया, गर दाबे रस देंय।
कायथ, कौवा, करहटा, मुर्दा हू सों लेंय।

बाइबिल में कहा गया है कि सेब (एक फल) के माध्यम से ही संसार में तमाम पाप आये हैं—

All the evil in the world brought in by means of an apple.

निम्नलिखित कहावतों के अन्तरतम भावों को फलों के साथ समझिए—

१. सेब के खाने से डाक्टर घर में नहीं आता।
२. अच्छे सेब के लिए देवता भी तरसते हैं।
३. सेब का समर्पण सदैव लाभ-प्रद होता है।
४. सेब पेड़ से दूर नहीं गिरता।
५. बुरे पेड़ में अच्छे सेब नहीं लगते।
६. फल खाओ, पेड़ मत गिनो।
७. फल खाओ, पेड़ के बिंषय में मत पूछो।
८. फल डंठल से दूर नहीं रहता।
९. फल छाया में नहीं पकता।
१०. फल दूसरों के लिए पकता है।
११. वृक्ष के अनुरूप फल होता है।
१२. कच्चे फल को मत तोड़ो।
१३. फलदार पेड़ पर ही लोग पत्थर फेंकते हैं।
१४. कुऋतु का फल स्वादिष्ट नहीं लगता।
१५. फल की प्राप्ति के लिए प्रतीक्षा करो।
१६. कभी न पकने वाला फल तिरस्कृत होता है।

१७. आम पाने के लिए नीम के पास मत जाओ :
१८. पेड़ लगाने वाला फल नहीं पाता ।
१९. मीठे फल को कीड़े खाते हैं ।
२०. फल देकर पेड़ अमर होता है ।
२१. फल को खाकर पेड़ की बुराई मत करो ।
२२. दाई के बेर, सवा सेर ।
२३. पेड़ लगाकर ही फल की आशा करो ।
२४. फल सूखे पेड़ पर नहीं लगते ।
२५. फल लगने पर दरख्त झुक जाता है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि लोकोक्तियाँ वृक्ष, पुष्प एवं फल के माध्यम से बड़ी सरस बन गयीं हैं, और इनका अर्थ-गाम्भीर्य भी बढ़ गया है। पादपों का मूल्य लोक-जीवन में अत्यधिक है ।

ये वृक्ष अपने पत्तों से पशु-पक्षियों की भूख मिटाते हैं, पुष्पों से रसिकों के मन आनन्दित करते रहते हैं। और फूलों से तमाम सृष्टि में नव-जीवन लाते हैं। इनकी पत्तियों से सुन्दर खाद बनती है, जो कृषि के लिए विशेष लाभदायक सिद्ध हुई है× । नीम का तेल कीट-नाशक है। महुआ हमारे देश का कल्प वृक्ष है। दीन-दुनिया में इसका विशेष सम्मान है। अन्न के अभाव में महुआ ही उदर-पूर्ति का प्रमुख साधन माना गया है। .

डाक्टर रघुनाथ सिंह लिखते हैं – "यों तो महुए का प्रत्येक अंग उपयोगी है पर सबसे अधिक उपयोगी अंग इसके फूल और फल फूलों का नाम महुआ और फलोंहैं का नाम गुलौंदा है फूल इधिया बादामी रंग के होते हैं और वृक्ष पर बड़े बड़े गुच्छों में लगते हैं।......

सूखे फूलों को गाँवों में लोग कई प्रकार से खाते हैं—

(१) लटा—सूखे फूलों को भून कर कूट कर उन में निल्ली या चिरोंजी मिला कर लड्डू बनाते है।

×पत्ती की खाद ।

घन बरसात
गोबर मैला नीम की खली ।
या से खेती दूनी फली ।।

(२) मुरब्बा—सूखे फलों को भून कर तिल्ली मिला कर कूटकर खाते हैं।

(३) हूबड़ी—महुआ को पानी में भिगो देते हैं और फिर उबाल कर उसका रस निचोड़ लेते हैं। इस रस में चावल डालकर खीर की तरह पकाते हैं और सोंठ, नमक, जीरा डालकर खाते हैं।

संस्कृत में महुए (वृक्ष) के नाम इस प्रकार हैं—

१ मधूक, २ मधुवृक्ष, ३ मधुष्ठील, ४ मधुस्रवा, ५ गुड़-पुष्प, ६ रोंध्र-पुष्प, ७ वानप्रस्थ, ८ माधव, ९ मध्वग, १० तीक्ष्ण सार ११ डोला फल और १२ महाद्रुम।

इस पृथ्वी पर कोई भी वृक्ष ऐसा नहीं जो उपयोगी न हो, इसका प्रत्येक भाग जन-जीवन के लिए महत्त्वपूर्ण है। इसलिए यह हमारे लिए सदैव पूज्य है। लोक जीवन से पादप का इतना अधिक तादात्म्य होगया है कि इसे हम कदापि नहीं भूल सकते। इसकी आराधना चिरकाल से होती आरही है मोहंजोदड़ों के खँडहरों की खोज करने से जो मूर्तियाँ और ठप्पे आदि मिले हैं, उनकी जाँच-पड़ताल करने से पता चला है कि उन दिनों पश्चिमी पंजाब, सिंध और बिलोचिस्तान प्रान्तों के निवासी मूर्ति-पूजन करने के अतिरिक्त पेड़-पौधों तथा जीव-जन्तुओं की भी अर्चा करते थे। पाली साहित्य में वृक्षों को पूजने की प्रथा का निरन्तर उल्लेख हुआ है। कई बार कहा गया है कि बोधिसत्व ने रुक्ख देवता बनकर जन्म लिया था। व्यापार करने के लिए परदेश जाने के पहले एक बनिये ने पेड़ के अधिष्ठाता देवता को मानने के लिए पशु-वलि चढ़ाई थी। श्रीवस्तु में आनन्द के लगाये हुए एक पेड़ को पूजने के लिए बहुत से देहाती भिक्खु दल-बद्ध होकर वहाँ पहुँचे। बुद्ध भगवान् ने उनकी करनी की निन्दा नहीं की। जातक ग्रन्थों का कहना है कि लोग अधिकतर बरगद के पेड़ को पवित्र मानते थे। इस प्रसंग में आम और ढाक या पलास के पेड़ों का भी उल्लेख हुआ है।

रामायण में पूजने के योग्य वृक्षों का नाम चैत्य दिया गया है। इनके तने के चारों ओर चबूतरे होते थे तथा इनकी बगल में झंडे फहराये जाते थे। रामचन्द्र के प्रस्तावित राज्याभिषेक के अवसर पर इन की सजावट की गयी थी। राही इनकी परिक्रमा कर प्रणाम करते थे। महाभारत में यद्यपि चैत्य वृक्ष पवित्र माने गये हैं, तथापि युद्ध छिड़ ने पर उन्हें काट डालने का निर्देश दिया गया है। श्री कृष्ण, भीम और अर्जुन ने गिरिव्रज के निकट लोक-मान्य एक चैत्य वृक्ष के घेरे पर चढ़ाई कर दी थी। मनु ने स्नातकों को निर्देश दिया है कि मार्ग के बगल में

स्थिरा नामी वृक्षों की प्रदक्षिणा करते हुए वे चलें। स्कन्दपुरण में पीपल के पेड़ को पूजने का विस्तृत विधान दिया गया है। इसके अतिरिक्त पलाश या ढाक, तुलसी, बेल, बरगद आदि पेड़ों के पूजने का भी विधान पाया जाता है।*

हमारी लोकोक्तियों में वर्णित वृक्षों का स्वरूप उनके धार्मिक सामाजिक एवं राजनीतिक तथ्यों को स्पष्ट करता है।

---

*'हमारे कुछ प्राचीन लोकोत्सव' लेखक श्री मन्मथराय, पृष्ठ १४५-१४६।

प्रहेलिकाओं (पहेलियों) में पादप पुष्प

'राधे यह छवि उलटि गई।
सारँग ऊपर सुन्दर कदली, तापर
सिंह ठई।
ता ऊपर द्वै हाटक बरणी,
मोहन कुंभ मई।
ता पर कमल, कमल बिच विद्रुम,
तापर कीर लई।
ता ऊपर द्वै मीन चपल हैं,
सहँरति साध रही।
सूरदास प्रभु देखि अचम्भव
कहत न परत सही।

—सूरदास का दृष्टि कूट

सखी की उक्ति नायका सों। हे राधे यह छबि उलटिगई है। सारंग कमल, तापर कदली, (कमल = चरण, कदली = जंघा) तापर (कटि = सिंह तापर द्वै हाटक के कुंभकुच) तापर कमल मुख, ताके बीच में विद्रुम (अधर) ताके ऊपर कीर (नासिका) ताके ऊपर द्वै मीन (नैन) ताके सुमिरन में लालसा नाहीं पूर्ण होत। ऐसो अचंभो देखि कही नहीं जाइ है।

[टीकाकार श्री सरदार कवि]
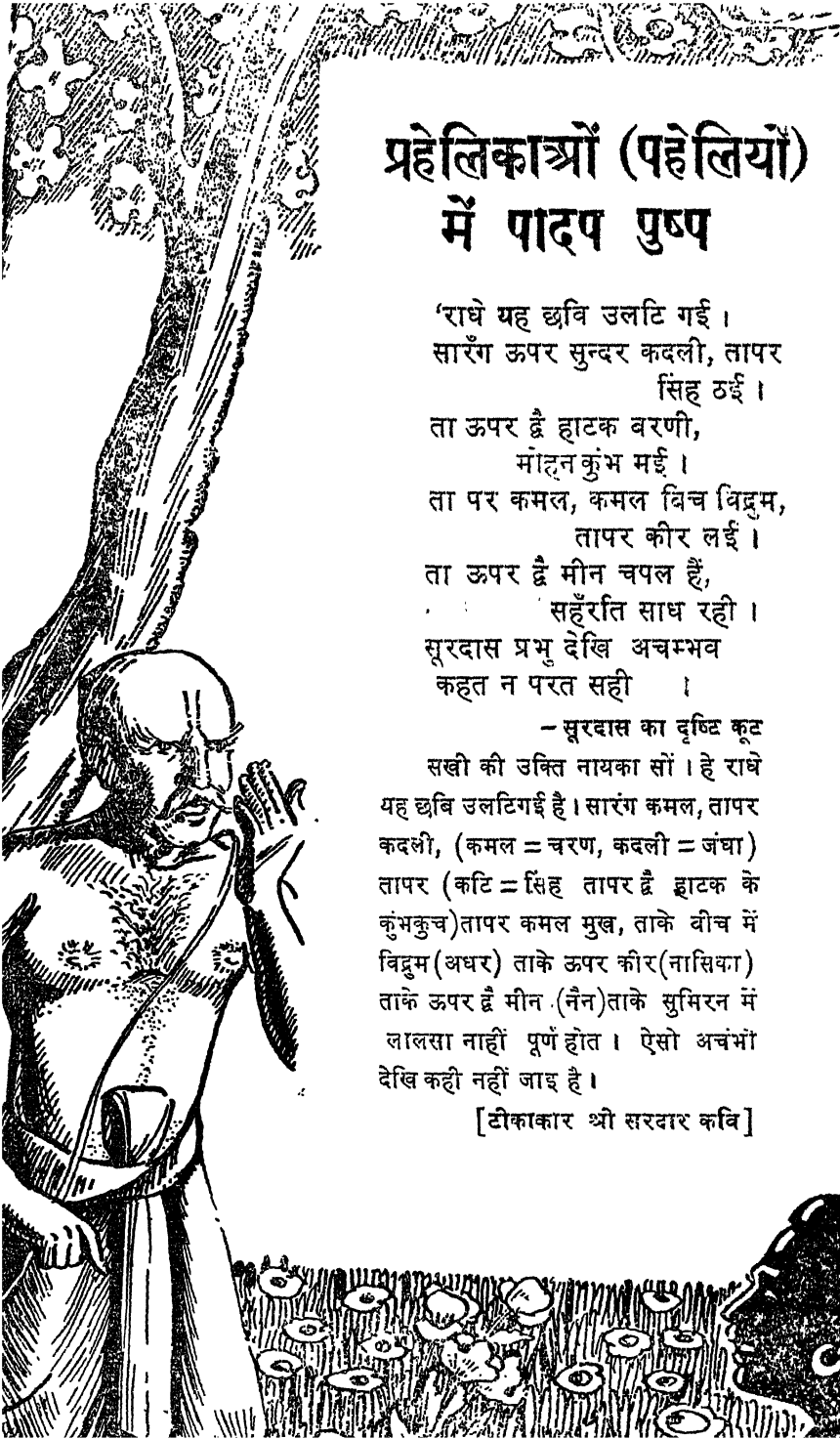
प्रहेलिका

प्रहेलिका-साहित्य अति प्राचीन है। इसके चिह्न वैदिक साहित्य में भी प्राप्त हो सकते हैं। प्रहेलिका के माध्यम से बौद्धिक चातुर्य का प्रकटीकरण किया जाता है। मानव का स्वभाव है कि बिलक्षण बातों के कहने और सुनने में उसका मन खूब रमता है। कुछ विद्वानों का कथन है कि जब कोई अपने हृद्-गत भावों को सब के आगे नहीं रखना चाहता तब वह एक अस्वाभाविक ढंग से उन्हें प्रकट करता है। इसी प्रणाली को हमने प्रहेलिया का रूप दे दिया है। कबीरदास तथा अन्य संत कवियों की उलटवाँसियाँ (उलटी चर्चा), सूरदास के कूट पद एवं हिन्दी कवियों के श्लेषात्मक कथन प्रहेलिका-साहित्य के ही अंश माने जाते हैं। प्राचीन काल में प्रहेलिका या पहेली मनोबिनोद का एक प्रमुख साधन थी। आज भी ग्रामों में रहने वाले भारतीय अवकाश मिलने पर पहेलियाँ कहकर अपने थके हुए शरीर की साँसों को आनंदमय बनाते रहते हैं। पहेलियाँ निस्सार नहीं हैं। इन्हें उपेक्षा की दृष्टि से देखना भी अनुचित है। काव्य के कला-पक्ष को महत्त्व देने वाले विद्वानों ने प्रहेलिका को भी साहित्यिक सौन्दर्य के अन्तर्गत स्थान दिया है। शाब्दिक सुन्दरता के साथ-साथ आन्तरिक रोचकता प्रहेलिका में द्रष्टव्य है। इसका भाव-पक्ष भी कम ललित नहीं है। भावों की शोभनता पर रीझने वाले रसिकों ने पहेलियों को कई दृष्टियों से स्पृहणीय समझा है। वक्रोक्ति, श्लेष, विरोधाभास, असंगति, विभावना, आदि कतिपय अर्थालंकारों पर विचार करने वाले साहित्य-मनीषियों ने प्रहेलिका-साहित्य की गरिमा को स्वीकार किया है।

"पहेली को संस्कृत में प्रहेलिका कहते हैं। 'साहित्य-दर्पण' के प्रणेता विश्वनाथ रस-विरोधी होने के कारण प्रहेलिका को अलंकार नहीं मानते; किन्तु उसके वैचित्र्य को स्वीकार करते हुए आपने 'च्युताक्षरा,' 'दत्ताक्षरा' तथा च्युत दत्ताक्षरा, उसके इन तीनों भेदों की चर्चा की है। आचार्य दंडी ने साहित्य दर्पणकार के इस मत को स्वीकार करते हुए प्रहेलिका को क्रीड़ा-गोष्ठी तथा अन्य पुरुषों के व्यामोहन के लिए उपयोगी बतलाया है। दंडी ने तो समागता, वंचिता, व्युत्क्रान्ता, प्रमुषिता, समानरूपा, परुषा, संख्याता, प्रकल्पिता, नामांतरिता,

निभृता, समानशब्दा, सम्मूढ़ा, परिहारिका, एकच्छन्ता, उभयच्छन्ता, संकीर्ण,— इसके इन सोलह भेदों का भी उल्लेख किया है।

प्रहेलिका में काव्यशास्त्र की दृष्टि से रस तथा अलंकार का अभाव भले ही हो, किन्तु उक्ति-वैचित्र्य के कारण ये अत्यन्त प्राचीन काल से मानव-जाति के विनोद का उपकरण रही हैं। हिन्दी में अमीर खुसरो की पहेलियाँ बहुत प्रसिद्ध हैं। संस्कृत तथा पाली में भी इनका अभाव नहीं है।'+

डा० सत्येन्द्र ने लोकोक्ति एवं प्रहेलिका के सम्बंध में विचार प्रकट करते हुए लिखा है कि पहेली भी लोकोक्ति है। लोक-मानस इसके द्वारा अर्थ-गौरव की रक्षा करता है और मनोरंजन प्राप्त करता है। यह बुद्धि-परीक्षा का भी साधन है। पहेलियाँ स्वभाव से कहावतों की प्रवृत्ति से विपरीत प्रणाली पर रची जाती हैं, क्योंकि पहेलियों में एक वस्तु के लिए बहुत से शब्द प्रयोग में आते हैं, भाव से इसका संबंध नहीं होता, प्रकृत को गोप्य करने की चेष्टा रहती है, बुद्धि-कौशल पर निर्भर करती हैं।........पहेलियों को संस्कृत में ब्रह्मोदय भी कहा गया है। पहेलियाँ केवल बच्चों के मनोरंजन की वस्तु नहीं होतीं, ये समाज-विशेष की मनोज्ञता को भी प्रकट करती हैं और उसकी रुचि पर प्रकाश डालती हैं। ये बुद्धि-मापक भी हैं और मनोरंजक भी। ये सभ्य और असभ्य सभी कोटि के मनुष्यों और जातियों में प्रचलित हैं। भारतवर्ष में तो वैदिक काल से ही ब्रह्मोदय का चलन मिलता है। अश्वमेध यज्ञ में तो ब्रह्मोदय अनुष्ठान का ही एक भाग था। इन्हें पूछने का केवल इन दो को ही अधिकार था। पहेलियों का आनुष्ठानिक प्रयोग भारत में ही नहीं, संसार के अन्य देशों में भी मिलता है। फ़्रेजर महोदय ने बताया है कि पहेलियों की रचना अथवा उदय उस समय हुई होगी, जब कुछ कारणों से वक्ता को स्पष्ट शब्दों में किसी बात को कहने में किसी प्रकार की अड़चन पड़ी होगी। भारत के मूल-निवासियों में से मंडला के गोंड़ और प्रधान तथा बिरहोर जातियों के बिवाह के अनुष्ठानों में पहेली बुझाना भी एक आवश्यक बात मानी गयी है।× इस प्रकार प्रहेलिका-साहित्य की प्राचीनता एवं उपयोगिता कभी नहीं भुलाई जा सकती। पहले संकेत किया जा चुका है कि

+भोजपुरी पहेलियाँ—लेखक श्रीयुत उदयनारायण तिवारी, एम्०ए० (हिंदुस्तानी, अक्टूबर-दिसम्बर १९४२)

×ब्रज-लोक-साहित्य का अध्ययन, पृष्ट ५२०-५२१

कबीर की उलटवाँसी में प्रहेलिका का मूल तत्त्व प्राप्त होता है। निम्नस्थ उलट-वाँसी पर विचार कीजिए। इस में प्रयुक्त पेड़, शाखा, फल, फूल आदि शब्दों का भाव प्रतीकों एवं रूपकों के द्वारा समझा जा सकता है। इस उलटी चर्चा में प्रतीकों का व्यवहार विशेष रूप से हुआ है।

एक अचंभा देखा रे भाई, सिंघ चरावै गाई।
पहले पूत पीछैं भइ माइ, चेला कै गुरु लागै पाइ।
जल की मछली तरवर ब्याई, पकड़ि बिलाई मुरगै खाई।
बैलहि डारि गूँनि घरि आई, कुत्ता कूँ लै गई बिलाई।
तलिवर साषा ऊपरि करि मूल, बहुत भांति जड़ लागै फूल।
कहै कबीर या पद को बूझै, ताकूँ तीन्यू त्रिभुवन सूझै।

इसका अर्थ स्पष्ट करते हुए पूज्य आचार्य परशुरामजी चतुर्वेदी, एम्० ए०, एल-एल० बी० ने लिखा है—क्यों कि आश्चर्य की बात है कि सिंह खड़ा-खड़ा गाय को चरा रहा है (अर्थात स्थिर ज्ञान द्वारा अनुप्राणित वाणी उचित रूप में स्फुरित हुआ करती है)। पुत्र का जन्म हो चुकने पर माता का आविर्भाव हुआ (अर्थात् जीव का शुद्ध रूप माया द्वारा परिच्छिन्न होने के पूर्व विद्यमान था।) चेले के पैरों पर गुरु माथा टेक रहा है। (अर्थात् निर्मल हो गये चित्त के प्रति शब्द स्वयं आकृष्ट होजाता है, अथवा मन स्वयं वशीभूत हो जाता है) जल में रहने वाली मछली ने वृक्ष पर जाकर अंडे दिये (अर्थात् मूलाधार के निकट वर्त्तमान कुंडलिनी मेरुदंड के ऊपर जाकर फलप्रद सिद्ध हुई)।

बिल्ली को पकड़ कर मुर्गे ने खा लिया (अर्थात् ज्ञानोपलब्धि के हो जाने पर मन दुर्नीति को नष्ट करदेता या सर्वथा त्याग देता है)। बैल को बाहर छोड़कर गून स्वयं घर पर लौट आई (अर्थात स्वरूप की सिद्धि हो जाने के पहले से ही शरीर के प्रति उपेक्षा भाव आगया)। कुत्ते को बिल्ली ले भागी (अर्थात् अज्ञानी पुरुष को माया ने बहँका लिया)। शाखा नीचे की ओर होगयी और जड़ ऊपर चली गयी (अर्थात प्राणों के ऊपर की ओर चढ़ाये जाते ही इंद्रियाँ वश में आगयीं अथवा सृष्टि का मूल ऊपर की ओर है और उसका बिस्तार नीचे की ओर है) तथा उसमें अनेक प्रकार के फल-फूल भी लग गये (अर्थात् सुषुम्ना के अन्तर्गत षट् चक्रों का अस्तित्व है)। कबीर का कहना है कि जो इस पद के रहस्य को जानलेता है, उसे त्रिभुवन की सारी बातें स्पष्ट होजाती हैं।

—संत काव्य, पृष्ठ ७५, ७६

आचार्य केशवदास ने अपने महाकाव्य 'रामचन्द्रिका' के दंडक वन वर्णन में श्लेषालंकार के द्वारा जो शब्द चमत्कार दिखाया है, उसमें अनेक वृक्षों के नामों का उल्लेख हुआ है।

'शोभत दंडक की रुचि बनी।
भाँतिन भाँतिन सुन्दर घनी।
सेब बड़े नृप की जनुलसै।
श्रीफल भूरि मनो जहँ बसै।
बेर भयानक सी अति लगै।
अर्क समूह जाँ जग मगै।
नैनन को बहु रूपन ग्रसै।
श्री हरि की जनु मूरति लसै।
पांडव की प्रतिमा सम लेखो।
अर्जुन भीम महा मति देखो।
है सुभगा सम दीपति पूरी।
सिंदुर औ तिलकावलि रूरी।
राजति है यह ज्यों कुल कन्या।
धाइ विराजति है सँग धन्या।
केलि थली जनु श्री गिरिजा की।
शोभ धरे सितकंठ प्रभा की।+

अर्क (मदार), बेर, अर्जुन, भीम एवं धाय—ये वृक्षों के नाम हैं। दूसरा अर्थ भी भावपूर्ण है।

जैन-पुराणों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि परम पूज्य तीर्थंकरों की माताओं के मनोविनोदार्थ देवियाँ प्रहेलिकाएँ पूछा करती थीं और मातायें उत्तर देती थीं। इस प्रकार उन माताओं के गर्भावस्था के दिवस आनन्द के साथ व्यतीत होते थे। इस संबंध में 'श्री वर्द्धमान पुराण' का वह अंश दिया जा रहा है, जिसमें प्रहेलिकाओं का वर्णन है—

+आचार्य केशवदास, लेखक डॉ० हीरालाल दीक्षित पृष्ठ-१६५।

महागुरुन को गुरु है कोय, जोगी त्रय जग जाहिर सोय।
जो अतिशय मंडित चौतीस, गुण अनंत धारै जिन ईस।
वचन प्रमाण कहै को माय, जग सर्वज्ञ कहावै आय।
दोष अठारा रहित शरीर, वीतराग है जो जगहीर।
सुधा सिंधु कहियतु है काहि, जन्म मृत्यु विष दियो बहाहि।
जिनवर मुख बहु ज्ञान प्रकाश, सो अमृत दुर्मत विष नाश।
ध्यायवंत बुध को जगमाँहि, कौन ध्यान परमेष्ठित पाहिं।
सप्त तत्त्व की श्रद्धा करै, धर्म शुक्ल जो ध्यानहि धरै।
तुरतहि करनी करता कौन, पूरब कर्म खिपावै तौन।
जो अनन्त दर्शन अरु ज्ञान, दृढ़ चारित्र धरै पखान।
सहगामी जिय कौ को होय, दया धर्म बाँधव हैं दोय।
पाप महा अरि नासै जोय, सरब दिशा रक्षक है सोय।
धर्म होय क्यों या जग माँहि, दर्शन ज्ञान चरित्र धराहिं।
व्रत अरु शील सर्व आदरै, उत्तम क्षमा आदि दस धरै।
धर्म तनो, फल लोक मँझार, होय विभूति इन्द्र पद सार।
ये सुख लहि तीर्थंकर होय, फिर शिवपुर को पहुँचे सोय।
कहो पाप को कहा प्रमान, पंचमिथ्यात्व दुःख की खान।
क्रोध आदि षोडश जु कषाय, षट् अनायतन सदा धराय।
पाप वृक्ष फल कहिये माय, दुख कारण दुर्गति ले जाय।
राग कलेस अधिक तहँ सहै, निंद्य होय भव भव में वहै।
पापी लक्षण कैसो होय, तीव्र कषाय धरै नर जोय।
पर-निन्दा को करता रहै, आरत रौद्र ध्यान संग्रहै।
को विवेक है जग में श्रेष्ठ, देह वस्तु जानै सु अनिष्ट।
देव शास्त्र गुरु नमे न और, जैन धर्म पालै दशधाहि।

---प्रहेलिका वर्णन---श्री वर्द्धमान पुराण कविरत्न श्री नवलशाह जी विरचित, पृष्ठ ११३-११४।

पहेलियों की संख्या निश्चित नहीं की जा सकती। वे गगन की तारिकाओं के समान अनन्त हैं। उनके रूप अनेक हैं और विषय भी विभिन्न हैं। पृथ्वी

तल का कोई ऐसा विषय नहीं, जिसके संबंध में प्रहेलिका प्राप्त न हो सके। चर-अचर, प्रत्यक्ष-परोक्ष, स्थूल-सूक्ष्म, लघु-महान् आदि सब प्रहेलिका की परिधि के भीतर हैं। यहाँ मैं केवल उन कतिपय पहेलियों का उल्लेख करूँगा, जो विभिन्न वृक्षों, पुष्पों एवं फलों से संबंधित हैं—

(१)

अपट का बिरवा चपट फरा।
सवान करहा, चैत फरा॥

—बबूल का पेड़

(२)

अगर कगर से बारी रूँधी, बीच मा फुलवारी।
राम का झुमका झरिगा, दुलहिनि है बलिहारी।

—आम का बौर

(३)

अत्थर पर पत्थर, पत्थर पर जंजाल।
मोर किहानी कोई न जाने, जाने भइया लाल।

—नारियल

(४)

अन काटौं बन काटौं, बन मां बाँधौं बोझा।
हाथी के घुन घुनिया बाँधौं छिटिक परे हैं राजा।

—अरहर का पौधा

(५)

अत्ताल गये थूनी, पत्ताल गये जर[1]
ओखे लम्बे लम्बे पत्ते, लाल लाल फर[2]।

—खजूर का पेड़

(६)

एक पेड़ ठामक ठुमुक, पात है बंगाला।
खात माँ गुड़ सक्कर लागै, जाने मीठ गोपाला।

—केला

---

१ जड़, २ फल।

(७)

किहानी कही अगूढ़ ।
पेटे लरिका बूढ़ ।।

—सेमर का फल

(८)

गोल होती ।
लोह से लड़ती ।।

—सुपारी

(९)

गुल्ला मारे डाल पर ।
खून चुअय रूमाल पर ।।

—जामुन

(१०)

पेड़ बसत पंछी नहीं, दूध देत नहिं गाय ।
तीन नयन शंकर नहीं, याका अर्थ बताय ।।

—नारियल

(११)

पेड़ है थापकथइया, पत्ता है जंजाली ।
खात मा तो नीक लागै, जानौ मोर कहानी ।

—केला

(१२)

वालापन वकुला भये, हरि ज्वानी मा सुआ ।
हे संखी मैं तो से पूछौं, कउन गुन कउआ भया ।

—करौंदा

(१३)

एक सन्दूक कांटे जड़ी,
जब खोलो तब चंपा कली ।।

—कटहल

(१४)

कटोरे पर कटोरा,
बेटा बाप से भी गोरा ॥

—नारियल

(१५)

बारी बउड़ै हाट बिकाय।
गूदा फेंकि कै, बकला खाय।

—छुहारा

(१६)

पट से गिरा मेघ का बच्चा।
पूरा पका करेजा कच्चा।

—आम

(१७)

काजर का कजरौटा, ऊधो का सिंगार।
हरी डाल पै मुनिया बैठी, को है बूझन हार।

—जामुन

(१८)

हरे हरे तुम हरे हरे।
पत्ता लागैं फरे फरे।

—नीम का पेड़

(१९)

एक रूख पै पथरई पथरा।

—कैथे का वृक्ष

(२०)

एक रूख पै हँसियई हँसिया।

—इमली का पेड़

(२१)

एक रूख पै लड़ुअई लड़ुआ ।[1]

—शरीफे का पेड़

(२२)

लंबी लंबी मूछें
मोटे मोटे कान ।
थोंद तोरी थुल्लम थुल्ला ।
उठ जा रे पठान ।

—बरगद

(२३)

काँटों ऊपर सेज बनी है,
जापै सोवे लाला ।
मीठे मीठे गीत सुनावै,
काला है मनवाला ।

—गुलाब का फूल

(२४)

पीरी पीरी सारी पैन्हे ।
और हरी है अँगिया ।
कारौ सैयाँ पास न आवै,
चली उठा कैं डलिया ।

—चम्पा का फूल

(२५)

लगी डांग में आग ।
बिरवा खेलैं फाग ।।

—पलास

---

१ लड्डू ।

(२६)

अजब रूख है हरौ भरौ ।
जीपै सोवै स्याम परौ ।

—पीपल

(२७)

जान कहानी मोरी ।
मुंडी मलाई तोरी ।

—सुपारी

(२८)

उर्द कपास और केरा ।
तीन चीज़ कौ एकई पेड़ा ।

—सेमर की फलियाँ

(२९)

लाल मुनैयाँ तेरी ।
पकर ना पाऊँ एरी ।

—बेर

(३०)

एक लुगाई आता ताई ।
आधी रातें बिटिया जाई ।
भौंर को पारौ हौन न पायो ।
बिटिया ने इक लरका जायो ।

—चमेली

(३१)

एक रूख रूखिया, पत्तन कौ दुखिया ।
लरकन की चौर बौर, बोई बड़ो मुखिया ।।

—करील का पेड

(३२)

भीतर बस्ती बाहर कोट।
एक आगया चिलम चपोट।
लील गया बस्ती और कोट।
जाके भीतर लगो न चोट।

—गूलर का फल

(३३)

एक तरुवर अरु आधा नाम।
अर्थ करो नइ छोड़ो ग्राम।

—नीम

(३४)

सोने की गागर, मैंन का ढकना।

—तेंदू

(३५)

नीचे टइया ऊपर टइया।
जी में बैठी भूरी बिलइया।

—चिरौंजी

(३६)

चौतरफा है कारो, कारो बीच में गुल केशरी।
सुआ कैसी नाक तोरी, बनी रौ पनमेसरी।

—ढाक का फूल

(३७)

हाय हाय हायली, बरै तेरी कायली।
लरका है पेट में, झालर है बयारी।

—नारियल

(३८)

काग बरन कस्तूरिया, छेरी लटकन कान।
जाने तो जान लियो, नहिं जाने चतुर सुजान ॥

—ढाक का फूल

(३९)

आयो पतझर रोय परे।
आयो बसंत फूल परे ॥

—वृक्ष

(४०)

मोरे लंबे-लंबे कान ।
मोरौ बेटा गुर की खान ॥

—केला

(४१)

एक तरवर का फल है तर, पहले नारी पीछे नर।
वा फल को यह देखो हाल, बाहर खाल भीतर बाल ॥

—आम

(४२)

नौनी सी बिटिया झमक चली।
मलमल की धोती पैन चली ॥

—चमेली का फूल

(४३)

ऊपर से गिरा चोंचा।
तोर बाप का डाढ़ी नोचा ॥

—ताड़ का फल

(४४)

एड़ी के धाम धुम, चाकर पैतइया।
फरे के लाल फर, फर गई मिठइया ॥

—केला

(४५)

एक पेड़ इहाँ आ एक पेड़ कलकत्ता।
ओकरा फर का ऊपर पाँता॥

—गूमा का पेड़

(४६)

काठ फरे कठगूलरि फरे, फरे बतीसों डाढ़ि।
काग चिरइआ झुकि झुकि मारे, मानुस फोरि फोरि खाय॥

—सुपारी

(४७)

चलनी में चाम चुम, बदरी में रेखा।
हाय रे परान तोके, कबहूँ न देखा॥

—गूलर का फूल

(४८)

लोठी पर कोठी, कोठी पर पेहान।
ओपर बइठे, गुल गुलवा देवान॥

—रामदाना का पेड़

(४९)

सावन फूलें चैंत गदराय।
तेकर फल सुग्गा ना खाय॥

—बबूल का वृक्ष

(५०)

हतिमुकि चुँकड़ी में जीरा भरी।
बाबू रतनसिंघ दाँतें धरी।

—अमरूद

(५१)

लछमी बसै रोग सब हरै।
जीकी पूजा सब कोइ करै॥

—आँवले का पेड़

हमारे ग्राम-वासी भाइयों की सूझ भी निराली होती है जिसका ज्ञान दी हुई पहेलियों से हो जाता है। प्रहेलिका-अध्ययन से यह स्पष्ट है कि समीपवर्ती पदार्थों के संबंध में ही अधिक पहेलियाँ बनती हैं। कारण यह है कि जिनको हमारी आँखें देखती रहती हैं और जिनके चिन्तन में हमारा मन लगा रहता है, उनके ही विषय में हमारी तर्क-बुद्धि अनेक कल्पनाएँ सुगमता से कर लेती हैं। महुआ ग्रामीणों के लिए सबसे अधिक मीठा और प्यारा है। इसकी उपयोगिता सर्वत्र मानी गयी है। पहेलियों के संग्राहकों का कथन है कि महुए से संबंधित पहेलियों की अच्छी संख्या है। निम्नस्थ प्रहेलिकाएँ इसी वृक्ष के फल-फूल से संबद्ध हैं —

अग्गास बाके घेंसुआ, पाताल वाके अंडा।
मेरी बात बनादे गोरी, तब उठाना हंडा।

—महुआ

पैल भई तीं बैने-वैनें, फिर भये ते भइया।
भइया ऊपर बाप भये थे, फिर भई ती मइया।

—महुआ

हजारी कौ लरका अटारी से क़ूदौ।
भोर भए मोंड़न ने हँस कै लूटौ।

—महुआ

जेकर सोरि पातालें खीले,
आसमान में पारे अंडा।
ई बुझौअलि बूझि के गोरी,
फेरि उठावा हंडा।

—महुआ

बाप के नाँव सपूत के नाँव,
नाती के नाँव किधु अवर[1]।
ई बुझौअल बूझिकें,
तू पाँड़े उठावा कवर[2]।

—महुआ

---

१ और। २ कौर।

जे के खाइ के हाथी माते।
तेली लगावैं घानी।
ए पानी तू कौर उठावा।
गोरी ले जा घर पानी।

—महुआ

बड़ी एक सुन्नर बड़ी सुकुमारि।
बिचवा में छेद बाटे अरियाँ वा बार।

—महुआ का फूल

एक पेड़ कसमीरा।
कुछु लवँग फिरे कुछु जीरा।
कुछु कंकड़ी कुछु खीरा।

—महुआ

ऊपर से गिरी लूकी।
धाये लरिका मुँह से फूँकी।

—महुआ

जनम भयो रे आधी रैन।
छोड चला घर, बीती रैन।

—महुआ का फूल

वृक्ष एवं पुष्प-विषयक कुछ संस्कृत-प्रहेलिकाएँ भी यहाँ दी जा रही हैं—

अपूर्वोऽयं मया दृष्टः कान्तः कमल लोचने।
शोऽन्तरं यो विजानाति स विद्वान्नात्र संशयः।

—अशोक

अपाण्डुपीन कठिनं वर्तुक्तं सुमनोहरम्।
करैराकृष्यतेऽत्यर्थं, किं वृद्धैरपि सस्पृहम्॥

—पका बेल का फल

वृक्षस्याग्रे फलं दृष्टं फलाग्रे वृक्ष एव च ।
अकारादि सकारान्तं यो जानाति स पंडितः ।

—अनानास

वृक्षाग्रवासी न च पक्षिराजस्त्रिनेत्र धारी न च शूलपाणिः ।
त्वग्वस्त्रधारी न च सिद्ध योगी,
जलं च बिभ्रन्न घटो न मेघः ।

—नारियल

वृक्षाग्रवासी न च पक्षिजातिस्तृणं च शय्या, न च राजयोगी,
सुवर्णकायो न च हेमधातुः, पुंसश्च नाम्ना न च राज पुत्रः ।

—आम का फल

—सुभाषित सुधारत्न भाण्डागार

—(०)—
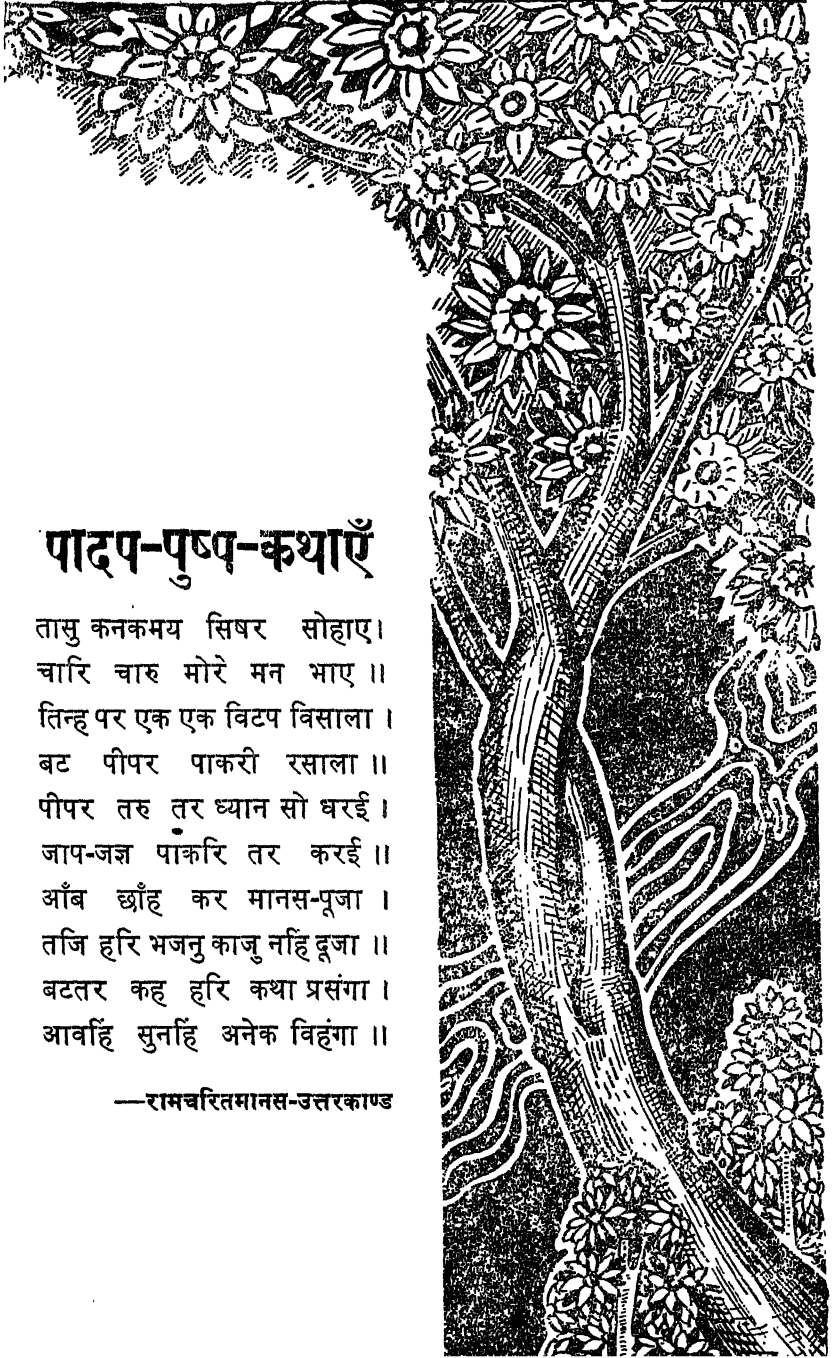
पादप-पुष्प-कथाएँ

तासु कनकमय सिषर सोहाए।
चारि चारु मोरे मन भाए ॥
तिन्ह पर एक एक विटप बिसाला ।
बट पीपर पाकरी रसाला ॥
पीपर तरु तर ध्यान सो धरई ।
जाप-जज्ञ पाकरि तर करई ॥
आँब छाँह कर मानस-पूजा ।
तजि हरि भजनु काजु नहिं दूजा ॥
बटतर कह हरि कथा प्रसंगा ।
आवहिं सुनहिं अनेक बिहंगा ॥

—रामचरितमानस-उत्तरकाण्ड

कथा का श्रीगणेश

कथाओं (कहानियों) के प्रति सब की अभिरुचि रहती है। बच्चे अपनी दादियों को हमेशा कहानी कहने के लिए परेशान करते हैं। ग्रामों तथा नगरों में भी कथा-प्रेमी मौजूद हैं, जो स्वयं कथाएँ कहते हैं और दूसरों से सुनते भी हैं। सृष्टि के प्रारंभ से ही कथाओं की उत्पत्ति हुई है। संसार की ही एक बड़ी भारी कथा है। मनुष्य के जन्म की भी कहानी हम सुनते रहते हैं। भगवान् कैसे आये, कहाँ सोये, कहाँ पढ़े और कैसे उन्होंने पेड़, पशु, पक्षी, मानव तथा दानव उत्पन्न किये, इन सबकी कथाएँ बड़ी रोचक हैं। यहाँ मैं कुछ कहानियाँ उद्धृत कर रहा हूँ, जिनका संबंध वृक्षों से ही है। इनमें पाठक पढ़ेंगे कि किस प्रकार वृक्षों का जन्म हुआ, वे कहाँ से आये और किस प्रकार उन्होंने मानव-जीवन में सहयोग दिया। इन कथाओं से हमें यह भी ज्ञान होगा कि भगवान् की सृष्टि में इन पेड़ों का भी बड़ा महत्त्व है। एक समय वह भी था, जब ये पृथ्वी के पुत्र मानव की बोली बोलते थे और अपने सुख-दुख की कथाएँ कहते तथा सताने वालों को शाप देकर पीड़ित किया करते थे। सब जानते हैं कि वृक्षों में देवी-देवताओं का निवास है।

१. आँवले के वृक्ष की उत्पत्ति

पूर्वकाल में जब सारा जगत एकार्णव के जल में निमग्न हो गया था, समस्त चराचर प्राणी नष्ट होगये थे, उस समय देवाधिदेव सनातन परमात्मा ब्रह्मा जी अविनाशी पारब्रह्म का जप करने लगे। ब्रह्म का जप करते-करते उनके आगे श्वास निकला। साथ ही भगवद्दर्शन के अनुरागवश उनके नेत्रों से जल निकल आया। प्रेम के आँसुओं से परिपूर्ण वह जल की बूँद पृथ्वी पर गिर पड़ीं। उसी से आँवले का महान् वृक्ष उत्पन्न हुआ। उसमें बहुत सी शाखाएँ और उपशाखाएँ निकली थीं। वह फलों के भार से लदा हुआ था। वृक्षों में सबसे पहले आँवला ही प्रकट हुआ, इसलिए उसे 'आदिरोह' कहा गया। ब्रह्मा ने पहले आँवले को उत्पन्न किया। उसके बाद समस्त प्रजा की सृष्टि की। जब देवता आदि की भी सृष्टि होगयी तब वे उस स्थान पर आये जहाँ भगवान विष्णु को प्रिय लगनेवाला आँवले का वृक्ष था। उसे देखकर देवताओं को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसी समय

आकशवाणी हुई—"यह आँवले का वृक्ष सब वृक्षों से श्रेष्ठ है, क्योंकि यह भगवान् विष्णु को प्रिय है। इसके स्मरणमात्र से मनुष्य गोदान का फल प्राप्त करता है। इसके दर्शन से दुगुना और फल खाने से तिगुना पुण्य होता है। इसलिए सर्वथा प्रयत्न करके आँवले के वृक्ष का सेवन करना चाहिए; क्योंकि वह भगवान् विष्णु को परम प्रिय एवं सब पापों का नाश करने वाला है, अतः समस्त कामनाओं की सिद्धि के लिए आँवले के वृक्ष का पूजन करना उचित है। जो मनुष्य कार्तिक में आँवले के वन में भगवान् श्री हरि की पूजा तथा आँवले की छाया में भोजन करता है, उसके पाप नष्ट हो जाते हैं। आँवले की छाया में वह जो भी पुण्य करता है, वह कोटि गुना हो जाता है।"

—कल्याण का विशेषाङ्क—संक्षिप्त स्कंदपुराण, पृ० ३२६

२. वृक्ष-देवता ने भगवान बुद्ध से प्रार्थना की

भगवान् बुद्ध ने अपने भिक्षुओं को पेड़ काटने को सदैव मना किया था। जो भिक्षु पेड़ काटता था, उसे प्रायश्चित करना पड़ता था। पाली ग्रन्थों के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता हैं कि वृक्षों पर देवता रहते हैं। श्री भिक्षु धर्म रक्षित ने अपने लेख 'पूजनीय वृक्ष' में एक कथा को उद्धृत किया है, जिसमें बताया गया है कि पेड़ काटते समय वृक्ष-देवता के पुत्र का हाथ कट गया था। यथा—

"एक समय भगवान् बुद्ध आलकी नगर के अग्गालव चैत्य में विहार करते थे। उस समय आलकी के एक भिक्षु ने विहार बनाने के लिए एक वृक्ष काटना प्रारंभ किया। उस वृक्ष पर रहने वाले देवता ने भिक्षु से कहा—"भन्ते। अपने भवन के लिए मेरे भवन को मत काटिए।"

भिक्षु ने उसकी बात न मान वृक्ष काट डाला। देवता के बच्चे का हाथ तक कट गया। तब वह देवता बड़ा क्रुद्ध हुआ और भिक्षु को जान से मार डालना चाहा। किन्तु फिर सोचा कि मुझे ऐसा करना शोभा न देगा। क्यों न मैं चलकर भगवान् बुद्ध से कहूँ। वह तथागत के पास गया और कहा। भगवान् ने देवता को समझा कर एक अन्य वृक्ष पर रहने के लिए कहा और भिक्षुओं के लिए नियम बनाते हुए कहा—"जो कोई भिक्षु वृक्षों को गिराएगा, उसे पाचित्तिय (प्रायश्चित) करना होगा।"

—आजकल, जौलाई ५५

३. पादप—शाप से मृत्यु

बहुत दिन हुए, किसी जंगल में एक बरगद का पेड़ था। उसके ऊपर बहुत

से पक्षी रहा करते थे। पेड़ की छाया बहुत दूर तक थी। रात में जंगल के पशु इसकी छाया में बैठकर अपनी रातें विताते थे। एक दिन एक हाथी आया और उसने बरगद के पत्तों को तोड़ना शुरु कर दिया। बरगद ने कहा—"गजराज ! तुम मेरे पत्तों को मत खाओ। पत्तों के न रहने से छाया नष्ट हो जायगी। पशु और पक्षी दुखी होंगे। जंगल में बहुत से पेड़ हैं, जिनके पत्ते भी मीठे होते हैं। तुम उनको खाकर अपनी भूख मिटालो।" हाथी अकड़ कर बोला—"बरगद ! तुम जानते हो, मैं कौन हूँ ? मैं इन्द्र का हाथी हूँ। मेरा नाम ऐरावत है। तुम चुप रहो। अधिक बोलोगे तो मैं तुम्हें अभी-अभी गिरा दूँगा।" बरगद ने क्रोध में आकर हाथी से कहा—"जा, तू मर जा, अभी मर जा।" हाथी को चक्कर आया और वह जमीन पर गिर पड़ा। कुछ समय तक छट-पटाने के बाद वह गजराज मर गया। जंगल के पशुओं ने बरगद के शाप की बात सुनी और वे सब डर गये। पशुओं ने मिलकर बरमद की पूजा की और अपना देवता मान कर उसकी सेवा करने लगे। कहा जाता है कि हाथी बरगद के नीचे आकर अपना मस्तक झुका देता है और अपने किए हुए अपराध के लिए क्षमा माँगता है।

४. जब आम के पेड़ के पत्ते सूख गए

एक समय की बात है कि नदी के किनारे एक आम का पेड़ खड़ा था। वह देखने में बहुत सुन्दर था। बसन्त में जब वह फूलता था, तब उसकी पूजा करने के लिए हजारों स्त्रियां आती थीं। कोयल की कूक सुन कर आम का पेड़ झूम उठता था। नदी की लहरें इस पेड़ के पैरों को सींचती थीं और नदी का देवता इस की पूजा करता था। इस वृक्ष की प्रशंसा चारों ओर फैल चुकी थी। कुछ पंडितों ने इस का नाम कल्पवृक्ष रख दिया था। जो कोई इस आम की पूजा करता था उसे मनोवाञ्छित फल मिलता था।

एक दिन स्वर्ग से एक अप्सरा इस आम के पेड़ के पास आयी। वह अत्यन्त सुन्दर थी और बोलते समय उसके मुँह से फूल झड़ते थे। अप्सरा ने तिरछी नजरों से आम की ओर देखा। फिर क्या था, आम का पेड़ काँपने लगा और उसके सब पत्ते सूख गये। अप्सरा उड़ी और स्वर्ग लोक को चली गयी। जब कोई वधू पूछती तो सूखा आम का पेड़ कहता—"न मुझपर बिजली गिरी, न मुझे किसी ने गालियाँ दी और न मुझे पाले ने सताया। स्वर्ग की अप्सरा ने मुझे तिरछी नजरों से देखा, बस इसीलिए मेरे पत्ते सूख गये। अब मैं मर रहा हूँ।"

५. भगवती दुर्गा का कोप-शमन

पाताल लोक में एक महापापी राक्षस रहता था। उसका नाम महिरावण था। उससे सम्पूर्ण पृथ्वी सन्तप्त थी। भगवती दुर्गा ने उसका विनाश किया। उसको मारकर वे मध्यलोक में आयीं। उनकी आँखें क्रोध से लाल थीं। जिसे वे देखती थीं, वही जलकर भस्म हो जाता था। समस्त पेड़ उनकी क्रोधाग्नि में जल चुके थे केवल नीम का पेड़ बचा था। भगवती दुर्गा छाया में बैठकर विश्राम करना चाहती थीं। अतः वे नीम के पेड़ के नीचे आयीं। उनके भय से वह वृक्ष काँपने लगा। पत्तों के हिलने से हवा चली और माता दुर्गा को नींद आगयी। सोने से उनकी थकावट दूर हुई और कुछ समय के बाद वे वहाँ से चलने लगीं। इसी समय नीम का पेड़ झुका और उसने प्रार्थना की, "माता आपकी साँसों से मैं और मेरे पत्ते कड़ुए हो गये हैं। संसार में अब कौन मुझे पूछेगा?" भगवती ने कहा, "मैं तुझे आशीर्वाद देती हूँ कि मेरे क्रोध की शान्ति के लिए दुनिया तेरी पूजा करेगी। जो व्यक्ति तुझे पूजेगा, उस पर मैं प्रसन्न होऊँगी। तेरे पत्तों पर अब मैं रहा करूँगी। और सुन, मेरे मंदिर के आगे-पीछे जो तुझे लगावेगा, उसे बड़ा पुण्य होगा। मैं मानती हूँ कि तेरे पत्ते कड़ुए हो गये हैं, लेकिन जो उनको खाएगा, वह सब प्रकार के रोगों से मुक्त हो जावेगा। निम्ब सप्तमी का व्रत धारणकरने वाला भक्त तेरेही पत्तों से भगवान् भास्कर की पूजा करेगा और तेरीही कोपलों को खाकर तेरी स्तुति करेगा।" नीम भगवती की बातें सुनकर बहुत प्रसन्न हुई।

६. ऋषि–शाप

प्राचीन काल की घटना है स्वर्ग से एक देवता विहार करने के लिए मध्यलोक में आया। उसका नाम आस्तीक था। इन्द्र का विशेष कृपा पात्र होने के कारण आस्तीक का स्वर्ग लोक में विशेष मान था। सब अप्सराएँ उसे चाहती थीं। मध्यलोक की छटा देखकर आस्तीक बहुत प्रसन्न हुआ। इधर-उधर घूमने के बाद आस्तीक एक पर्वत पर अपनी प्यारी अप्सरा के साथ क्रीड़ा करने गया। पर्वत-शिखर पर रहकर उसने विहार किया। सहसा उसकी अप्सरा के गले से मोतियों का हार टूटा और ध्यान करते हुए लोमश ऋषि के सिर पर गिरा। ऋषि ने अपने योग-बल से सब कुछ जान लिया और अप्सरा को अबला समझ कर क्षमा कर दिया; लेकिन आस्तीक को उन्होंने अपराधी ही समझा और

कहा—"मूर्ख, तूने एक ऋषि का अनादर करके अपनी वासनाओं की पूर्त्ति उस पर्वत पर की, जहाँ एक ऋषि भगवान् का चिंतन कर रहा था। जा तू ब्रह्म राक्षस बनकर बरगद के पेड़ में रहे।" आस्तीक ने लोमश ऋषि की बातें सुनीं और घबराकर वह उनके पास आया। अनुनयविनय करने के पश्चात् ऋषि बोले, "मेरा दिया हुआ शाप तो मिथ्या नहीं हो सकता, लेकिन जब तू किसी भक्त के मुख से तुलसी की प्रशंसा सुनेगा, तब तेरा उद्धार होगा।" विकल आस्तीक को अपना स्वर्ग धाम छोड़ना पड़ा और वह ब्रह्म-राक्षस बनकर बरगद के पेड़ पर रहने लगा। हजारों वर्षों के व्यतीत हो जाने पर काश्मीर के दो भक्त (हरिमेधा और सुमेधा) एक दिन उसी जंगल में आये, जहाँ आस्तीक ब्रह्म राक्षस बनकर बरगद के पेड़ में रहता था। इस वृक्ष के नीचे तुलसी का घना वन था। हरिमेधा और सुमेधा ने तुलसी-वन की परिक्रमा की तथा उसकी प्रशस्ति में अनेक श्लोक पढ़े, जिनको आस्तीक ने सुना और उसका उद्धार हुआ।

आज भी कहा जाता है कि वट-वृक्ष पर ब्रह्म राक्षस रहता है, इसीलिए कोई भी हिन्दू इस पेड़ को नहीं काटता। लोक-विश्वास है कि वट-वृक्ष काटने वाला शीघ्र मर जाता है।

७. अमृत का जन्म

हर्र (हड़), 'की आयुर्वेद में बड़ी महिमा गायी गयी है। कहते हैं कि यह मानवों को माता के समान पालती है। माता तो कभी कुपित भी हो जाती है, लेकिन खायी हुई हर्र कभी हानि नहीं पहुँचाती।

हरीतकी मनुष्याणां मानेव हितकारिणी।
कदाचित्कुप्यते माता नोदरस्था हरीतकी।

हर्र को अमृता भी कहते हैं। इसकी उत्पत्ति अमृत की बूंद से हुई है। एक समय दक्षप्रजापति विश्राम कर रहे थे, उनके पास अश्विनीकुमार बैठे थे। उन्होंने पूछा—"महाराज! कृपा करके हर्र की उत्पत्ति के विषय में हमें कुछ बतलाइए?"

दक्षप्रजापति बोले—"देवराज इन्द्र ने जब अमृत-पान किया, तब उनके मुख से अमृत की एक बूंद टपक पड़ी। उसी से सात प्रकार की हड़ें उत्पन्न हुईं। अमृत से उत्पन्न होने के ही कारण इसे जीवन्ती और अमृता कहते हैं।+

+भावप्रकाश पृष्ठ १३२.

८. प्रेत का वरदान

गोस्वामी तुलसीदास को बबूल के पेड़ में रहने वाले प्रेत ने ही भगवान् रामचान्द्र के दर्शन पाने का उपाय बताया था।

कहा जाता है, गोस्वामी जी नित्यप्रति शौच-कर्म से निवृत्त होकर एक बबूल के पास जाते थे और लोटे में जो पानी बच आता था, उसे उसकी जड़ में डाल दिया करते थे। एक मास के पश्चात् गोस्वामी जी को स्वप्न में बबूल का पेड़ हँसता हुआ दिखाई दिया। अपने नियम के अनुसार वे बबूल के पास गये और शान्त भाव से उसके नीचे खड़े हो गये। पेड़ से एक प्रेत निकला और बोला, "गोसाईं जी महाराज ! मैं बहुत समय से प्यासा था। किसी ने भी मेरी पुकार नहीं सुनी। मैंने कई पथिकों से पानी माँगा, लेकिन किसी ने भी मेरी पुकार को नहीं सुना। न मालूम तुम्हें कैसे मुझ पर दया आगयी। तुमने एक मास तक मुझे जल पिलाया है। अब मेरी प्यास बुझ चुकी है। मैं प्रसन्न हूँ। जो तुम चाहो, सो माँगो। मैं महाप्रेत (ब्रह्मराक्षस) हूँ। कोई ऐसा काम नहीं है, जिसे मैं न कर सकूँ।" गोस्वामी जी ने कहा, "हे बबूल के प्रेत ! मैं भगवान् रामचन्द्र के दर्शन चाहता हूँ। यही मेरी इच्छा है।" प्रेत बोला, "काम तो बहुत कठिन है, फिर भी मैं इसे पूरा करूँगा ही। मैंने भी भगवान् राम को देखना चाहा, लेकिन न देख सका। आप मेरी प्रार्थना सुनें। परमात्मा राम के दर्शन के बाद आप मुझे रामायण अवश्य सुनावें। मैं भी प्रेत-योनि से मुक्ति चाहता हूँ। रामायण के सुनने से मेरा पाप शान्त हो जावेगा और राम नाम के प्रभाव से मैं स्वर्ग में जीवन-सुख भोगूँगा और तुम्हारी प्रशंसा करूँगा।" गोस्वामी जी ने प्रेत की बात स्वीकार की। इसके बाद उसने गोस्वामी जी को हनुमान से मिलने का उपाय बताया। वे पवनसुत से मिले और उनकी ही कृपा से उन्हें चित्रकूट में भगवान् राम के दर्शन हुए। एक दिन गोस्वामी जी ने बबूल के नीचे बैठकर रामायण सुनायी और प्रेत का उद्धार किया। आज भी प्रेत-बाधा को दूर करने के लिए बबूल की पूजा की जाती है।

९. फूल जिन तोरौ

चम्पा के पेड़ की कथा निराली है। सुनते हैं कि किसी गाँव में एक किसान रहता था। उसके एक बहन थी, जिसे वह बहुत प्यार करता था। कुछ वर्षों के बाद किसान का ब्याह हुआ और घर में भौजाई को देखकर किसान की बहन

बहुत प्रसन्न हुई। लेकिन ननद और भौजाई का प्रेम बहुत समय तक न रह सका। भौजाई अपनी ननद को घर में नहीं देखना चाहती थी, इसीलिए वह अपने पति से उसकी शिकायतें किया करती थी। किसान का मन अपनी बहन की ओर से हट गया। अब इसके दिन दुःख से कटने लगे। किसान अपनी बहन को 'कट्टो' कह कर बुलाया करता था, यह नाम केवल चिढ़ाने के लिए ही उसने रखा था। सयानी होने पर किसान ने अपनी बहन कट्टो का एक बहुत गरीब किसान के साथ विवाह कर दिया। कट्टो अपने पति के साथ गयी और भगवान् की कृपा से उसके जाते ही उसके घर में सोने की वर्षा हुई। कट्टो अब धन पाकर फूल उठी। सोने के आभूषण बने और कट्टो की देह इन गहनों से चमक उठी। एक दिन कट्टो अपने भाई के साथ अपनी भौजाई को देखने आई। सोने के गहनों को देखकर किसान की स्त्री चकरा गयी और उसने उसे मार डालने का उपाय सोचा। उसने अपने पति के कान भरे और उसने जंगल में ले जाकर अपनी बहन को मार ही तो डाला। लाश एक गड्ढे में दाब दी गयी। इसी जगह पर चम्पा का पेड़ निकला, जिसमें सुन्दर फूल लगे।

एक दिन की बात है। कट्टो का पति कट्टो को लिवाने जा रहा था। रास्ते में उसने चम्पा का यही पेड़ देखा। उसने फूल तोड़ने चाहे कि पेड़ से आवाज़ आयी—

अहो ! अहो ! तुम स्वामी हमारे
फूल जिन तोरौ।
डार जिन तोरौ।
भइया ने बैन मारी ,
भौजी ने कान भरै।
रंग चूं चूं ।

कट्टो के पति ने फूल तोड़ ही लिया। इसमें से कट्टो निकली और उसने सब बातें कह दीं। यही पहला चम्पा का पेड़ था, जिससे आजकल के चम्पा वृक्षों की उत्पत्ति हुई है।

१०. कामदेव के पांच पुष्प-वाण

वृक्षों की कथाओ में पुष्प-कथाओं का भी उल्लेख आवश्यक है क्योंकि पुष्प के जनक पादप ही हैं। बकावली के फूल की कथा विशेष प्रसिद्ध है। कहा जाता

है कि इस फूल से अंधी आँखें भी ज्योतिर्मय हो जाती हैं। केतकी के पुष्प की कथा भी कम मनोरंजक नहीं हैं। कहते हैं, कि गूलर का फूल भी किसी न किसी उपाय से देखने को मिल ही जाता है। फूल-विषयक अनेक लोक कथाएँ हैं। यहाँ पर कामदेव के पुष्प-बाणों से संबंधित वृक्ष का उल्लेख किया जा रहा है, इससे कई पुष्पों की उत्पत्ति पर प्रकाश पड़ता है—'पौराणिक कथा है कि कामदेव को शिव ने जब भस्म किया तब उसका मणि खचित धनुष पाँच टुकड़ों में विभक्त होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। रुक्म विभूषित पृष्ठवाला मुष्ठिवंध (मूठ) चम्पा का फूल होकर पैदा हुआ, वज्र (हीरा) का बना हुआ नाह स्थान बकुल पुष्प हुआ, इन्द्रनील शोभित कोटि-देश पाटल-पुष्प में परिवर्तित हो गया, नाह और मुष्टिवंध का मध्यवर्ती स्थान जो चन्द्रकान्त मणि की प्रभा से प्रदीप्त था, जाती पुष्प हुआ और मूठ के ऊपर और कोटि के नीचे का हिस्सा, जिसमें विद्रुम मणि जड़ी थी, मल्ली के रूप में पृथ्वी पर पैदा हुआ। तब से काम का धनुप पुष्पमय होकर ही पृथ्वी पर विराजमान है। कामदेव के पुष्पमय पाँच बाणों में अरविंद, (कमल), अशोक, आम, नवमल्लिका और नीलोत्पल हैं।"*

११. पलाश की उत्पत्ति

एक समय की बात है, किसी जंगल में गंगा के किनारे पर कुछ ऋषि सोम रस का पान कर रहे थे। आकाश में पूर्ण चन्द्रमा का प्रकाश था। चन्द्रदेव ने ललचाई हुई आँखों से ऋषियों के सोम-पान को देखा। उन्होंने अपने प्रिय मित्र बाज को बुलाया और कहा— "सब पक्षियों में तुम बलवान् हो। तुम्हारे पंख भी सुदृढ़ हैं। देखो, गंगातट पर ऋषि सोम पी रहे हैं। तुम अपने दोनों पंखों को सोम रस में डुबाकर मेरे पास चले आओ। मैं इस रस की सुगंध से ही अपनी नासिका को तृप्त करना चाहता हूँ।" बाज ऋषियों के शाप से डरता था, फिर भी चन्ददेव कीइच्छा के अनुसार वह ऋषियों के पास गया। उसने अपने पंजों से सोम-पात्र को फोड़ डाला और जमीन पर पड़े हुए सोम में अपने पंखो को भिगोकर आकाश में उड़ गया। कुपित ऋषियों ने उड़ते हुए बाज को देखा और उसका एक पंख टूटकर जमीन पर गिर पड़ा। इसी टूटे हुए बाज-पंख से पलाश का वृक्ष उत्पन्न हुआ और यह पवित्र माना जाता है।

* हिन्दी साहित्य की भूमिका, आचार्य हजारी प्रसाद जी द्विवेदी, पृष्ठ २३७

इसके पत्रों में भोजन करना हितकर कहा गया है। अनेक धार्मिक संस्कारों में पलाश-पत्रों का प्रयोग होता है।×

१२. रसाल का जन्म

आम वृक्ष की उत्पत्ति के विषय में अनेक लोक कथाएँ प्रचलित हैं। रसाल इतना सुन्दर एवं रसीला है कि आज भी इन्द्रपुरी में इसकी चर्चा होती रहती है। रसिकों ने भी इसकी रसमयता पर बहुत कुछ लिखा है।* कहा जाता है, सूर्य भगवान् की एक पुत्री थी, जो अत्यन्त सुन्दर तथा गुणवती थी। उसके रूप-सौन्दर्य की प्रशंसा चौदह भुवनों में हुआ करती थी। एक जादूगरनी इसके पीछे पड़ी और उसे रात-दिन परेशान करने लगी। व्यथित होकर सूर्य-पुत्री ने इस दुष्टा जादूगरनी से वचने के लिए स्वर्गलोक का त्याग किया और एक तालाब में आकर छिप गयी। कुछ समय के बाद वह फूल बनकर लहरों के साथ खेलने लगी। सहसा एक राजा उस तालाब के पास आया और सुन्दर फूल को देखकर बहुत प्रसन्न हुआ। उसने अपने नौकरों को फूल लाने की आज्ञा दी। इतने में जादूगरनी ने आकर इस फूल को पकड़ लिया तथा आग में डाल दिया। राजा के देखते ही देखते सुन्दर पुष्प राख बन गया, और इसी राख से एक मनोहर आम का पेड़ उत्पन्न हुआ। कहा जाता है, संसार में जितने भी आम के वृक्ष हैं, वे सब इसी पेड़ की सन्तान हैं। समय आने पर आम का पेड़ फूला और उसमें रसीले आम लगे। राजा ने एक पके आम को तोड़ना चाहा, लेकिन वह स्वयं जमीन पर गिरा और सूर्य की पुत्री के रूप में परिवर्तित हो गया। राजा ने उसको अपनी पूर्व पत्नी के रूप में पहचान लिया। सूर्य-कन्या राजमहल में राजा के साथ सुख से रहने लगी।+ यह कहानी साधारण परिवर्तन के साथ विभिन्न जन पदों में प्रचलित हैं।

१३. उदुम्बर (गूलर) की महिमा

भक्तशिरोमणि प्रह्लाद का पिता हिरण्यकशिपु भगवान् का विरोधी और शत्रु था। इसने तपस्या करके ब्रह्मा से वरदान प्राप्त किया था, जिससे वह देव, मनुष्य एवं

× Some beautiful Indian trees.

* देखिये, 'अमवा की छैयाँ,' लेखक, प्रो० श्रीचन्द्र जैन

+ Flowering Trees in India p. 34.

पशु आदि से अवध्य होगया था। इस पापी का पुत्र प्रह्लाद सदा राम-नाम जपा करता था। एक दिन अप्रसन्न होकर हिरण्यकशिपु ने प्रह्लाद को मार डालना चाहा। ज्यों ही उसने तलवार मारनी चाही कि भगवान् नृसिंह के रूप में प्रकट हुए और संधिवेला में पापी हिरण्यकशिपु के पेट को अपने तेज़ नाखूनों से फाड़ डाला। हिरण्यकशिपु मर गया, लेकिन उसके जहरीले पेट के खून से भगवान् के नाखून जलने लगे। वे व्याकुल होकर इधर-उधर देखने लगे। इतने में उन्हें एक उदुम्बर का पेड़ दिखाई दिया। वे दौड़े हुए उस के पास गये और उसके तने में अपने नाखूनों को घुसेड़ दिया। उदुम्बर के दूध के लगने से जहर का प्रभाव कम हुआ और भगवान् ने शान्ति का अनुभव किया। उदुम्बर का पेड़ विष के प्रभाव से काँपने लगा। धीमी आवाज़ से उसने कहा -"भगवान्! आप के नाखूनों में जो विष लगा था, उससे मेरा जीवन नष्ट होर हा है अब मैं जीवित न रह सकूंगा।" भगवान् बोले, "हे वृक्ष, तुम अमर बन चुके हो। तुम्हारे दूध से मुझे शान्ति मिली है अब तुम मेरे प्यारे भक्त हो। कुछ समय के बाद दत्तात्रेय के अवतार में मैं ही तुम्हारी छाया में तपस्या करूँगा और संसार तुमको पूजकर अपनी मनोकामना पूरी करेगा।" आज भी हिन्दू इस वृक्ष को पवित्र मान कर पूजते हैं।

१४. जब वृन्दा ने शाप दिया—

एक बार भगवान् महादेव का पसीना सागर में गिरा और उससे एक राक्षस उत्पन्न हुआ, जिसका नाम जलंधर था। यह असुर बलशाली और देव-द्रोही था। इस की स्त्री वृन्दा अत्यन्त रूपवती तथा पतिव्रता थी। जलंधर ने कठिन तप करके वरदान प्राप्त किया था कि जब तक उसकी स्त्री सच्चरित्र रहेगी तब तक उसे कोई न मार सकेगा। राक्षस को अपनी पत्नी के चरित्र पर पूर्ण विश्वास था।

एक समय की बात है, जलंधर ने इन्द्र के पास अपने एक मित्र को भेजा और उनसे वे १४ रत्न वापिस माँगे जो उन्हें समुद्र-मंथन में प्राप्त हुए थे। इन्द्र को जलंधर की यह माँग अप्रिय लगी और उन्होंने रत्नों को देना अस्वीकार किया। युद्ध की घोषणा हुई और जलंधर राक्षस ने अपनी बड़ी भारी सेना के साथ देवताओं का विनाश प्रारंभ कर दिया। इन्द्र भयभीत होकर भगवान् शिव तथा विष्णु के पास गये; लेकिन ब्रह्माने उनसे कहा कि जबतक उस (जलंधर) की स्त्री का पातिव्रत अखंडित है तब तक उसे कोई नहीं मार सकता। अब इन्द्र बहुत चिन्तित हुए। विवश होकर वह इधर-उधर भटकने लगे। स्वर्गलोक में जलंधर का आतंक छाया था। अन्त में भगवान् विष्णु ने सुरपति की सहायता करने का

विचार किया । वे जलंधर के रूप में वृन्दा के पास गये और उसके साथ कपट किया । राक्षस (जलंधर) मारा गया और देवताओं ने सुख की साँस ली । वृन्दा को विष्णु की मायाचारी का ज्ञान हुआ और क्रुद्ध होकर उसने शाप दिया – "तुम गंडक नदी में काला पत्थर बनकर रहो ।" सती के शाप से भगवान् विष्णु पत्थर बनगये और वृन्दा भगवान् के शापसे तुलसी का वृक्ष बनी । दोनों अब प्रेम के साथ रहने लगे । भगवान् विष्णु ने तुलसी को पत्नी के रूप में अपनाया और संसार में तुलसी-वृक्ष की पूजा होने लगी ।+

१५. भगवान् शंकर न्यग्रोध बने

एक समय की बात है भगवान् शंकर अपने शरीर पर राख लगा रहे थे । राख को मलते-मलते उन्हें एक छोटा सा कंकड़ मिला, जिसे उन्होंने फूंक कर फेंका जो शीघ्र ही भस्मासुर नामक राक्षस के रूप में प्रकट हुआ और सामने खड़ा होकर बोला—"भगवान् ! मैं आपकी सेवा के लिए प्रस्तुत हूँ । आज्ञा दीजिए ।" भगवान् शंकर को एक नया सेवक प्राप्त हुआ । उन्होंने प्रसन्न होकर कहा—"तुम नित्य प्रति शुद्ध मुर्दे की राख लाया करो ।" भस्मासुर आज्ञा-पालन में तत्पर हुआ और श्मशान से राख लाने लगा । एक दिन उसे भस्म नहीं मिली । वह घबराया हुआ भगवान् के पास आया और बोला, "महाराज! आज तो किसी की मृत्यु ही नहीं हुई । श्मशान खाली है । मुझे आप वरदान दीजिए कि जिसके सिर पर हाथ रखदूं वही मर जाय ।" भोले बाबा शंकर ने 'तथास्तु' कह कर अपने सेवक भस्मासुर की इच्छा पूर्ण की । अब क्या था । इस राक्षस ने ऋषियों को समाप्त करना प्रारंभ किया । सर्वत्र हा-हाकार मचा । ईश्वर-चिंतन में समय व्यतीत करने वाले मुनियों ने भगवान् शंकर से प्रार्थना की कि भस्मासुर को रोकें; लेकिन वे बोले—"भक्तो ! अब मैं कुछ नहीं कर सकता । मैं तो वरदान दे चुका हूँ । जो मैं देता हूँ, उसे वापिस नहीं लेता । तुम लोग भस्मासुर को समझाओ और धर्मोपदेश देकर उसकी बुरी भावनाओं को बदल दो ।" ऋषि चुपचाप वन को चले गये ।

एक दिन भगवान् शंकर भगवती पार्वती के साथ बैठे हुए बातचीत कर रहे थे । भस्मासुर पार्वती के सौन्दर्य पर मुग्ध हुआ और उसने शंकर को भस्म करने का संकल्प कर लिया । भगवान् शंकर भस्मासुर के भाव को ताड़

+Epics, Myths and Legends of India, by P.Thomas.

गये और पार्वती को साथ लेकर भागे। आगे-आगे भगवान् थे और पीछे पीछे हुंकार करता हुआ भस्मासुर। पृथ्वी काँप रही थी। देवता आकाश से इस दृश्य को चितातुर होकर देख रहे थे। शंकर भगवान् अपने सेवक की दुष्टता पर दाँत पीस रहे थे और समझा भी रहे थे, लेकिन भस्मासुर कुछ भी सुनने को तैयार न था। वह तो पार्वती जी को अपने पास रखना चाहता था और शंकर के सिर पर अपना हाथ रखकर उन्हें भस्म करने के लिए दृढ़ संकल्प कर चुका था। देवता विष्णु के पास गये और उन्होंने भस्मासुर की नीचता को बताया। भगवान् विष्णु ने अपने को एक अत्यन्त रूपवती युवती के रूप में परिवर्तित किया और दौड़ते हुए उस स्थान पर पहुँचे, जहाँ भस्मासुर भगवान् शंकर का पीछा कर रहा था। राक्षस ने इस नयी मोहनी को ललचाई हुई आँखों से देखा। और वह सब कुछ भूल गया। वह पागल की तरह नाचने लगा। भगवान् विष्णु भी युवती के रूप में नृत्य करने लगे। ज्यों ही भस्मासुर ने नाचते हुए अपना हाथ अपने ही सिर पर रखा कि वह जलकर भस्म हो गया। भगवान् विष्णु अपने शुद्ध रूप में प्रकट हुए और उन्होंने देखा कि भगवान् शंकर न्यग्रोध (वट-वृक्ष) बनकर खड़े हुए हैं। आज भी हिन्दू वट-वृक्ष को भगवान् शंकर का रूप मान कर पूजते हैं।+

१६. भगवती पार्वती का शाप

एक दिन भगवान् शंकर भगवती पार्वती के साथ वन में विहार कर रहे थे। पुष्पों से लदे हुए वृक्ष और पुष्पित लताएँ पार्वती के मन को प्रमुदित कर रही थीं। सुन्दर वातावरण था। मंद-सुगंद वायु चल रही थी। प्राकृतिक सुषमा देखकर भगवान् शंकर मन ही मन विहँस रहे थे। इतने में समस्त देवता उनके दर्शनार्थ वहाँ आ पहुँचे। पार्वती को इनका आना अप्रिय लगा। उन्होंने क्रुद्ध होकर शाप दिया कि तुम सब देवता वृक्ष बन जाओ। कुछ क्षणों में ही देवता अपने-अपने रूप को त्याग कर वृक्षों में परिणत होगये। पीपल के रूप में विष्णु, बरगद के रूप में शंकर और पलाश के रूप में ब्रह्मा स्थिर हो गये। भगवती पार्वती के शाप के प्रभाव को भगवान् शंकर ने देखा और कानन में आगे बढ़ गये।*

+स्कंद पुराण, (शिवलीलामृत)

*सूत उवाच—एवं सा पार्वती देवाञ्छ शाप क्रुद्ध मानसा, तस्माद् वृक्षत्व-मातन्ना: सर्वे देवगणाः किल......अश्वत्थरूपो भगवांन्विष्णुरेव न संशयः। रुद्ररूपी वटस्तद्वत्पलाशो ब्रह्मरूप धृक ।........

—श्री कार्तिक मांहात्म्य पृ० १६०

१७. भगवान् कृष्ण और पारिजात

प्राचीन समय की बात है। एक दिन नारद स्वर्ग से पारिजात वृक्ष का फूल लेकर द्वारिका गये। उन्होंने यह पुष्प भगवान् श्रीकृष्ण को समर्पित किया। सुन्दर फूल को पाकर भगवान् बहुत प्रसन्न हुए और इसे उन्होंने अपनी प्यारी रुक्मिणी को दे दिया नारद यह देखकर सीधे सत्यभामा के पास गये और बोले— "आज मैं एक सुन्दर पुष्प-स्वर्ग से लाया था, जिसे मैंने श्रीकृष्ण को दे दिया है। मैं यह जानना चाहता था कि वे इस फूल को तुम्हें देते हैं अथवा रुक्मिणी को। मुझे दुःख है कि उन्होंने उस सुगंधित फूल को तुम्हें नहीं दिया और रुक्मिणी के श्याम केशों में लगा दिया इससे प्रकट होता है कि श्रीकृष्ण का मन तुम से हट चुका है! सत्यभामा, नारद की बातें सुनकर बहुत दुःखी हुईं और कोप-भवन में जाकर लेट गईं। दरबार समाप्त होने पर श्रीकृष्ण महल में आये और सत्यभामा के कोप भवन में जाने के समाचार को सुना। वे सीधे सत्यभामा के पास गये और उन्हें मनाने लगे। सत्यभामा तिरछी आँखें करके बोलीं- "आज मुझे मालूम हुआ कि तुम मुझसे प्रेम नहीं करते। नारद के दिए हुए फूल को तुमने मुझे क्यों नहीं दिया? अब मैं तुम से तभी बोलूंगी, जब तुम स्वर्ग से पारिजात वृक्ष लाकर मेरे महल के सामने लगाओगे। मेरा क्रोध तो अब पारिजात को देखकर ही शान्त होगा।" भगवान कृष्ण सीधे स्वर्ग में गये। उधर नारद ने जाकर इन्द्र से पहले ही कह दिया कि वह अपने उद्यान को रक्षा करे। कोई बड़ा आदमी उसके पारिजात वृक्ष को उखाड़कर ले जाने वाला है। इन्द्र के साथ लड़ाई कर के श्रीकृष्ण ने अपनी इच्छा पूर्ण की। इन्द्र हार कर भाग गया और श्रीकृष्ण पारिजात को उखाड़कर द्वारिका ले आये। सत्यभामा इस सुन्दर वृक्ष को देखकर प्रसन्न हुई। कहा जाता है कि भगवान् कृष्ण के स्वर्गारोहण के बाद द्वारिका सागर में डूब गयी और पारिजात का वृक्षपुनः स्वर्ग में चला गया।

१८. जनक-नन्दिनी का वरदान

अयोध्या के महाराजा दशरथ ने रानी कैकेयी के कहने से अपने पुत्र रामचन्द्र को १४ वर्ष का वनवास दिया और पुत्र शोक में शरीर-त्याग किया। रामचन्द्र अपने भाई लक्ष्मण तथा पत्नी सीता के साथ वन को गये और वहाँ अनेक दुष्ट राक्षसों को मारा। एक दिन जब रामचन्द्र मारीच नामक मृग रूपी राक्षस को मारने गये हुए थे, तब रावण 'पंचवटी' में आया और सीता को हरकर लंका ले

गया । उसने भगवती सीता को लंका की प्रसिद्ध अशोक वाटिका में अशोक वृक्ष के नीचे रहने की आज्ञा दी । इस वाटिका में कोई भी नहीं पहुँच सकता था । अनेक राक्षसियों की देख-भाल में रहती हुई सीता राम-नाम जपती और अपने दिन काटती थीं ।

अशोक वृक्ष, ग्रीष्म में अपनी शीतल छाया से सीता को सुख देता और उनके चरणों में पुष्प चढ़ाकर अपनी भक्ति प्रकट करता था । जब कभी कोई दुष्ट राक्षस सीता को अपशब्द कहता तो अशोक क्रोध से काँपने लगता था । कई बार सीता के दुःख को देखकर यह वृक्ष रोया था । इस प्रकार इस अशोक वृक्ष ने सीता के साथ पूर्ण सहानुभूति दिखलायी और स्वयं को इनका सेवक माना । कुछ वर्षों के पश्चात् रामचन्द्र ने लंका पर आक्रमण किया, अपने अलौकिक पराक्रम से रावण को मारा और उसके भाई विभीषण को लंका का शासक नियुक्त किया । सर्वत्र आनन्द की भावना प्रकट हुई और रावण के विनाश पर सब लोगों ने रामचन्द्र का यशोगान किया । अशोक-वाटिका को छोड़ कर जब सीता अयोध्या को जाने लगीं तब उन्होंने बड़े प्रेम के साथ अशोक की ओर देखा और आशीर्वाद दिया—"प्यारे वृक्ष ! तुमने मेरी पर्याप्त सेवा की है । तुम्हारी श्रद्धा को मैं कभी नहीं भूल सकती । संसार में तुम अमर रहोगे और समस्त नारियाँ तुम्हारी पूजा करके अपनी मनोकामना पूर्ण करेंगीं । तुम्हारी छाया में बैठकर मैंने कुछ समय के लिए अपना शोक भुलाया था, अतः मैं वर देती हूँ कि जो नारी तुम्हारी छाया में बैठेगी उसका रोग-शोक नष्ट होगा ।" कहते हैं, अशोक-वाटिका को छोड़ते समय सीता जी के ऊपर इसी अशोक वृक्ष ने पुष्पों की वर्षा की थी ।

१९. जब भगवान् शंकर लता पर मुग्ध हो गये थे

एक समय भगवान् शंकर अपने नाँदिया पर बैठे हुए अमरकंटक के घने बन में घूम रहे थे । सूर्य पश्चिम में छिप रहे थे । आकाश में अनेक पक्षी मधुर शब्द करते हुए अपने-अपने बच्चों की याद में घोसलों की ओर दौड़े जारहे थे । धीरे-धीरे आते हुए अंधकार को भगवान् शंकर ने देखा और वे विश्राम करने के लिए योग्य स्थान के अन्वेषण में इधर-उधर घूमनें लगे । इतने में उन्होंने एक सुन्दर लता को देखा । उसमें अनेक रंग-विरंगे फूल खिले हुए थे । वह पीपल के वृक्ष से लिपटी हुई थी । भगवान् का मन इस एकाकिनी लता की ओर आकर्षित हुआ । पीपल

के पेड़ के नीचे उन्होंने अपना आसन जमाया। प्रातः काल होने पर लता ने भगवान् शंकर के मस्तक पर बहुत से फूल गिराये। पुष्पों की सुगन्धि से प्रसन्न होकर भगवान् शिव ने लता के साथ विवाह किया और कुछ महीनों के बाद इससे एक काला पुत्र उत्पन्न हुआ। यह उदण्ड था और इधर-उधर घूमा करता था। एक दिन उसने शिव जी के बैल को पीटा, जिससे भगवान् अप्रसन्न हुए और उसे घर से निकाल दिया। यह शिव-पुत्र वनों में रहकर अपने दिन काटने लगा। कहा जाता है, कोल-भील इसी शंकर-पुत्र की सन्तान हैं।*

२०. जब बहन-भाई केतकी-केवड़ा बने

किसी गाँव में दो भाई और एक बहन रहा करते थे। इनमें खूब प्रेम था। जब दोनों भाई जंगल में लकड़ी काटने चले जाते थे, बहन चरखा कातती थी और कुछ गाया करती थी। संध्या होने पर वह भोजन तयार करती और बड़े प्रेम से अपने भाइयों को खिलाती थी।

एक दिन बहन ने साग बनाया। साग काटते समय उसकी उँगली कट गयी, जिससे रुधिर निकला जो साग में मिल गया। बहन ने रात में भोजन परोसा और भाइयों ने प्रसन्न होकर खाया। बड़े भाई ने कहा—"बहन ! आज का साग बहुत ही अच्छा बना है। बताओ, इसमें तुमने क्या डाला है ? बहुत कहने-सुनने पर जब बड़ा भाई नहीं माना तो बहन ने कहा—"आज साग काटते समय मेरी उँगली कट गयी थी, उसका रक्त इस साग में पड़ गया है।" बड़े भाई के मन में पाप आया और उसने अपनी बहन का माँस खाना चाहा। उसने विचारा कि जब बहन का रक्त इतना मीठा है तो मांस तो बहुत ही स्वादिष्ट होगा। वह बहकाकर बहन को जंगल में ले गया। उसके साथ उसका छोटा भाई भी था। जंगल में जाकर बड़े भाई ने एक पीपल के पेड़ के नीचे अपनी बहन को मार डाला और उसके मांस को पकाया। छोटे भाई ने बड़े भाई को बहुत धिक्कारा और उससे लड़कर चल दिया। अब बड़ा भाई घबड़ाया। उसने दौड़ कर अपने छोटे भाई को भी कुल्हाड़ी से काट डाला।

मारी हुई बहन केतकी का पेड़ बनी, और कुल्हाड़ी से काटा गया भाई केवड़े का झाड़ बनकर पीपल के पेड़ के नीचे रहने लगे। यह पीपल का पेड़

* **विश्ववाणी (संस्कृति-विशेषाङ्क) पृष्ठ ३४६।**

बहुत पुराना था और इस पर बाघदेव रहा करते थे। गाँव के सब लोग इस पेड़ की पूजा करने प्रत्येक मंगलवार को आते थे। एक दिन गाँव के लोग पीपल के पेड़ की पूजा कर रहे थे। पास में खड़े हुए केतकी और केवड़े के पेड़ों से आवाज आयी और एक लड़की और एक लड़का प्रकट हुए। ये दोनों भाई-बहन थे। उन्होंने बताया कि उनके बड़े भाई ने ही उनकी हत्या की है। पीपल के पेड़ से बाघ देवता आये, जिन्होंने इन दोनों (भाई-बहन) की बात को सत्य बताया।

गाँव के मुखिया ने उस दुष्ट बड़े भाई को अपने पास बुलाया और तीर मार कर उसकी दोनों आँखें फोड डाली। अन्धा बन कर वह भीख माँगता और गाता—

बहन मार कर पाप कमाया।
काटा मैंने ही भाई को।
मैं पापी हूँ मैं पापी हूँ।
भूल चुका था मैं साँई को।।
मैया, दो रोटी दो।
भैया, दो रोटी दो।।

२१. बँसिया के पौरा से निकली भवानी मैया

एक समय था, जब सब लोग बाँस को जलाया करते थे। अपना अपमान देखकर बाँस को बहुत दुःख होता था। एक दिन वह भगवती दुर्गा के पास गया और हाथ जोड़कर बोला—"माता, मैं सबके काम आता हूँ। घर में लगकर वर्षा से सबको बचाता हूँ। लाठी बनकर शत्रुओं से रक्षा करता हूँ। फिर भी सब लोग मुझे जलाते हैं। यह अन्याय मेरे साथ हो रहा है। कृपा करके इसे रोकिये।

दुर्गा माता को बाँस पर दया आयी। वे बोलीं—"अच्छी बात है। मैं तुम्हारी रक्षा करूँगी। लेकिन तुम्हें मेरे मंदिर के पास खड़े रहकर द्वारपाल का काम करना पड़ेगा।"

बाँस ने प्रसन्न होकर द्वार-रक्षक के रूप में काम करना स्वीकार किया। दूसरे दिन सर्वत्र बीमारी फैल गयी और आकाशवाणी हुई —"सब लोग बाँस के पेड़ की पूजा करें। ऐसा करने से भगवती दुर्गा प्रकट होकर सबको दर्शन देंगी और फैलती हुई बीमारी को रोकेंगी। जो बाँस का पूजन न करेगा, उसके

कुल का नाश हो जावेगा।" आकाशवाणी सुनकर सब लोग घबड़ाये और जंगलों में जाकर बाँस के वृक्षों की पूजा करने लगे। प्रत्येक बाँस के पेड़ से दुर्गा माता प्रकट हुईं और बोलीं—"बाँस मेरा प्रिय वृक्ष है। जो इसे मेरे मंदिर के दरवाजे पर लगायेगा, उसे मैं अपना सच्चा भक्त समझूँगी। और मुँह माँगा वरदान भी दूँगी। किसी को भी बाँस नहीं जलाना चाहिए। जो इसे को जलायेगा, उसके सम्पूर्ण वंश का मैं निर्दय बनकर नाश कर दूँगी।" पूजा करते हुए लोगों ने बाँस लगाने और उसे न जलाने की प्रतिज्ञा की। दुर्गा माता बाँस के पेड़ में ही समाँ गयीं। आज भी यह विश्वास है कि जो व्यक्ति बाँस को जलाता है। उसके कुल का नाश हो जाता है। श्री दुर्गा के पूजन में जो गीत गाये जाते हैं, उनमें कहा जाता है—

"बँसिया के पौरा से निकली भवानी मैया,
लप-लप जीभ निकारै हो माय।

२२. क्रुद्ध नारद का शाप

एक बार कुबेर के दो पुत्र—नलकूबर और मणिग्रीव मदिरा पान करके किसी सरिता में कुछ सुन्दरियों के साथ क्रीड़ा कर रहे थे। समीप में ही तपोवन था, जहाँ महर्षि नारद तपस्या कर रहे थे। कुछ समय के बाद नारद ने ध्यान से अपने मन को हटाया और भ्रमणार्थ सरिता तट पर आये। मणिग्रीव तथा नल-कूबर को क्रीड़ा रत देखकर उन्हें क्रोध आगया। उन्होंने शाप दिया—"मूर्खो, तुम दोनों वृन्दावन में जाकर अर्जुन के वृक्ष हो जाओ।" विशेष अनुनय विनय करने पर महर्षि नारद ने कहा—"शाप तो असत्य नहीं हो सकता, फिर भी तुम्हारा उद्धार हो सकेगा। भगवान् कृष्ण जब तुम्हें उखाड़ेंगे, मेरे शाप से तुम मुक्त हो जाओगे। तब नारद जी के शाप से सन्तप्त होकर कुबेर के दोनों पुत्र वृन्दावन में अर्जुन वृक्ष के रूप में स्थिर हो गये। द्वापर में भगवान् कृष्ण ने अपनी बाल-लीलाएँ करते हुए इन्हें उखाड़ा और उद्धार करके इन दोनों वृक्षों को पूर्व रूप में कर दिया।
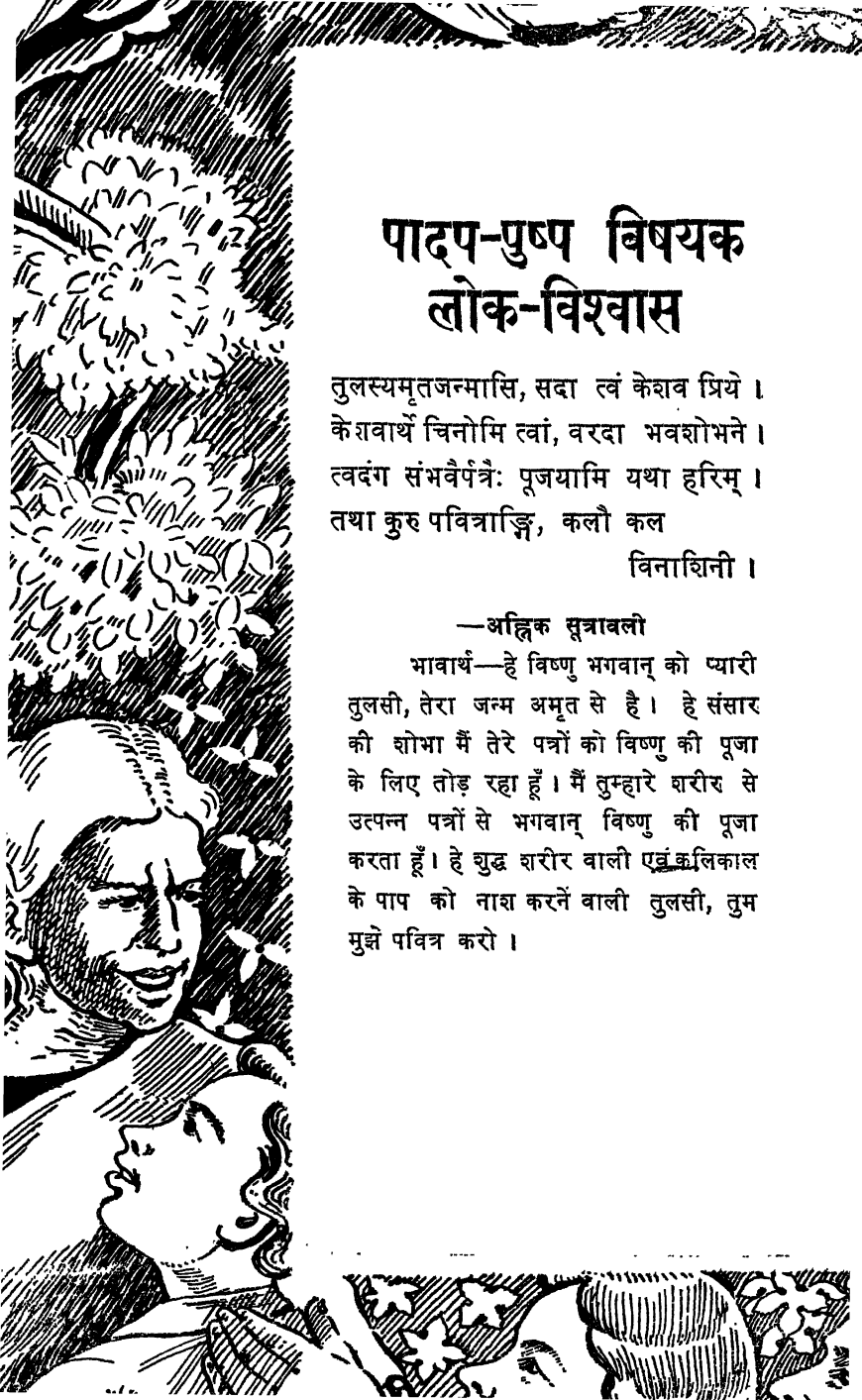
(२३) जब पलाश-पत्र पूड़ी बनते थे

कहते हैं पुरातन काल में पलाश-पत्र संध्या समय वन-यात्रियों के लिए पूड़ीं हो जाया करते थे। एक बार एक लालची यात्री बन में गया। संध्या समय उसने देखा—पलाश-पत्र गरम पूड़ियाँ बन गये। उसने बन से अधिक से

अधिक पूड़ी रूपी पलाश-पत्रों को एकत्र कर लिया। उसका विचार था कि किसी पुण्यात्मा के प्रभाव से कुछ क्षण के लिए ही ये पलाश-पत्र पूड़ियाँ बने हैं, अतएव चार-छः दिन के लिए तोड़कर रख लिया जाय। साथ ही आगामी दिनों में आने वाले यात्रियों से पूड़ी देकर अन्य आवश्यक वस्तुएँ भी सरलता से प्राप्त की जा सकेंगी।

रात्रि के समय सब के सो जाने पर वन-देवता यह देखने निकले कि किसी यात्री को कष्ट तो नहीं हुआ तब उन्हें ज्ञात हुआ कि एक यात्री पलाश-पत्र को पूड़ियों का व्यापार करना चाहता है। उसी समय से उन्होंने पलाश-पत्रों की पूड़ी बनने से रोक दिया, साथ ही यात्री द्वारा एकत्र की गयी पूड़ियाँ भी पलाश-पत्र हो गये।
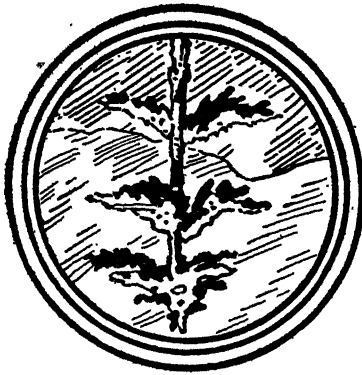
पादप-पुष्प विषयक लोक-विश्वास

तुलस्यमृतजन्मासि, सदा त्वं केशव प्रिये ।
केशवार्थे चिनोमि त्वां, वरदा भवशोभने ।
त्वदंग संभवैर्पत्रैः पूजयामि यथा हरिम् ।
तथा कुरु पवित्राङ्गि, कलौ कल
विनाशिनी ।

—अह्निक सूत्रावली

भावार्थ—हे विष्णु भगवान् को प्यारी तुलसी, तेरा जन्म अमृत से है। हे संसार की शोभा मैं तेरे पत्रों को विष्णु की पूजा के लिए तोड़ रहा हूँ। मैं तुम्हारे शरीर से उत्पन्न पत्रों से भगवान् विष्णु की पूजा करता हूँ। हे शुद्ध शरीर वाली एवं कलिकाल के पाप को नाश करनें वाली तुलसी, तुम मुझे पवित्र करो ।

लोक-विश्वास

हमारे लोक विश्वास अति प्राचीन है। कल्पित होने पर भी इनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। ये हमारे लिए पाँचवे वेद के समान ही पूज्य हैं। मानव सृष्टि के समय से ही ये विश्वास मानव-हृदय में आये हैं। विश्व में अनेक परिवर्तन हुए और हो रहे हैं फिर भी ये विश्वास अपरिवर्तित हैं। हमारी विचार-धारा को सुव्यवस्थित रखने में इन्होंने बहुत कुछ साथ दिया है। ये असंख्य हैं और विभिन्न भू-खंडों में अपनी पृथकता लिए हुए है। इनके आधार भी अनेक है। यहाँ वृक्ष विषयक कुछ लोक विश्वास दिये गये हैं। अनुशीलन करने पर इनका वैज्ञानिक महत्त्व भी ज्ञात हो सकता है।

१. समस्त वृक्षों पर देवता रहते हैं।

२. आम के पेड़ के नीचे पेशाब करने से कोढ़ हो जाता है।

३. नीम पर शीतला देवी का निवास है।

४. वेल-पत्र भगवान् शंकर का आहार है।

५. बाँस के जलाने से वंश-नाश हो जाता है।

६. आँवले के वृक्ष की पूजा करने से सब पापों का नाश हो जाता है।

७. भगवान् ब्रह्मा के प्रेमाश्रुओं से आँवले के वृक्ष की उत्पत्ति हुई है।

८. वृक्षों में सबसे पहले आँवले के पेड़ की उत्पति हुई है, इसीलिए इसे आदिरोह कहा जाता है।

९. आँवले के जल से स्नान करने वाला मानव लक्ष्मीपति होता है।

१०. आँवले की छाया में बैठकर पिण्डदान करने से पितरों को मोक्ष की प्राप्ति होती है।

११. घर में आँवले के रखने से भूत-प्रेत की बाधा नष्ट हो जाती है।

१२. कार्तिक मास में आँवले और तुलसी की माला पहनने से अनन्त पुण्य की प्राप्ति होती है।

(संक्षिप्त स्कंद पुराणा, कल्याणाङ्क)

१३. तुलसी का वन लगाने वाला यमराज से भी नहीं डरता।

१४. आँवले के फलों और तुलसी के पत्रों से मिश्रित जल से स्नान करने से गंगा-स्नान का पुण्य मिलता है।

प्रकृति के स्वच्छन्द प्रांगण में लहलहाते ये वृक्ष

१५. तुलसी दल मुख में लेकर जो प्राण त्याग करता है वह पाप-मुक्त होकर मोक्ष को प्राप्त होता है।

१६. तुलसी-मंजरी की पूजा करने से मुक्ति मिलती है।

१७. विल्व-पत्र, शमी पत्र, तथा चमेली-पत्र भगवान् को विशेष प्रिय हैं।

१८. विधि-पूर्वक पीपल के वृक्ष की पूजा करने से शनिदेव की कुदृष्टि शान्त हो जाती है।

१९. ज्येष्ठ की पूर्णिमा को वट वृक्ष की पूजा करने तथा उसे सूत से प्रदक्षिणा पूर्वक १०८ बार लपेटने से स्त्री को पति वियोग का दुःख सहन नहीं करना पड़ता। पूजन के समय निम्नस्थ श्लोक का पाठ आवश्यक है—

जगत्पूज्ये जगन्मातः सावित्री पतिदैवते।
पत्या सहावियोगं मे, बटस्थे कुरु ते नमः

—ना० पूर्व० १२४/११

'जगन्माता सावित्री ! तुम सम्पूर्ण जगत् के लिए पूजनीय तथा पति को ही इष्ट-देव मानने वाली पतिव्रता हो। वट वृक्ष पर निवास करने वाली देवि ! तुम ऐसी कृपा करो, जिससे मेरा अपने पति से नित्य संयोग बना रहे। कभी वियोग न हो। तुम्हें मेरा सादर नमस्कार है।

—संक्षिप्त नारद पुराण-कल्याणांक

२०. बबूल की जड़ को जल से सीचने से प्रेतबाधा नहीं सताती।

२१. शमी वृक्ष की पूजा करने से पाप का नाश होता है। इसकी पूजा करते समय इस श्लोक का मंत्रवत् जाप करते रहना चाहिए—

'शमी शमयते पापं,
शमी शत्रु विनाशिनी।
अर्जुनस्य धनुर्धारी,
रामस्य प्रिय वादिनी।

२२. आदि वासियों का विश्वास है कि पुत्र बिवाह के पूर्व बांस की पूजा करना आवश्यक है, ऐसा करने से बिवाह में किसी भी प्रकार की बाधाएँ नहीं आती हैं।

२३. आदिवासियों के विश्वासानुसार आम के पेड़ की पूजा मनोरथ को पूरा करती है।

२४. तिब्बत में पीपल का विशेष सम्मान है, इसके पास आकर यहाँ के निवासी मस्तक झुकाते हैं और सिर की टोपी उतार लेते हैं।

२५. सर्व प्रथम बसंतागमन के समय आम के बौर को हाथों में मलने से एक वर्ष तक बिच्छू के डंक का प्रभाव नहीं होता।

२६. संगीत-सम्राट् तानसेन की समाधि पर खड़ी हुई इमली के पत्तों को चबाने से आवाज़ बहुत मधुर (मीठी) हो जाती हैं।

२७. बाग़ में महान संत के आगमन से सब वृक्ष एक साथ फूलने लगते हैं।

२८. पुराने वृक्ष में भूत रहते हैं।

२९. औदिवासी लोग पुत्र-विवाह के पूर्व आम के पेड़ की पूजा करते हैं और दूल्हे से इस की सात परिक्रमा लगवाते हैं। उनका विश्वास है कि ऐसा करने से सुन्दर बहू मिलती है।

३०. स्वप्न में आम का पेड़ देखने से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

३१. पीपल की छाया में बैठने से विषम ज्वर शान्त हो जाता है।

३२. आक के अच्छे फूलने पर कोदौ की फसल अच्छी होती है।

३३. नीम के फूलने पर कपास की फसल बहुत अच्छी होती है।

३४. आम पर अच्छा बौर आने से यह आशा की जाती है कि धान की उपज अच्छी होगी।

३५. पलाश का न फूलना प्रकट करता है कि संसार अवर्षा से पीड़ित होगा।

३६. तिल का वृक्ष सुन्दरी के प्रेममय अवलोकन से पुष्पित हो जाता है।

३७. मन्दार कामिनी की रसीली वाणी को सुनकर फूल उठता है।

३८. रमणी के मृदु हास्य से चम्पा फूल उठती है।

३९. मौलसिरी का वृक्ष कामिनी की मुख-मदिरा से सिंचित होने पर पुष्पित हो जाता है।

४०. युवती के सुरभित श्वास के स्पर्श से आम पर बौर आ जाता है।

४१. यौवनोन्मत्ता रमणी के पदाघात से अशोक का पुष्पित होना संस्कृत कवियों ने बताया है।

४२. कर्णिकार वृक्ष सुन्दरी के नृत्य को देखकर फूल उठता है।

४३. देवदारु वृक्ष को भगवती पार्वती ने ही सबसे पहले लगाया था।

४४. आदिवासियों का विश्वास है कि अंजीर के पेड़ की पूजा करने से पुत्र की प्राप्ति होती है।

४५. पृथ्वी के सच्चे पुत्र वृक्ष ही हैं, इसलिए वृक्षों की पूजा करने से पृथ्वी माता प्रसन्न होती है।

४६. आदिवासियों का विश्वास है कि वृक्ष पर फटे-पुराने कपड़ों के लटकाने से सन्तान की प्राप्ति होती है।

४७. विशाल वृक्ष के नीचे खड़े होकर यदि रोगी-रोग-निवृत्ति के लिए प्रार्थना करता है तो रोग नष्ट हो जाता है। आदिवासी वृक्षों की पूजा करके अनेक रोगों से मुक्ति पाते हैं।

४८. महाभारत में बताया गया है कि संसार की सृष्टि करने के पश्चात् पितामह ने शाल्मली वृक्ष के नीचे विश्राम किया था।×

४९. कल्पवृक्ष, परिजात, आम्र और सन्तान नामक वृक्षों की उत्पत्ति क्षीर सागर से हुई है।

५०. कचनार के फूलों से यदि भगवान् महेश्वर की पूजा की जाय, तो वे शीघ्र प्रसन्न होते हैं।

५१. पीपल में ब्रह्म राक्षस का निवास है।

५२. बरगद के वृक्ष पर ब्रह्म राक्षस रहा करता है।

५३. अपामार्ग (चिच्चिड़ा) को मस्तक पर घुमाने से पापों का नाश होता है। घुमाते समय निम्नस्थ श्लोक पढ़ना चाहिए—

सीतालोष्ठसमायुक्त सकंठ कदलान्वितः
हर पापमपामार्ग भ्राम्यमाणः पुनः धुनः।

—जोते हुए खेत के ढेले से युक्त और कण्टक विशिष्ट पत्तों से सुशोभित अपामार्ग! तुम बार बार घुमाये जाने पर मेरे पापों को हर लो।

—**संक्षिप्त स्कंध-पुराण, पृष्ठ २३३**

५४. यमद्वितीया का व्रत गूलर के वृक्ष के नीचे बैठकर करना चाहिए।

×In the Mahabharat it is related that Pitamaha after having created the world, reposed under the tree Salmuli.

(Some Beautiful Indian trees P. 12)

५५. अशोक वृक्ष की पूजा करने से सब प्रकार का संताप दूर हो जाता है। यह प्रेम का प्रतीक है और कामदेव को अत्यन्त प्रिय है। बर्मा निवासी इस वृक्ष को पावन मानकर पूजते हैं। अशोक सतीत्व-रक्षक है।+

५६. चमेली (Pagoda tree) का बीज सर्प दंश की उत्तम औषधि है। *

५७. पलाश के विषय में यह कहा जाता है कि इसकी उत्पत्ति सोमरस को पिये हुए बाज़ के पंख से हुई है। इसलिए पलाश को पीयूष से समन्वित माना जाता है उपनयन संस्कार में पलाश-दण्ड ब्रह्मचारी (वटुक) को दिया जाता है। पलाश-पुष्प भगवान् की पूजा में समर्पित किया जाता है। इसकी महिमा वेदों में भी वर्णित है। पलाश के तीन पत्तों में त्रिदेव की कल्पना की गयी है—मध्य के पत्र में विष्णु, बाँये में ब्रह्मा और दाहिने में शिव का निवास है।×

+The Asoka is one of the sacred trees of the Hindus which they are orderd in the Urapaj to worship on the 13th day of the month Chaitra *i.e.* December 27....

The tree is the Symbol of love and is dedicated to kama, the Indian god of love. Like the Agnus Castu it is believed to have a certain charm in preserving chastily, ... Mas on (Burma and its people) says the tree is held sacred among the Burmans because undef it Gautam Buddha was born and immediatly after his birth delivered his first address.

(*Some beautiful Indian trees P. 96*)

*It is generally admitted that the seed of the Pagoda tree is the antidote Par excellence in cases of cobra bites. And the proof there of is that the tree rarely seeds...and that became cobra intentionally destroy the pods.

×The tree is sacred to the Moon, and is said to have sprung from the feathers of a felcon imbud with the Soma the beverage of the gods. It is supposed to be thus imbued with the immortalization Soma......This is trifoliate the middle leaflet is supposed to represent Vishnu, the left Brahma and the right Shiva.

(*Some beautisul Indian Trees P. 18*)

५८. मैसूर निवासी अमलतास के वृक्ष को धार्मिक भावना से पूजते है।

५९. मंदार वृक्ष इन्द्र के उपवन से ही लाया गया है।

६०. चम्पा के पूल पर भ्रमर नहीं जाता है।

६१. एक ऋषि के शाप के कारण करील पत्र-विहीन हुआ है।

६२. व्रज के समस्त वृक्षों के पत्तों से सदैव 'जय राधा कृष्ण की' ध्वनि निकलती रहती है।

६३. नारियल के पत्तों की जलती हुई मशालों कें दिखाने से फल न देनेवाले वृक्ष भी फल देने लगते हैं।

६४. छोटा नागपुर के आदिवासी (जन-जाति) साल वृक्ष को देवता मानकर पूजते हैं।

६५. पलाश में ब्रह्मदेव का निवास है।

६६. बेल वृक्ष में भगवान् शंकर निवास करते हैं।

६७. अकौवे में श्री गणेश जी रहते हैं।

६८. अर्क (अकौवे) की पूजा करने से भगवान् सूर्य प्रसन्न होते हैं।

६९. ऊमर में श्री दत्तात्रेय निवास करते हैं।

७०. भगवती पार्वती ने केला के पेड़ को अपना निवास-स्थल बनाया है।

७१. इमली के वृक्ष में भूत रहते हैं।

७२. बकावली के फूल को पानी के साथ पीसकर यदि आँख में लगाया जाय तो अंधे को भी दीखने लगता है।

७३. चंपा के वृक्ष में तक्षक रहता।

७४. ईसाई ओक नामक वृक्ष को पूज्य मानकर पूजते हैं।

७५. लक्ष्मी का निवास-स्थल कमल है।

७६. कमल भगवान् विष्णु की नाभि से उत्पन्न हुआ है।

७७. कनेर (करवीर) के वृक्ष में भगवान् गणेश रहा करते है।

७८. मुसलमानों की दृष्टि से खजूर का दरख्त पाक है।

७९. मुसलमान जैतून को इज्जत के साथ मानते हैं।

८०. मौलसिरी का पेड़ पाक है इसीलिए मसज्दि के पास लगाया जाता है।

८१. वृक्षों में समिधा के लिए बरगद, गूलर, पीपल, और पाकड़ की लकड़ी कों ही शुद्ध माना गया है।

८२. बौद्ध बोधि-वृक्ष को पूजनीय मानते हैं।

८३. भगवती दुर्गा का क्रोध नीम के वृक्ष की छाया में शान्त हो जाता है।

८४. बाँस की लड़की को हाथ में लेकर यदि कन्याएँ 'बरस-त्ररस' चिल्लाएँ तो वर्षा हो जाती है।

८५. मकान के दरवाजे के सामने बेरी का दरख्त लगाने से मकान का स्वामी गरीब हो जाता है।

८६ देवालय के समीप पीपल लगाने से पुण्य-लाभ होता है।

८७. कहा जाता है कि एक समय सूर्य की पुत्री जादूगरनी से बचने के लिए कमल बनी, जिसे उसने (जादूगरनी ने) जला दिया। इस जले हुए कमल की राख से आम-वृक्ष उत्पन्न हुआ।

८८. सुन्दर पेड़ कुदृष्ट पड़ने से सूख जाता है।

८९. परियों के रसीले नृत्य को देखकर प्रत्येक पेड़ मस्त होकर झूमने लगता है।

९०. वृक्ष भी शाप देते हैं। कुपित वृक्ष काँपने लगते है।

९१. कहा जाता है कि एक भाई ने अपनी बहन को मारकर गाड़ दिया था, जिस जगह पर बहन गाड़ी गयी थी उसी स्थान पर केतकी का वृक्ष उगा था। आज भी केतकी अपने भाई की दुष्टता की कहानी कहती रहती है।

९२. करमा नृत्य को नाचने वाले आदिवासी करमा वृक्ष को करमदेवता मानकर पूजते हैं।

९३. गंधर्व वृक्षों के अधिष्ठाता हैं।

९४. कुरवक स्त्रियों के आलिंगन से पुष्पित हो जाता है।+

९५. नमेरु वृक्ष सुन्दरी के मधुर गान को सुनकर फूल उठता है।

९६. प्रियंगु का वृक्ष सुन्दरी के स्पर्श से ही विकसित हो जाता है।+

९७. मन्दार रमणी के नर्म-वाक्य से पुष्पित होता है।

९८. हरड़े के वृक्ष की उत्पत्ति अमृत से हुई हैं।*

९९. कल्प वृक्ष मनोकामना की पूर्ति करता है।

१००. भगवती और लक्ष्मी के आँसुओं से आँवले की उत्पत्ति हुई है।

+ हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृष्ठ २३९ २४८, २५०,

* भावप्रकाश—पृष्ठ १३२,

१०१. कभी नष्ट न होने से वट वृक्ष अमर है ।+

१०२. आदिवासियों का विश्वास है कि साज वृक्ष के ऊपर वन के महादेवता, बड़ा देव का निवास है ।*

१०३. सेंमर वृक्ष में राक्षस रहता है। इसलिए इस पेड़ के समीप घर बनाना ठीक नहीं है ।

१०४. वट वृक्ष भगवान् श्री कृष्ण के अंग से प्रकट हुआ है ।

१०५. वट वृक्ष की छाया में पहुँच जाने पर मनुष्य ब्रह्म-हत्या से भी मुक्त हो जाता है ।×

१०६. प्रलय-काल में भगवान् अक्षय-वट के पत्ते पर शयन करते हैं ।

१०७. बिरिया (बेर के पेड़) पर पटका माई रहती हैं। इस वृक्ष पर फटे-पुराने कपड़े टाँगने से सुन्दर कपड़ों की प्राप्ति होती है ।

१०८. मुनगा के पेड़ पर भवानी माता रहती हैं ।

१०९. तुलसी के बिरवा की जड़ को गले में बाँधने से भूत नहीं लगता ।

११०. श्मशान-भूमि के वृक्ष पर भूत रहते हैं, इसलिए इनको काटने वाले भूत-प्रेतों से सताये जाते हैं ।

१११. नदी के किनारे पर खड़े हुए वृक्षों पर जलदेवता का निवास है ।

११२. आक की जड़ में पानी डालने से भगवान् सूर्य प्रसन्न होते हैं ।

+ Epics, Myths and legends of India. p. 90.

* Introduction Songs of the Forest. p. 37

× नारद पुराण

११३. जामुन के पेड़ को लगाने से जमुना देवी (यमुना नदी) का वरदान प्राप्त होता है।

११४. पीपल में भगवान् शंकर के गणों (भूत, प्रेत, पिशाच आदि) का का निवास है।

११५. पीपल के पेड़ पर जल भरे घड़े टाँगने से मृत आत्मा की प्यास शान्त होती है।

११६. अर्जुन वृक्ष की छाया में रहने से हृदय-रोग शान्त होता है।

११७. कल्पवृक्ष समस्त मनोकामनाओं की पूर्ति करता है।

११८. रात में वृक्ष सोते हैं।

११९. चमेली के वृक्ष के नीचे जगदम्बा सोती हैं।

१२०. खैर के पेड़ की उत्पत्ति भगवान् शंकर की मुसकान से हुई है।

१२१. कुछ आदिवासियों का विश्वास है कि खैर के पेड़ पर खैरा माई रहती हैं।

१२२. चम्पा के पेड़ को राधिका जी ने लगाया है।

१२३. सिरस के वृक्ष पर चढ़ने वाला पागल हो जाता है।

१२४. अशोक वृक्ष पर कन्दर्प-देवता का निवास है।

१२५. अशोक का लाल फूल स्मर-वर्धक होता है।

१२६. चैत्र शुक्ल अष्टमी को व्रत करने और अशोक की आठ पत्तियों के भक्षण से स्त्री की सन्तान-कामना फलवती होती है।

—अशोक के फूल, लेखक, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी

१२७. यदि गर्भवती स्वप्न में पुष्पित अशोक को देखे तो वह सुन्दर और सुशील पुत्र की माता बनेगी।

१२८. स्वप्न में सूखे पेड़ को देखना अशुभ है।

१२९. पीपल की लकड़ी को कान में डालने से सर्प-विष का शमन हो जाता है।

१३०. श्मशान-भूमि में पीपल के वृक्ष को लगाने वाला स्वर्ग में जाता है।

१३१. प्रातःकाल पीपल की जड़ में पानी डालने से स्त्री पुत्रवती बनती है।

१३२. केले (वृक्ष) की पूजा करने से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

१३३. चिचरी पौधे की जड़ से १२ वर्ष तक मुख-शुद्धि [दतौन के रूप में] करने से वचन-सिद्धि प्राप्त होती है।

१३४. क्वाँर मास में गुलाबाँस की पूजा करने से अकाल मृत्यु से मरे हुए पूर्वजों की गति में सुधार होता है।

१३५. भादों में काँस की पूजा करने से बन्ध्या भी पुत्रवती होती है।

१३६. रविवार को नारियल के फल से यदि पूजा की जाय तो स्त्री की पुत्र कामना पूर्ण होती है।

१३७. ब्राह्मी लता की जल, चन्दन, अक्षतादि से यथाविधि पूजा करने से मंद-बुद्धि मानव प्रकाण्ड विद्वान् बन जाता है।

१३८. बाँस की पूजा करने से प्रेत सिद्धि होती है।

१३९. महुआ वृक्ष की पूजा से कन्या शिव के समान योग्य वर प्राप्त करती है।

१४०. रविवार को बहेड़े के वृक्ष की पूजा से मन्दाग्नि रोग नष्ट हो जाता है।

१४१. गूलर के वृक्ष की पूजा से वैवाहिक कार्य निर्विघ्न समाप्त होता है।

१४२. रविवार को महुए के वृक्ष के तने पर सातबार कच्चा सूत लपेटने से वात रोग नष्ट हो जाता है।

१४३. बुधवार को गुड़ तथा चने की दाल से (सूर्योदय के पूर्व) गूलर-वृक्ष की पूजा करने से मनोकामना सिद्ध होती है।

१४४. गुड़हर का फूल घर में रहने से पति-पत्नी में नहीं पटती।

पादप-पुष्प-परिचय

'हरि अनंत हरि कथा अनन्ता' के ही समान वृक्ष-पुष्प अनन्त हैं और इन की जीवन-गाथाएँ भी अपरिमित हैं। फिर भी कतिपय वृक्ष-पुष्पों का यहाँ संक्षिप परिचय दिया जा रहा है।

परिचय

बबूल

यह एक साधारण ऊँचाई का वृक्ष है। इसकी खुरदरी छाल गहरे रंग की होती है। इसके नुकीले काँटे सबको अप्रिय लगते हैं। यह वृक्ष कभी शीघ्र और कभी विलंब से पुष्पित होता है। सामान्यतः वर्षा ऋतु (जून-अक्टूबर) में इस पर पुष्प आते हैं। जनवरी मास में भी इसे पुष्पित होते देखा गया है। इसका फल रूँयेदार और भूरे रंग का होता है जो उत्तरी भारत में अप्रैल-जून तक परिपक्व हो जाता है। दक्षिण-भारत में इसका फल उक्त समय के पूर्व भी पक जाता है। यह सदाहरित वृक्ष है। भारत के प्रायः समस्त शुष्क क्षेत्रों में यह वृक्ष विशेष रूप से पाया जाता है। जहाँ वर्षा-मान २० इंच से कम है, वहाँ इस पेड़ की वृद्धि कुंठित हो जाती है। ऐसे न्यून-वृष्टि वाले क्षेत्रों यह वृक्ष सरिताओं तथा नालों के किनारों (आर्द्र, गहरी एवं उर्वरा भूमि) पर समुचित रूप से पनपता है। साधारणतः बबूल ५० इंच तक वर्ष होने वाले क्षेत्र में लगाया जा सकता है। उत्तर प्रदेश के दक्षिण कोने में मद्रास, हैदराबाद, मैसूर, ट्रावनकोर आदि के शुष्क क्षेत्रों में बरार के मैदानों में, मध्यप्रदेश के बालाघाट में एवं बम्बई प्रान्त के शुष्क क्षेत्रों के पठारों पर यह वृक्ष विशेष रूप से पाया जाता है।

यह वृक्ष बहुत उपयोगी है। चमड़े के पकाने में इसकी छाल तथा फल का उपयोग होता है। अनेक औषधियों के निर्माण में इसका बल्कल आवश्यक माना गया है। बकरी, भेड़ तथा अन्य पालतू पशु इसकी फलियों से अपनी भूख शान्त करते हैं। इमारती लकड़ी के रूप में इसका काष्ठ विशेष उपयोगी सिद्ध हुआ है। कृषि के अनेक उपकरण बबूल की लकड़ी से बनाए जाते हैं। बैल-गाड़ी के पहियों का निर्माण इसी के काष्ठ से होता है। ईंधन के रूप में भी इसकी शुष्क लकड़ी काम में आती है। इस वृक्ष की शाखाएँ तथा उपशाखाएँ बाड़ी लगाने में अधिक उपयोगी हैं। इसकी छोटी-छोटी टहनियों के द्वारा दातुनें बनायी जाती हैं, जिन से दाँतों की अच्छी सफाई होती है। बबूल की गोंद का उपयोग पुस्तकों की जिल्दसाजी में चिरकाल से होता आ रहा है। प्रसूता के लिए बनाए जाने वाले मोदकों में बबूल की गोंद का प्रयोग एवं महत्त्व उल्लेखनीय है।

कदम्ब

यह एक बहुत ऊँचा वृक्ष होता है। इसकी शाखाएँ घेरे में फैली हुई होती हैं। सदापर्णी न होने के कारण यह वृक्ष अपनी हरीतिमा में स्वयं अनेक परिवर्तन देखता रहता है। युवावस्था में इसका बल्कल भूरे रंग का और चिकना होता है किन्तु आयु के साथ-साथ यह रंग गहरा होता जाता है।

यह आर्द्र एवं उष्ण प्रदेशों में पाया जाता है। यह दलदल पूर्ण भूमि पर उगता है। सरिताओं के तटों पर बहकर आई हुई मिट्टी में यह वृक्ष खूब फूलना-फलता है। हिमालय की तराइयों में बंगाल, आसाम, छोटा नागपुर में (सिंगभूमि की घाटियों में) उत्तरी तथा भारत की पश्चिमी सीमा पर, उत्तरी कनाड़ा से लेकर दक्षिण ट्रावनकोर तक यह वृक्ष पाया जाता है। इसके प्राकृतावास (habitant) में वर्षमान ६० इंच से २०० इंच तक।

इसका पुष्पन-काल मई से जुलाई तक है। जनवरी तथा फरवरी में यह वृक्ष फलित होता है। नारंगी रंग के से पीले इसके फल गोल और सुन्दर होते हैं, जो जनवरी-फरवरी में परिपक्व होकर भूमि पर गिर जाते हैं। कदंब-पुष्पों की मीठी सुगंधि विशेष मनोमुग्धकारी होती है।

इस वृक्ष की लकड़ी का रंग कुछ पीला और कुछ सफेद होता है। विशेष टिकाऊ और मजबूत न होने के कारण इसका काष्ठ चाय के डिब्बों के निर्माण में उपयोगी समझा गया है। छोटी-छोटी नौकाएँ भी इससे बनायी जाती हैं।

नीम

यह सदापर्णी (Ever green) वृक्ष कहीं साधारण ऊँचा और कहीं विशेष ऊँचा होता है। इसका गोलाकार छत्र सुन्दर लगता है। नीम का बल्कल हल्का और गहरे भूरे रंग का होता है। यह मार्च से मई का पुष्पित होकर सर्वत्र मधु-गंध फैलाता है। इसके छोटे और सफेद पुष्प बड़े सलोने लगते हैं। जून-अगस्त में नीम के फल पकते हैं, जिन्हें खाकर हमारे ग्राम-बाल अपनी मिठाई की इच्छा को पूर्ण करलेते हैं। सब ऋतु-परिवर्तनों को साहस के साथ सहनेवाला यह कठोर नीम-वृक्ष सभी प्रकार की भूमि पर उगता रहता है। परन्तु काली मिट्टी पर इस की बाढ़ अच्छी होती है। चिकनी मिट्टी में भी यह वृक्ष पनपता रहता है। अन्य वृक्षों की तुलना में यह पेड़ शुष्क, कंकरीली, और पहाड़ी भूमि को भी अपनी जन्म-स्थली विशेष सुगमता से बनालेता है।

भारत के सम तथा शुष्क-प्रदेशों में यह वृक्ष अच्छी तरह से फूलता-फलता है। १८ से ४५ इंच तक वर्षामान वाले भूखण्ड नीम के लिए हितकर हैं और इन स्थलों में यह सर्वत्र दृष्टिगोचर होता रहता है। अत्यधिक शीत इस पेड़ के लिए घातक माना गया है।

इसका काष्ठ मजबूत और लाल रंग का होता है। टिकाऊ होने के कारण नीम की लकड़ी गृह-निर्माण तथा अन्य उपयोगी काष्ठ-वस्तुओं की सृष्ट में अपनायी जाती है। इस वृक्ष की पत्तियाँ कीट-नाशक होती हैं तथा इसकी गोंद से औषधियाँ बनती है। बल्कल ज्वर-विनाश में विशेष लाभदायक है। नीम के बीजों से एक प्रकार का तैल निकाला जाता है जो चर्म रोगों की अव्यर्थ औषिध है। गरीब मनुष्य इस के तैल को जलाकर अपने घरों को प्रकाशित करते हैं। नीम की सूखी पत्तियों को जलाकर विषैले कीड़ों को भगाया और मारा जाता है। नीम की खली खाद-रूप में अधिक लाभदायक है। ग्राम निवासी तो इस वृक्ष को वैद्य-रूप मानते हैं। कहा जाता है कि सब प्रकार के रोगों को नष्ट करने में नीम समर्थ है।

पलाश

यह साधारण ऊँचाई का वृक्ष होता है। सदैव हरित न होने से कभी-कभी यह पेड़ पत्र-विहीन हो जाता है। इसका स्कंध और शाखाएँ टेढ़ी होती हैं। अंग्रेजी में इस वृक्ष को बन की आग (Flames of the forest) कहते हैं। भारत के अति शुष्क तथा उष्ण प्रदेशों के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में यह अधिक संख्या में पाया जाता है। घास के खुले मैदानों में इसकी उत्पत्ति उल्लेखनीय होती है। दलदल-प्रपूरित क्षेत्र, काली मिट्टी एवं क्षार-संयुक्त स्थल, जो प्रायः अन्य वृक्ष के लिए अनुपयोगी माने जाते हैं, पलाश के लिए सुखद एवं पोषक हैं। मध्यप्रदेश में पलाश परित्यक्त भूमि में भी पर्याप्त मात्रा में प्राप्त है।

जनवरी मास के प्रारंभ होते ही इस पेड़ पर कलियाँ दिखाई देने लगती हैं और फरवरी-मार्च में तो सम्पूर्ण वृक्ष पुष्पों की लालिमा से लाल हो जाता है। कुछ समय के बाद ये लाल फूल हरे रंग की फलियों में परिणत हो जाते हैं। दो-तीन इंच लम्बी ये भूरे रंग की (परिपक्व होने पर) फलियाँ ४ से ९ इंच तक बढ़ जाती हैं।

पलाश के फूलों से एक प्रकार का आकर्षक पीला रंग बनता है। इस पेड़ पर लाख के कीटाणुओं को पाला जाता है तथा इसके बल्कल के काटने पर एक प्रकार

का रस निकलता है जो औषधि के काम में आता है। पलास के छिलके से रस्सी बनती है और इसके पत्तों को पशु खाते हैं। पत्तलों के रूप में ढाक के पत्र आज भी प्रयोग में लाए जाते हैं। ऋषि तो पलाश पत्र पर ही भोजन करते हैं। इस वृक्ष की लकड़ी टिकाऊ न होने से प्रकाष्ठ (timber) के रूप में तो व्यावहृत नहीं होती है लेकिन यह उपयुक्त ईंधन है।

आम

यह एक सदाहरित (ever green) ऊँचा वृक्ष है। इसका घना छत्र और हरे पल्लव सबके लिए आकर्षक हैं। जनवरी-मार्च इसके पुष्पित होने के मास हैं तथा अप्रैल एवं जौलाई के बीच में यह फल-युक्त होता है। विशेष आर्द्र भूमि पर ही वृक्ष बढ़ता है। आम की शीतल छाया अधिक सुखद मानी गयी है। दक्षिण-भारत में यह वृक्ष जनवरी से पुष्पित होता हुआ मार्च तक अपने रसीले बौर से धरा को सुरभित करता है। अप्रैल से जौलाई तक इसके फल पकते रहते हैं। उत्तर भारत में यह आम्रतरु फरवरी से अप्रैल तक पुष्पित होता है जून-जौलाई में इसके फल पक जाते हैं। हल्के पीत वर्ण वाले इसके गुच्छेदार पुष्प अधिक सुगंधित होते हैं। रसीले आम किसको प्रिय नहीं लगते ? रसाल देवताओं को भी लुभाते हैं।

भारत के समस्त भागों में यह वृक्ष पाया जाता है। भारतीय समाज में आम के फल, पत्र एवं छाया का विशेष महत्त्व और उपभोग होता है। स्थायी न होने के कारण इस वृक्ष का काष्ठ चाय-पेटियों के निर्माण तथा अन्य सामान्य कार्यों में लगाया जाता है। कहा जाता है कि आम के बौर को हथेली में मलने से बिच्छू के डंक का असर नहीं होता।

आँवला

यह साधारण ऊँचाई का वृक्ष है। इसका बल्कल चिकना और भूरा होता है। इसकी छोटी-छोटी पत्तियाँ विशेष हरी नहीं होती हैं। मार्च से मई तक इस पर पीले और छोटे पुष्प प्रकट होते रहते हैं तथा नवम्बर से फरवरी तक फल पकते हैं। फलों के परिपक्व होने में कभी-कभी विलम्ब भी हो जाता है। भारत के विशेष भागों में यह वृक्ष सुगमता से उगाया जा सकता है। लेकिन रुक्ष भू-खण्ड इसके लिए उपयुक्त नहीं है। इसका काष्ठ लाल रंग का और कठोर होता है। इससे कृषि के अनेक उपकरण बनाये जाते हैं। अन्य कार्यों में भी इसकी लकड़ी का उपयोग होता है। आँवले का अचार स्वास्थ्यप्रद एवं स्वादिष्ट होता है। औषधियों में आँवले का प्रयोग विभिन्न रूपों में किया जाता है।

चम्पा

चम्पा का सुन्दर, लम्बा तथा सदाहरित वृक्ष मंदिरों के समीप में विशेष रूप से पाया जाता है। इसके सुगंधित पुष्प पूजन में काम आते हैं। भारत के बहुभाग में यह सुन्दर पादप प्रिय बन चुका है। इसका बल्कल चिकना तथा हल्का भूरा होता है। चम्पा वृक्ष पर सुरभित पीत-पुष्प ग्रीष्म एवं पावस ऋतुओं में प्रकट होते हैं और अगस्त के लगभग फल पक चुकते हैं। कारण विशेष से कभी विलम्ब भी हो जाता है। बीजों में सचिक्कणता रहती है।

चम्पा का पेड़ आद्र जलवायु में खूब फूलता फलता है। जिस भू-खण्ड का वर्षा मान ९० इंच से अधिक (प्रति वर्ष) है, वहाँ यह वृक्ष सामान्यत: उगता और बहुत समय तक रहता भी है।

भारत में इस प्रकार के स्थल बहुत कम हैं, फिर भी यह विटप भारत-भूमि के प्रत्येक भाग में लगाया जाता है। इसका काष्ठ बहुत स्थायी होता है। बंगाल में इसको ग्रह-निर्माण-सामग्री के रूप में अपनाया जाता है। इसके तख्ते भी उपयोगी सिद्ध हुए हैं। अन्यत्र इससे गाड़ियाँ बनायी जाती हैं। चम्पा की लकड़ी के गुरिये बनाए जाते है और हरिद्वार में यात्री इनके हार को पहनकर अपनी धार्मिक श्रद्धा का परिचय देते हैं।

अशोक

यह एक साधारण ऊँचाई का वृक्ष है। इसकी हरीतिमा सदैव लुभावनी होती है। सामान्यत: इस का छत्र विशेष घना नहीं होता। सदा हरित अशोक ३० फीट तक ऊँचे देखे गए हैं। इसके पुष्पों की मधुर सौरभ पर संपूर्ण विश्व मुग्ध रहता है। मार्च में इसके फूल बड़े-बड़े गुच्छों में फूलते हैं। प्रथम वे नारंगी से पीले होते हैं लेकिन शनै: शनै: वे रक्त-वर्ण के हो जाते हैं। अशोक के फूल मई-जून में प्राप्त होने लगते हैं। हिन्दू एवं बौद्ध इस वृक्ष को पवित्र मानते हैं तथा इसके पुष्पों को धार्मिक समारोहों में काम में लाते हैं। सरिताओं के तटों पर अशोक अधिक देखे जाते हैं। भारतवर्ष के शहरों में यह (avenue tree) के रूप में लगाया जाता है।

अशोक के सुन्दर पुष्पों का रसमय वर्णन—संस्कृत-साहित्य में विशेष रूप से हुआ है।

परिचय

अमलतास

यह साधारण वृक्ष होता है। न यह सदा हरित है और न इसका छत्र घनी छाया प्रदान करने में समर्थ है। इसका बल्कल भूरा एवं हल्के हरे रंग का होता है। ग्रीष्म काल में यह तरु दूर से ही पहचाना जा सकता है, जब इसमें पीले रंग के चमकीले फूल आ जाते हैं। नूतन पल्लवों से सुसज्जित होकर अमलतास-वृक्ष अप्रैल से जून तक पुष्पित होता रहता है, परन्तु कुछ शुष्क प्रदेशों में इसका सितम्वर मास में भी फूलना आश्चर्य की बात नहीं है। इसके फल लम्बे और गोलाकार होते हैं जो परिपक्व होकर दिसम्बर से अप्रैल तक शाखाओं पर झूलते रहते हैं।

२० इंच से १२० इंच तक के वर्षामान वाले प्रदेशों में अमलतास का वृक्ष खूब उगता है। सामान्य भूमि पर भी यह तरु अपने जीवन को सँभाल लेता है। हिमालय की बाहरी तराई में (४ हजार फीट की ऊँचाई तक) भी यह पेड़ पाया जाता है।

शोभा-वृद्धि के लिए अमलतास को लोग अधिक लगाते हैं। इसका काष्ठ कठोर और स्थायी होता है, जिसका प्रयोग ग्रामों में घर के कामों में किया जाता है। कभी-कभी इस वृक्ष के वल्कल को चमड़े की पकाई में उपयोगी माना गया है। मल-प्रवाहक औषधियों में इस वृक्ष के फलों का उपयोग होता है।

शीशम

यह एक ऊँचा वृक्ष है। इसका छत्र सघन न होकर कुछ फैला हुआ रहता है तथा बल्कल मोटा और भूरे रंग का होता है शीशम उत्तर भारत का पेड़ है। मार्च अथवा अप्रैल में इस पर पीले पुष्प आते हैं और फलियों का पकना दिसम्बर के अन्त से प्रारंभ होकर फरवरी तक चालू रहता है। शीशम का
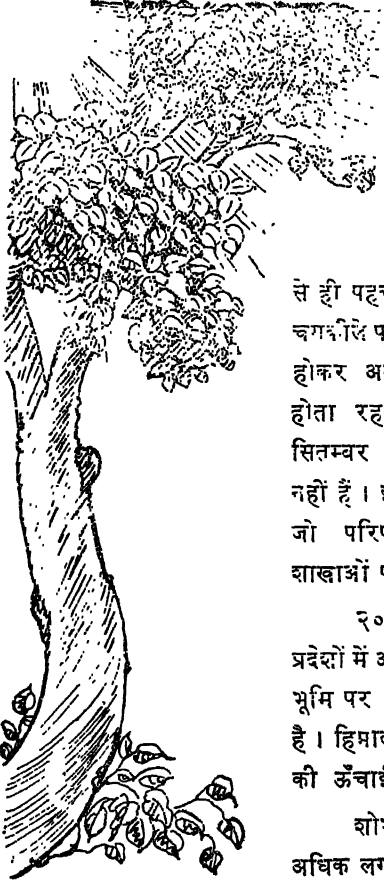
वृक्ष मुलायम भूमि (acrated soil) में अच्छी तरह बढ़ता है, तथा कठोर धरती में इसकी बाढ़ रुक जाती है। नालों तथा नए बाँधों के समीप यह पेड़ सुगमता से लगाया जा सकता है, जहाँ इसकी वृद्धि पर्याप्त मात्रा में होती है। ४ हज़ार फीट की ऊँचाई तक हिमालय की घाटियों, आसाम, सरिताओं के समीपस्थ तटों एवं उत्तरी भारत के मैदानों में यह पेड़ उगाया जा सकता है।

शीशम का काष्ठ, अति कठोर, स्थायी तथा मजबूत होता है और मेज-कुर्सी, घोड़ा-बैल-गाड़ी, तोप-वाहिका एवं गृह-निर्माण विषयक सामग्री इससे निर्मित होती है। शीघ्र बढ़ने वाला यह पथ-तट-तरु बहुत सुहावना लगता है। इसकी शीतल छाया ग्रीष्म ऋतु में पथिकों की थकावट को दूर करती है और आगे बढ़ने का साहस प्रदान कर मंजिल की समीपता का संकेत करती रहती है। शीशम-काष्ठ-निर्मित सामग्री बहुत सुन्दर आकर्षक, स्थायी और मूल्यवान होती है।

सेमल

यह एक ऊँचा वृक्ष होता है, जिसका स्कंध सीधा और शाखाएँ भूमि के समानान्तर फैली हुई होती हैं। गोल आकृति में उगता हुआ यह वृक्ष, अपनी किशोरावस्था में कंटकों से परिपूर्ण रहता है, लेकिन युवा होने पर इसके काँटे दूर-दूर हो जाते हैं। प्रायः सेमल का स्कंध पोला होता है। यों तो यह वृक्ष विभिन्न तापमान एवं वर्षामान के क्षेत्रों में उत्पन्न होता रहता है, फिर भी इसके लिए विशेष उपयुक्त स्थल आर्द्रता लिए हुए उष्ण कटिबंध है। सरिता तट और सम-तल-भूमि पर सेमल फूलता-फलता है। दल-दली धरती पर उगने पर भी इसकी बाढ़ कुंठित हो जाती है। इस की कलियाँ गोलाकार गहरे भूरे रंग की होती हैं जो दिसम्बर में दिखायी देने लगती हैं। जनवरी एवं फरवरी में ये ही (कलियाँ) लाल फूलों में परिणत होकर सुन्दर दृश्य उपस्थित कर देती हैं। शीघ्रता के साथ ये पुष्प फलों में बदल जाते हैं जो मार्च-मई तक परिपक्व होते हैं। यदि पके हुए फलों को वृक्ष पर ही रहने दिया जाय तो वायु इनकी रुई तथा बीजों को उड़ा ले जाती है।

सेमल का काष्ठ सफेद, हल्का और कोमल होता है। चाय के डिब्बे इससे बनाए जाते हैं तथा दियासलाई की डिबियाँ भी इससे बनायी जाती हैं। यों तो यह काष्ठ स्थायी नहीं हैं, फिर भी जल के भीतर यह बहुत समय तक टिक

सकता है इसीलिए कूपों की भीतरी दीवाल बनाते समय इसका प्रयोग किया जाता है। इस वृक्ष की रुई विशेष कोमल होती है, अतएव तकियों एवं रजाइयों के भरने में इसका उपयोग होता है। सेमल की जड़ का आयुर्वेद में महत्त्व बताया गया है और इससे कई औषधियाँ भी बनायी जाती हैं। इसकी कलियों को पकाकर शाक के रूप में खाया जाता है।

वट

यह सदा हरित बहुत बड़ा वृक्ष होता है, जिसकी ऊँचाई ६०-७० हाथ तक देखी गयी है। वट की घनी एवं शीतल छाया पथिक के श्रम को दूर करती है। इसकी शाखाएँ बहुत दूर-दूर तक फैली रहती हैं। भारत में पाये जाने वाले वृक्षों में यह सब से बड़ा और सब से अधिक समय तक जीवित रहने वाला वृक्ष है। वट की शाखाओं से आकाश-मूल निकलती हैं जो पृथ्वी पर पहुँच कर साधारण जड़ों के रूप में परिणत हो जाती हैं और मोटी होने पर तने के समान प्रतीत होने लगती हैं। प्रधान तने की आयु समाप्त होने पर एवं गलित होने पर ये ही जड़ें नवीन तनों का कार्य करने लगती हैं तथा वृक्ष की आयु में वृद्धि करती हैं। यही कारण है कि वट अक्षय कहलाता है। कलकत्ते के वनस्पति-उद्यान और मदुरा के वट अपने आकार के लिए प्रसिद्ध हैं। कहा जाता है कि मदुरा का वट शेरशाह के समय में भी इसी (वर्तमान) आकार का था। इसकी छाया में एक सहस्र अश्वारोही ठहर सकते हैं।

देहरादून, सहारनपुर और तराई के जंगलों में वट वृक्ष अधिक संख्या में पाये जाते हैं। ग्रामों में मंदिरों के पास तथा सड़कों के किनारे छाया के लिए वट वृक्ष लगाये जाते हैं। इसमें नये पत्ते चैत्र-वैशाख अर्थात् बसंत ऋतु में निकलते हैं। यह वृक्ष सदा फल देता रहता है। इसके फल चिड़ियाँ बहुत खाती हैं और इनके मल में निकलते हुए बीजों में ही जमने की शक्ति होती है। इसके पत्ते बड़े और मोटे होते हैं। ऐसा विश्वास है कि प्रलय काल में भगवान् अक्षय वट के पत्ते पर शयन करते हैं —

कराक विन्देन पदारविन्दं, मुखारविन्दे विनिवेशयन्तम्
वटस्य पत्रस्य पुटे शयानं, बालं मुकुन्दं मनसा स्मरामि ॥

वट वृक्ष में श्वेत एवं गाढ़ा दूध निकलता है जो अनेक रोगों की रामवाण औषधि है। इसकी छाल भी विशेष गुणकारी होने से औषधि निर्माण में व्यवहृत होती है।

हिन्दू-घरानों में वट-अमावस्या को वट-पूजा होती है और इस पवित्र वृक्ष की प्रदक्षिणा भी की जाती है।

पीपल

यह एक ऊँचा और बड़ा वृक्ष है परन्तु वट की भाँति इसका फैलाव नहीं होता। यह समस्त उत्तरी भारत में पाया जाता है। पीपल में भगवान् शंकर का निवास माना गया है, इसीलिए इसे वासुदेव भी कहते हैं।

पीपल विचित्र स्थानों में जमता है, क्योंकि इसके बीज भी चिड़ियों के मल के साथ निकलने पर ही जमते हैं। पीपल के पत्ते चमकदार एवं नुकीले होते हैं, जिसके कारण थोड़ी भी हवा के चलने पर ये हिलने लगते हैं।

हवा बंद होने पर कहा जाता है—

'डोलै न पीपर-पात'

जाड़े में पीपल के पत्ते झड़ जाते हैं और फिर बसन्त में नयी कोंपलें निकलती हैं। ग्रीष्म ऋतु के प्रारंभ में इसके फल पकने लगते हैं।

पीपल की छाल, जड़ और पत्ते औषधि के रूप में व्यवहृत होते है। पीपल पर घंट बाँधे जाते हैं। बकरियाँ इस वृक्ष के पत्तों को बहुत चाव से खाती हैं।

कैंथा

यह एक ऊँचा वृक्ष है जो समस्त भारत में पाया जाता है। इसको बगीचों में भी लगाया जाता है। इसकी शाखाओं में काँटे होते हैं और पत्ते कटे हुए होते हैं। इनके पत्र-दण्ड पर पत्र दलीय झिल्ली भी होती है। पत्तों में एक प्रकार की सुगन्धि व्याप्त रहती है। पुष्प $\frac{१}{२}$ इंच के लाल, धब्बेदार तथा हरित पीत रंग के होते हैं। फल कड़ा होता है, लेकिन उपर के कठोर बल्कल को तोड़ने पर अन्दर गूदा निकलता है, जो कच्चे में कठोर तथा पकने पर नरम और सुगंधित होता है।

यह वृक्ष चैत्र-वैशाख में फूलता है। कार्तिक में इसके फल पकने लगते हैं। वृक्ष पर फल बहुत समय तक लगे रहते हैं। गूदे का अचार तथा चटनी बनती है। यह औषधि में भी काम आता है। प्राकृतिक रूप में यह वृक्ष जंगलों में

पाया जाता है। हिमालय की तराई, शिवालिक पहाड़ तथा उत्तरी अवध के जंगलों में कैथा बहुतायत से होता है। यह जावा में भी पाया जाता है। कैथा की गोंद भी बहुत काम में आती है।

इमली

यह बहुत बड़ा सदा हरित वृक्ष है। इसकी पत्तियाँ अन्तर पत्रों में बँटी हुई होती हैं। घनी एवं छोटी-छोटी अन्तर पत्तियों के कारण यह वृक्ष बड़ा सुहावना लगता है। इमली का पेड़ लगभग ५० हाथ तक ऊँचा होता है। वर्षा के आरम्भ में इसमें फूल आते हैं और शीत में इसके फल पकने लगते हैं। फल स्वाद में खट्टा होता है, जिससे चटनी, अचार तथा अन्य खाद्य वस्तुएँ तैयार की जाती हैं।

यह वृक्ष सम्पूर्ण भारतवर्ष में पाया जाता है और अधिकांश भागों में लोग इसे बगीचों में तथा सड़क के किनारे लगाते हैं। उष्ण जल-वायु इसके लिए विशेष लाभदायक है। इसकी लकड़ी पुष्ट तथा कठोर होती है।

ऐसा कहा जाता है कि इसका मूल निवास स्थान मध्य अफ्रीका है परन्तु भारत-वर्ष में इतने काल से है कि हम इसे भारतीय वृक्ष ही कह सकते हैं।

इमली के फल,बीज, पत्ते, फूल एवं छाल दवा के काम आते हैं। इसके पके फल का रस पाचक होता है।

अमरूद

यह मध्य वर्ग का वृक्ष है। इसकी शाखाएँ चिकनी और चमकदार होती हैं। यह वृक्ष अधिक से अधिक ८-१० हाथ ऊँचा होता है। पत्तियाँ बड़ी और हल्के हरे रंग की होती है शाखाएँ भूमि के पास से ही फूटती हैं। अमरूद भारत के उष्ण भागों में अधिक पाया जाता है। यह दक्षिण अमेरिका का आदिम निवासी है और पोर्तगाल के रहने वाले इसे भारत में लाये थे। अब यह पूर्ण भारतीय होगया है इसके फल दो प्रकार के होते हैं (१) लालगूदे वाले और (२) श्वेत गूदे वाला। पकने पर अच्छी जाति के फल बहुत मीठे होते हैं, किन्तु इनके बीज हानिप्रद होते हैं। इसके फलों से बनी हुई जेली हृदय के लिए पौष्टिक मानी गयी है तथा कोष्ठ काठिन्य निवारक है। अमरूद की छाल, पत्तियाँ, और फल अनेक औषधियों के निर्माण में काम आते हैं।

साधारणतः यह वृक्ष वर्षारंभ में फूलता है और शीतकाल में इसके फल पकते हैं। परन्तु कुछ वृक्ष प्रतिवर्ष दो बार फूलते-फलते हैं--शीतकाल,ग्रीष्मकाल एवं वर्षारंभ।

जामुन

यह भारतवर्ष के सूखे भागों (राजस्थान) को छोड़कर और ऊँचाई पर पहाड़ों को छोड़कर समस्त मैदान वाले स्थानों में पाया जाता है। यह बड़ा वृक्ष होता है। इसमें चैत में फूल आते हैं और अषाढ़ में फल पकने लगते हैं। बसन्त ऋतु में इसके नूतन पल्लव ताम्र रंग के होते हैं और बड़े होने पर हरे रंग के हो जाते हैं। इसके फल पकने पर बहुत स्वादिष्ट होते हैं। स्वास्थ्य के लिए विशेष लाभदायक हैं। इनके रस से सिरका भी बनता है।

जामुन के फल, पत्ते, सूखे बीज एवं छाल औषधि रूप में व्यवहृत होती हैं। सूखे बीज मधुमेह में बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। इसकी शाखाएँ निर्बल होती हैं।

गुलाब

गुलाब कई प्रकार के होते हैं। इसका पौधा छोटा और झंखड़ा होता है, जिसमें बहुत शाखाएँ होती हैं जो कंटकाकीर्ण रहती हैं। गुलाब के पौधे पर सदा फूल फूलते हैं जो अनेक रंगों के होते हैं। भारतीय गुलाब के फूलों में बड़ी ही मधुर एवं मनमोहक सुगंधि रहती है। इनका उत्तम इत्र बनता है। गुलाब-जल अपनी विशेषता रखता है। चक्षुओं की ज्योति को सुरक्षित रखने के लिए गुलाब-जल अधिक उपयोगी सिद्ध हुआ है। उद्यानों में गुलाब लगाया जाता है। इसकी समुचित वृद्धि के लिए खादयुक्त मिट्टी परमावश्यक है। गुलाब की रंगीली सुन्दरता एवं सुमधुर सौरभ के कारण रसिकों ने इसे 'पुष्प-सम्राट्' सम्बोधन से विभूषित किया है।

गुलबांस

यह पौधा छोटा और बहुत फैलने वाला होता है। इसका प्राकृतिक निवास दक्षिणी अमेरिका है परन्तु अब यह भारत के उद्यानों में विशेष रूप से लगाया जाता है। इसके निर्गंध पुष्प लाल, पीले तथा श्वेत होते हैं। गुलाबांस का पौधा वर्षा एवं शीतकाल में पुष्पित होता है। इसको संस्कृत में संध्याराग तथा कृष्णाकली कहते हैं।

चमेली

यह एक फैलने वाला पौधा है जिसकी शाखाएँ पतली और हरी होती हैं। पत्ते छोटी-छोटी पर्णिकाओं में बँटे रहते हैं। पुष्प बहुत सुगंधित और श्वेत होते हैं। पत्तियां औषधि-रूप में अधिक उपयोगी होती हैं। चमेली का पौधा वर्षा ऋतु

में फूलता है जो बगीचों में लगाया जाता है। चमेली पश्चिमी हिमालय पर प्राकृतिक अवस्था में पायी जाती है।

केवड़ा

इसका पौधा दलदल या अधिक पानी वाले स्थान में ८-१० फुट ऊँचा होता है। पत्ते लम्बे और चिकने होते हैं पर इनके किनारों पर छोटे-छोटे काँटे होते हैं। यह ग्रीष्म अथवा वर्षा ऋतु में फूलता है। फूल बहुत सुगन्धित होता है। केवड़े के फूलों में कत्था बसाया जाता है। केवड़े का इत्र भी प्रसिद्ध है जो भोजन को सुगन्धित करने में काम आता है।

गेंदा

उद्यानों में यह सौन्दर्य-वृद्धि के लिए लगाया जाता है। इसकी सुगन्धि भी मधुर होती है। उत्तरी अमेरिका के मेक्सिको प्रान्त में यह प्राकृतिक वातावरण में विशेष मिलता है।

पेड़ों तथा फूलों के आधुनिक वैज्ञानिक नाम

हिन्दी	संस्कृत	वैज्ञानिक नाम
बबूल		Acacia arabica
कदम्ब		Anthocephalus cadamba
नीम	(निम्ब)	Azadirachta indica
पलाश		Butea monosperma
आम	(रसाल)	Mangifera indica
आँवला	(आमलक)	Phyllathus emblica
चम्पा	(चम्पक)	Michelia champaka
अशोक		Jonesia asoka
शीसम	(शिशपा)	Dalbergia latifolia
अमलतास	(सुवर्णक)	Cassia fistula
सेमल	(शाल्मली)	Salmalia malabarica
बड़	(वट)	Ficus bengalenois
पीपल	(अश्वत्थ)	Ficus religiosa
कैंथा	(कपित्थ)	Feronia elephantum

हिन्दी	संस्कृत	वैज्ञानिक नाम
इमली	(इंगुदि)	Tamarindus indica
अमरूद	(बिही)	psidium guyava
जामुन	(जम्बू)	Eugenia jambolana
गुलाब		Rose Dam ascesia
चमेली	(मल्लिका)	Jassinum grandi floram.
गुलाबांस		Misabitis Jalagha
केवड़ा		Pandanus fasciculoris.

शुद्धिपत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१८	१६	Ravindranath	Rabindranath
२३	४	न च्छेतव्या	नच्छेतव्या
२८	४	अनुत्टष	अनुष्टत्
२९	१५	प्राष्युपन्जीनवम्	प्राष्युपजीवनम्
८९	१३	अस्वास्थमेकं पिचमुदमेकं	अश्वत्थमेकं पिचमुंदमेकं
२९	१६	नार्थित:	नार्थिन:
३३	३	भलि	भूलि
३६	८	सन्तन	सन्तत
४७	२३	कदंवाशोक वकुल विल्वा	कदम्बाशोक-बकुल-बिल्वा
५२		मूल मध:	मूलमध:
७१	२	प्राहुर्व्ययम्	प्राहुरव्ययम्
८१	१५	तरुष	तरुषु
	१६	बाल बकुले	बालबकुले
	१७	पारिमलै	परिमलै
८२	९	स्तवकप्रबंध:	स्तबकप्रबंध:
८८	८	भवन्ति नम्रास्तख:	भवन्ति नम्रास्तर व:
	९	र्नवाम्वुभिर्दूर	र्नवाम्बुभिर्दूर
९०	१	उपमेन	उपमेय
९२	६	टेडा	टेढ़ा
९३	८	मलाई	मालई
	१३	भिक्सुसंधेहि	भिक्सुसंघेहि
९४	२	द्यरिणिमुहं	घरिणिमुहं
९६	२	इब	इव
	९	उंबरा	डंबरा

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
	२०	रुचई	रूचई
	२३	णंदषवणे	णंदणवणे
९८	१	नील	णील
	९	नंदण	णंदण
	१६	नाम नारंग न गोह	णाम णारंग णगोह
	१८	नहु	णहु
१३१	९	विश्वम्	शिवम्
१६५	पद्य		
	२	झपरा	झपरा हो
	४	फला	फूला

सहायक साहित्य

१ Flowering trees and Shrubs in India—*D. V.Cowen*
२ Beautifying India—*M. S. Randhawa*
३ The flowering plants of Western India—*A. K. Narine*
४ Plants of the Punjab—*C. J. Bamber*
५ Forest Flora—*D. N. Kanjilal*
६ Trees of India—*Mecann*
७ Marvels of Plant Life—*F. Fiteh Daglish*
८ Wild flowers of the Ceylon Hills—*Thomas E. T. Bond*
९ Rock Gardens—*A. Edwards*
१० Plants and Environments *R. F. Danbennue*
११ Journal of the Bombay Natural History Society
१२ Golden Bough—Sir James George Fraser
१३ The March of India
१४ World Festival of Trees
१५ Epics, Myths and Legends of India—*P. Thomas*
१६ Songs of the Forests—*Elvin*
१७ Folk literature of Bengal—*D. C. Sen*
१८ Some Beautiful Indian trees
१९ ऋग्वेद-संहिता—पं० रामगोविन्द त्रिवेदी
२० सामवेद-संहिता— ,,
२१ अथर्ववेद-संहिता— ,,
२२ यजुर्वेद संहिता— ,,
२३ श्रीमद्भागवत
२४ श्रीमद्भगवद्गीता
२५ कुरानशरीफ़
२६ वाराह पुराण
२७ अग्नि पुराण

२८ नारद पुराण
२९ विष्णु पुराण
३० गरुड़ पुराण
३१ तुलसीदास-ग्रन्थावली भाग १, २, ३,
३२ गीतगोविन्द
३३ भामिनी-विलास
३४ धम्मपद
३५ सुभाषित-रत्न-भाण्डागार
३६ कबीर-ग्रन्थावली
३७ जायसी-ग्रन्थावली
३८ बिहारी-सतसई
३९ रीतिकालीन कविता एवं शृंगार रस का विवेचन—डा० चतुर्वेदी
४० मिश्रबन्धु--विनोद
४१ यशोधरा—डॉ० गुप्त
४२ श्रीमद्वाल्मीकि रामायण
४३ कृष्णायन—द्वारकाप्रसाद मिश्र
४४ प्रियप्रवास—हरिऔध
४५ प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद—आचार्य द्विवेदी
४६ हिन्दी-साहित्य की भूमिका—आचार्य द्विवेदी
४७ आह्निक सूत्रावली
४८ वृहत्पाराशरी
४९ शुक्रनीति
५० मनुस्मृति
५१ संस्कृत-कवि-दर्शन—डॉ० भोलाशंकर व्यास
५२ वैदिक साहित्य
५३ कुमारसम्भव—कालिदास
५४ रघुवंश—कालिदास
५५ संस्कृत-कवि-चर्चा
५६ छितवन की छाँह—पं० विद्यानिवास मिश्र
५७ कल्पतरु

५८ भोजप्रबन्ध
५९ वैराग्य-शतक—भर्तृहरि
६० नीति-शतक— ,,
६१ सुदंसण चरिउ—महाकवि नयनन्दि
६२ पउम चरिउ—महाकवि स्वयम्भू
६३ रामचन्द्रिका—आचार्य केशवदास
६४ नूरजहाँ—ठा० गुरुभक्त सिंह
६५ अंगराज—आनन्दकुमार
६६ जातक कथाएँ—चन्द्रिका प्रसाद
६७ महादेवी वर्मा—शचीरानी गुर्टू
६८ अन्योक्ति कल्पद्रुम—दीनदयाल गिरि
६९ मिलन यामिनी—बच्चन
७० सन्त काव्य—पं० परशुराम चतुर्वेदी
७१ प्रगतिवाद—शिवदान सिंह
७२ आधुनिक हिन्दी-कविता में प्रकृति-चित्रण—श्री तरुण
७३ दीवाने नासिख
७४ नजीर की बानी
७५ हमारी शायरी—नारायण प्रसाद जैन
७६ शेर ओ शायरी—श्री गोयलीय
७७ शेर ओ सुख़न ,,
७८ भाव प्रकाश
७९ वृक्ष-विज्ञान
८० हारीतक्यादि निघंटु
८१ बुन्देली लोक-गीत—उमाशंकर शुक्ल
८२ बघेली लोक-गीत—भगवती प्रसाद शुक्ल
८३ मालवी लोकगीत—डा० श्याम परमार
८४ कविता-कौमुदी—भाग-३—रामनरेश त्रिपाठी
८५ भोजपुरी लोक-गीत—डॉ० कृष्णदेव उपाध्याय
८६ व्रजलोक साहित्य का अध्ययन—डा० सत्येन्द्र
८७ आदिवासियों के लोक-गीत—श्रीचन्द्र जैन

८८ विन्ध्य प्रदेश के लोक-गीत—श्री चन्द्र जैन
८९ कोइलिया बोली रे— ,,
९० भुँइयाँ परे हैं लाल— ,,
९१ ईसुरी की फागें—भाग-१-२-३-४—कृष्णानन्द गुप्त
९२ रीति-श्रृंगार—डा० नगेन्द्र
९३ हिन्दी-रीति-साहित्य—भगीरथ मिश्र
९४ बाजत आवे ढोल—देवेन्द्र सत्यार्थी
९५ निमाड़ी लोक-गीत—रामनारायण उपाध्याय
९६ बाघेली लोक-गीत—उरगेश
९७ बाँसरी बज रही—जगदीश त्रिगुणायत
९८ राजस्थानी भीलों के लोक गीत—फूल जी भाई
९९ राजस्थान के ग्रामगीत—रामसिंह
१०० धूलि-धूसरित मणियाँ—सीता, दमयन्ती
१०१ लोक-साहित्य की भूमिका—डॉ० कृष्णदेव
१०२ भारतीय लोक-साहित्य—डॉ० श्याम परमार
१०३ रामचरित मानस में लोक वार्त्ता—चन्द्रभान
१०४ घेरि घेरि आवै रे बदरिया—श्रीचन्द्र जैन
१०५ अमवा की छैयाँ— ,,
१०६ मोरी धरती मैया— ,,
१०७ बुन्देली लोक-साहित्य—श्रीचन्द्र जैन
१०८ मध्य प्रदेश के लोक-गीत—श्रीचन्द्र जैन
आदि, आदि,